



MAED 601 Semester III

निर्देशन एवं परामर्श

Guidance and Counselling



शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

<b>अध्ययन बोर्ड</b>			
प्रोफेसर जे0के0 जोशी निदेशक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड	प्रोफेसर एन0 एन0 पाण्डेय(सदस्य) शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तरप्रदेश	प्रोफेसर गिरिजेश कुमार (सदस्य) शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तरप्रदेश	प्रोफेसर रोमेश वर्मा(सदस्य) शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड
डॉ0 दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 रजनी रंजन सिंह सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 प्रवीण कुमार तिवारी सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ0 कल्पना पांडे लखेड़ा सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्रीमती मनीषा पंत परमर्शदाता उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्री सिद्धार्थ पोखरियाल संविदा शिक्षक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	
<b>प्रोग्राम कोर्डिनेटर एवं संपादक</b>		<b>इकाई संयोजक</b>	
डॉ दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड		डॉ दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड	
<b>इकाई लेखन</b>	<b>इकाई संख्या</b>	<b>इकाई लेखन</b>	<b>इकाई संख्या</b>
डॉ० एस0 पी0 अरोड़ा अशोसिएट प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग, बरेली कॉलेज बरेली	1, 2, 3, 4.	डॉ० सोम सिंह सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय काशी हिंदु विश्वविद्यालय, वाराणसी	5, 9, 10.
श्री विवेक नाथ त्रिपाठी सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला	6	डॉ0 हरीश कुमार सहायक प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार	7
श्री आशीष कुमार सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड	8		

ISBN-13 -978-93-84632-48-9

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए सम्बंधित लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कापीराइट: उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय प्रकाशन वर्ष: जुलाई 2012 पुनः प्रकाशन -2022

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139, (नैनीताल)

**निर्देशन एवं परामर्श**  
**Guidance and Counselling**  
**MAED-601 Semester III**

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
1	निर्देशन:- अर्थ , सिद्धांत , अवधारणा , समस्याएँ एवं विषय क्षेत्र Guidance: Concept, Principles, assumptions, issues and problems, need, scope and significance of guidance	1-19
2	निर्देशन के प्रकार शैक्षिक ;, व्यवसायिक एवं व्यक्तिगत, समूह निर्देशन Types of Guidance- Educational, Vocational and Personal, Group Guidance	20- 41
3	निर्देशन में शिक्षक की भूमिका एवं निर्देशन तथा पाठ्यक्रम Role of Teacher in Guidance & Guidance and Curriculum	42- 60
4	निर्देशन के अभिकरण- राष्ट्रीय स्तर, राज्य स्तर Agencies of guidance- National level, State level	61- 73
5	विशिष्ट बालकों की समस्याएँ एवं आवश्यकताएँ, विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों की सहायता में शिक्षक की भूमिका, प्रतिभाशाली एवं सृजनात्मक बालकों का निर्देशन Problems and Needs, Role of Teacher in helping Children with Special needs, Guidance of the Gifted and Creative	74- 87
6	समूह निर्देशन- अर्थ, प्रत्यय, परिभाषा, सिद्धान्त, समूह निर्देशन प्रक्रिया एवं तकनीकी Group Guidance: Concept, Principles, Procedure and Techniques of Group Guidance	88-108
7	परामर्श की प्रक्रिया: अवधारणा, परामर्श के सिद्धान्त, परामर्श उपागम निर्देशीय : अनिर्देशीय एवं समन्वित Counselling Process: Concept, Principles of Counselling, Counselling Approaches- Directive, Non-directive and Eclectic.	109-131
08	समूह परामर्श बनाम व्यक्तिगत परामर्श, एक अच्छे परामर्श की विशेषताएँ, समायोजन हेतु परामर्श Group Counselling Vs Individual Counselling, Counselling for Adjustment, Characteristics of Good Counselling	132-160
09	शिक्षा के विभिन्न स्तर पर सूचना, यथास्थिति परिचायक, स्थानन एवं अनुवर्तन सेवाएँ तथा निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन Information Orientation Services, Placement Service and follow up Service at different levels of Education, Evaluation of Guidance Programme	161-178
10	अच्छे परामर्शदाता के गुण, भूमिका तथा जिम्मेदारियाँ Qualities of a Good Counselor, Role and Responsibilities.	179-193

---

**इकाई 1 निर्देशन : - अर्थ, सिद्धान्त, अवधारणा, एवं विषय क्षेत्र**


---

- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 उद्देश्य
- 1.3 निर्देशन का अर्थ
- 1.4 निर्देशन की परिभाषा
- 1.5 निर्देशन के सिद्धान्त
- 1.6 निर्देशन की अवधारणा
- 1.7 निर्देशन के विचारणीय विषय एवं समस्याएँ
- 1.8 निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व
- 1.9 निर्देशन का विषय क्षेत्र
- 1.10 निर्देशन की उपयोगिता
- 1.11 सारांश
- 1.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 1.13 संदर्भ ग्रंथ
- 1.14 निबंधात्मक प्रश्न

---

**1.1 प्रस्तावना**


---

मनुष्य के भीतर एक ऐसी क्षमता विद्यमान है जिससे वह दूसरों से परामर्श एवं निर्देशन ले सकता है और दूसरों को परामर्श एवं निर्देशन प्रदान कर सकता है। वह अपने सामान्य एवं संकट के क्षणों में एक-दूसरे की मदद करने के लिए अपेक्षित निर्देशन देता है जिससे उसकी वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवनधारा निर्वाध रूप से चलती रहती है। निर्देशन अर्थात् दिशा दिखाने की प्रवृत्ति हर सामाजिक व्यवस्था में किसी न किसी रूप में कार्यशील रही है। इसका वर्तमान स्वरूप 20वीं शताब्दी की देन है।

वैसे तो निर्देशन का अर्थ बताने के लिए भिन्न-भिन्न मत देखने को मिलते हैं फिर भी निर्देशन को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि निर्देशन एक ऐसी क्रिया है जिसमें कुछ विशेष प्रकार के निर्देशन कर्मियों के माध्यम से व्यक्ति को उसकी समस्या तथा विकल्प बिन्दुओं से निपटने में अपेक्षित राय एवं सहायता प्रदान की जाती है। निर्देशन एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति को अपने आप को समझ पाने अपनी योग्यताओं तथा सीमाओं के अन्तर्निहित समर्थ्य को समझने एवं उसी स्तर के कार्य-कलापों को करने में सक्षम बनाता है। निर्देशन प्रत्येक अवस्था की समस्याओं के समाधान में सहायक सिद्ध होने के अतिरिक्त आगामी समस्याओं की पूर्व तैयारी में भी विशेष

सहायक होता है। निर्देशन किसी व्यक्ति की आयु या अवस्था से बँधा हुआ नहीं होता है। यह जीवन पर्यन्त विद्यमान रहने वाली आवश्यकता है। निर्देशन बच्चों, किशोर, प्रौढ़ों एवं वृद्धों सभी के लिए महत्वपूर्ण होता है। निर्देशन की प्रक्रिया के अन्तर्गत निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति में निहित विशेषता को तथा शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक क्षेत्र से सम्बन्धित जानकारी का समन्वित अध्ययन आवश्यक है। कुछ विद्वान् निर्देशन और शिक्षा दोनों को ही एक दूसरे के पूरक मानते हैं।

निर्देशन का महत्व मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होता है। शिक्षा, व्यक्तिगत समस्याएँ, व्यावसायिक, स्वास्थ्य, विकास की प्रक्रिया एवं चिकित्सा के ये विभिन्न क्षेत्र हैं, इन सभी क्षेत्रों में निर्देशन की विशेष आवश्यकता होती है।

निर्देशन का व्यक्ति के जीवन में महत्व अत्यधिक बढ़ता जा रहा है। जैसा ऊपर वर्णन किया जा चुका है कि जीवन के अनेक क्षेत्रों में आज इसकी उपयोगिता बढ़ गयी है। चाहे व्यवसाय का क्षेत्र हो या सामाजिक क्षेत्र, व्यक्तिगत समास्याओं के समाधान में भी निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

## 1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

1. निर्देशन का अर्थ जान सकेंगे।
2. निर्देशन को परिभाषित कर सकेंगे।
3. निर्देशन के विभिन्न सिद्धान्तों से अवगत हो सकेंगे।
4. निर्देशन की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
5. जान सकेंगे कि भारत वर्ष में निर्देशन सेवाओं के क्षेत्र में कौन-कौन सी समस्याएँ हैं।
6. निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व से परिचित हो सकेंगे।
7. जान सकेंगे कि हमारे जीवन में निर्देशन कार्य की क्या उपयोगिता है।

## 1.3 निर्देशन का अर्थ Meaning of Guidance

मानव इस संसार में ईश्वर की श्रेष्ठतम् कृति है क्योंकि उसके पास भाषा, बुद्धि, विवेक आदि अनेक गुण हैं। लेकिन वह अपना विकास केवल अपनी बुद्धि और विवेक द्वारा ही नहीं कर सकता। इसके लिए उसे दूसरों की सहायता लेनी पड़ती है। जब मानव विकास पथ पर अग्रसर होने के लिए दूसरे के अनुभव, बुद्धि और विवेक का सहारा लेता है तो दूसरे व्यक्ति के द्वारा इस प्रकार की गयी सहायता निर्देशन कहलाती है। निर्देशन अमूर्त संकल्पना है। निर्देशन वस्तुतः पथ प्रदर्शन है। जैसे कोई व्यक्ति चौराहे पर खड़ा है; वह चलना जानता है तथा यह भी जानता है कि इन चारों रास्तों में से कोई एक रास्ता उसके गन्तव्य तक जाता है। लेकिन; कौन सा, वह यह नहीं जानता; तब किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसे गन्तव्य का रास्ता बताना निर्देशन है। वस्तुतः; निर्देशन प्रक्रिया में निर्देशक किसी व्यक्ति के अन्दर ज्ञान का विकास नहीं करता अपितु उस व्यक्ति के अन्दर पहले से उपस्थित ज्ञान को एक सही मार्गदर्शन देकर उसे उसके लक्ष्य तक पहुंचाता है।

बिना निर्देशन के कोई भी समाज चल ही नहीं सकता। मानव जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी न किसी से निर्देशन प्राप्त करता ही रहता है। बाल्यकाल में ही माँ द्वारा बच्चे को उसका हाथ पकड़कर चलना सिखाना, बड़े होने पर उसे नैतिक कहानियाँ सुनाना तथा उसी के द्वारा अपने जीवन की दिशा निर्धारित करने के लिए प्रेरित करना भी तो एक प्रकार का निर्देशन ही है।

#### 1.4 निर्देशन की परिभाषाएं Definitions of Guidance

निर्देशन के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम विभिन्न विद्वानों के द्वारा दी गयी परिभाषाओं का अध्ययन करेंगे-

**चाइशोम के अनुसार** “निर्देशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति में निहित सजीव तथा क्रियात्मक शक्तियों का विकास करना है; जिसकी सहायता से वह जीवन की समस्याओं को सुगमता तथा सरलतापूर्वक जीवन पर्यन्त हल करने योग्य बनाता है”

**एमरी स्ट्रूप्स के अनुसार-** “निर्देशन सहायता प्रदान करने की एक ऐसी प्रवाहित क्रिया है जो व्यक्तिगत या सामाजिक दृष्टि से हितकारी क्षमताओं का विकास अधिकतम रूप से व्यक्ति में करती है”

**डेविड वी० टिडमैन –** “निर्देशन का लक्ष्य लोगों को उद्देश्यपूर्ण बनने में न कि केवल उद्देश्यपूर्ण क्रिया में सहायता देना है”

स्ट्रूप्स तथा वालक्विस्ट ने सभी परिभाषाओं का सार इस प्रकार प्रस्तुत किया है - “निर्देशन व्यक्ति के अपने लिए तथा समाज के लिए अधिकतम लाभदायक दिशा में उसकी सम्भावित अधिकतम क्षमता तक विकास में सहायता प्रदान करने वाला एवं निरन्तर चलने वाला प्रक्रम है”

**गुड के अनुसार -** निर्देशन व्यक्ति के दृष्टिकोणों एवं उसके बाद के व्यवहार को प्रभावित करने के उद्देश्य से स्थापित गतिशील आपसी सम्बन्धों का एक प्रक्रम है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम निर्देशन की एक सर्वमान्य परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं।

“निर्देशन वह प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति अपनी बौद्धिक क्षमताओं का प्रयोग करते हुए दूसरे व्यक्ति को उस उन्नत पथ पर अग्रसर करता है जिसकी क्षमता उसमें पहले से ही विद्यमान है। किन्तु, वह स्वविवेक से अपनी क्षमता को सही दिशा देने में असमर्थ है”

केवल मानव ही नहीं अपितु जीव जगत के समस्त पशु पक्षी और कीट पतंगे अपने अग्रजों के दिशा निर्देशन में काम करते हैं। निर्देशन को परिभाषित करते समय हमारे समक्ष जीव जगत की अनेक गतिविधियाँ चलचित्र की भांति घूम जाती है और हम जीवन के प्रत्येक कदम पर निर्देशन की प्रक्रिया को घटित होते हुए देखते हैं। झुंड के बीच में सुरक्षित घूमता हुआ हाथी का छोटा सा बच्चा जो अनायास ही अपने परिवार के साथ नदी की तेज धारा में उतर जाता है वह अपने पूर्वजों के निर्देशन और सहायता के परिणामस्वरूप ही इस गुरुतर कार्य को सम्पन्न कर पाता है। यदि आपने आस-पास किसी चिड़िया के बच्चे को घोंसले से गिरते हुए देखा हो जिसके पंख अभी-अभी निकले

हैं तो यह निर्देशन की ही प्रक्रिया का आरम्भ है। चिड़िया का वह बच्चा अपने घोंसले से अनायास नहीं गिरा है बल्कि उड़ने का प्रशिक्षण देने के लिए चिड़िया मां ने उसे सप्रयास गिराया है। प्रशिक्षण की इस प्रक्रिया में निर्देशन सम्मिलित है।

यह (निर्देशन) किसी भटके हुए राही को रास्ता दिखाने जैसा है। मान लीजिए आप किसी अपरिचित नगर में अपने मित्र के घर जाने के लिए अनजान सड़क पर खड़े हैं। वहां से पूछते-पूछते आप अपेक्षित गली के अन्तिम चौराहे पर पहुंच जाते हैं और यहाँ पर आप अपने मित्र का घर नहीं ढूँढ पा रहे हैं, तभी सामने से आ रहे एक व्यक्ति से आप अपने मित्र राघवेन्द्र का नाम बताकर उसका आवास पूछते हैं और वह संकेत द्वारा आपको आपके मित्र राघवेन्द्र के आवास की वास्तविक स्थिति से अवगत कराता है। आप अपने गन्तव्य तक जिस सहयोग की प्रक्रिया से गुजरे वह प्रक्रिया निर्देशन है।

### 1.5 निर्देशन के सिद्धान्त Principles of Guidance

निर्देशन की प्रक्रिया बहुत महत्व पूर्ण प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया गलत दिशा में जाने की स्थिति में किसी भी व्यक्ति का जीवन नष्ट कर सकती है। विविधताओं वाले भारत देश में यँ तो कोई भी व्यक्ति स्वयं को निर्देशन कार्य के योग्य समझता है। आप सामने बैठे व्यक्ति को जैसे ही अपनी समस्या बताते हैं आपको निर्देशन प्राप्त होना प्रारम्भ हो जाता है। किन्तु बिना सोच विचार के दिया गया निर्देशन कितना घातक हो सकता है इसकी कल्पना भी भयावह है। अतः निर्देशन की प्रक्रिया को आरम्भ करने से पूर्व हमें इसके सिद्धान्त समझने होंगे।

निर्देशन की प्रक्रिया हेतु भारत सहित विश्व के अनेक देशों में शोध होते रहते हैं। क्रो एण्ड क्रो, टसेल, जोन्स आदि विद्वानों द्वारा बताए गए निर्देशन के सिद्धान्तों को तो व्यापक मान्यता भी मिली है।

यहाँ हम भारतीय परिवेश में निर्देशन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए निर्देशन के कतिपय महत्व पूर्ण सिद्धान्त निर्धारित करेंगे। इनमें से अनेक सिद्धान्त पश्चिमी विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से मिलते जुलते भी हो सकते हैं।

अनेक विद्वानों द्वारा प्रतिपादित निर्देशन के सिद्धान्तों का अध्ययन करने के बाद लेखक' इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि भारतीय परिवेश में निर्देशन के अग्रान्त सिद्धान्त हो सकते हैं -

1. **ज्ञान का सिद्धान्त (Principle of Knowledge)** -निर्देशक चाहे कोई भी हो किन्तु उसे निर्देशन कार्य आरम्भ करने से पूर्व निर्देशन प्रक्रिया का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए ज्ञान के अभाव में निर्देशक गलत निर्देशन दे बैठता है जिसका परिणाम कभी-कभी बहुत भयंकर भी हो सकता है।
2. **सार्वभौमिकता का सिद्धान्त (Principle of Universalization)**-निर्देशन प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व निर्देशक को यह जान लेना चाहिए कि यह प्रक्रिया सार्वभौमिक है। अर्थात् निर्देशन की प्रक्रिया सदैव एवं सर्वत्र चलती रहती है। आजीवन चलने वाली इस

प्रक्रिया को कोई भी व्यक्ति (धर्म, जाति, आयु, लिंग, एवं स्वभाव आदि का विभेद किये बिना) प्राप्त कर सकता है। केवल कुसमायोजित या अपसमायोजित व्यक्ति ही नहीं।

3. **निरन्तरता का सिद्धान्त (Principle of Continuity)**-किसी समस्या विशेष के समाधान के लिए एक बार निर्देशन दे देने भर से निर्देशक का कार्य समाप्त नहीं हो जाता। उपबोध्य (निर्देशन प्राप्त करने वाला) को समस्या के समाधान के लिए जिन परिस्थितियों में निर्देशन प्राप्त हुआ था, बहुत संभव है कि भविष्य में उसे नवीन परिस्थितियों का सामना करना पड़े और पुनः निर्देशक की आवश्यकता पड़े। इतना ही नहीं नवीन क्षेत्र में भी उपबोध्य को निर्देशन की बार-बार आवश्यकता अनुभव होती है अतः यहाँ हम यह कह सकते हैं कि निर्देशन की प्रक्रिया निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
4. **सामाजिकता का सिद्धान्त (Principle of Sociality)**-निर्देशन कार्य महत्त्व पूर्ण और कठिन कार्य है। यह कार्य करते समय निर्देशक को ध्यान रखना चाहिए कि निर्देशन का प्रभाव केवल प्राप्तकर्ता पर नहीं पड़ता; अपितु इस प्रक्रिया के परिणामों को पूरा समाज भोगता है। चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः उस पर समाज की तथा समाज पर उसकी गतिविधियों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अतः निर्देशक को केवल उन्हीं कार्यों के लिए निर्देशन देना चाहिए जो व्यक्ति की क्षमताओं में विकास करने के साथ-साथ समाज के उत्थान में भी सहायक हों। दूसरे शब्दों में समाज के लिए घातक कार्यों का निर्देशन नहीं किया जाना चाहिए।
5. **नैतिकता का सिद्धान्त (Principle of Morality)**- निर्देशन कार्य करते समय सामाजिकता के साथ निर्देशक को नैतिकता का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए। समाज में अनेक कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें सामाजिक होते हुए भी नैतिक नहीं कहा जा सकता। अतः निर्देशक को निर्देशन प्रक्रिया में नैतिकता का पुट अवश्य ही बना कर रखना चाहिए।
6. **विश्लेषण का सिद्धान्त (Principle of Analysis)**- निर्देशन कार्य करने से पूर्व निर्देशक को परिस्थितियों और समस्या का सम्पूर्ण विश्लेषण कर लेना चाहिए। अनेक बार ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं जिसमें निर्देशक को उपबोध्य के द्वारा उन परिस्थितियों और व्यवहारों का वास्तविक ज्ञान नहीं कराया जाता जिनके लिए उसे निर्देशन की आवश्यकता है। परिस्थितियों और व्यवहारों के विश्लेषण द्वारा ही निर्देशक वास्तविक स्थितियों का सही आकलन कर सकता है।
7. **वैज्ञानिकता का सिद्धान्त (Principle of Scientific Method)**-निर्देशन कार्य से पूर्व परिस्थितियों और गतिविधियों का विश्लेषण करने के लिए निर्देशक को आंकड़ों का एकत्रीकरण करने से लेकर मूल्यांकन, साक्षात्कार तक वैज्ञानिक प्रक्रिया को ही अपनाना चाहिए; अन्यथा विश्लेषण के परिणामों में भारी अन्तर आ सकता है।
8. **सकारात्मकता का सिद्धान्त (Principle of Positivity)**- निर्देशक परिस्थिति विशेष में उपबोध्य का भगवान होता है। कभी-कभी वह समाज और परिस्थितियों से इतना प्रताड़ित

हो चुका होता है कि उसकी सोचने समझने की क्षमता कुंठित हो जाती है। इन स्थितियों में वह अपने निर्देशक की कोई भी बात बिना सोच विचार के मानने को तैयार होता है। अतः निर्देशक का यह दायित्व बनता है कि वह अपने उपबोध्य को सदैव सकारात्मक निर्देशन ही दे और समाज में उसके समायोजन का प्रयास करे न कि अपसमायोजन का।

9. **आत्मनिर्भरता का सिद्धान्त (Principle of Self Dependence)**- निर्देशन कार्य करते समय निर्देशक को यह प्रयास करना चाहिए कि उसका उपबोध्य निर्देशक पर कम से कम निर्भर रहे। इसके लिए निर्देशक को अपने उपबोध्य में ज्ञान एवं विवेक दोनों का विकास करना होगा साथ ही साथ उसके आत्मविश्वास को भी बढ़ाना होगा।
10. **स्वतंत्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom)**-निर्देशक कभी-कभी उपबोध्य पर अपने निर्णय थोपने लगता है तथा उसके निर्णय न माने जाने की दशा में वह उपबोध्य के प्रति अन्यायमान हो जाता है। किन्तु, अच्छे निर्देशक का कार्य अपने उपबोध्य को केवल सर्वश्रेष्ठ निर्देशन देना है; उस पर अपने निर्णय थोपना नहीं। अतः निर्देशन प्राप्त करने के पश्चात उसको पूरी तरह मानने, आंशिक रूप से मानने, या न मानने की स्वतन्त्रता उपबोध्य के पास होनी चाहिए।
11. **लचीलेपन का सिद्धान्त (Principle of Flexibility)**-निर्देशन कार्य में निर्देशक को सदैव लचीला रूख अपनाना चाहिए। चूंकि निर्देशन एक सामाजिक प्रक्रिया है और समाज की परिस्थितियाँ निरन्तर बदलती रहती हैं अतः निर्देशक को किसी भी प्रकार से एक ही निष्कर्ष पर न रूककर सदैव लचीलेपन के सिद्धान्त का पालन करना चाहिए।
12. **व्यक्तिगत महत्त्व एवं समानता का सिद्धान्त (Principle of Individual Importance & Equality)** निर्देशक के लिए प्रत्येक व्यक्ति समान रूप से महत्त्व पूर्ण है चाहे वह अपसमायोजित या कुसमायोजित अथवा सामान्य व्यक्ति हो निर्देशन कार्य के लिए इस आधार पर उपबोध्य में अन्तर करना उचित नहीं है। उसे प्रत्येक व्यक्ति को समान और सम्पूर्ण महत्त्व देना चाहिए।
13. **व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त (Principle of Individual Difference)**- प्रत्येक व्यक्ति किसी भी दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है अतः वह अनिवार्य नहीं है कि एक व्यक्ति को दिया गया निर्देशन दूसरे व्यक्ति के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध हो। निर्देशक को चाहिए कि वह व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त ध्यान में रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग से निर्देशन कार्य की व्यवस्था करे।
14. **सम्पूर्ण विकास का सिद्धान्त (Principle of Wholesome Development)**- निर्देशक का दायित्व उपबोध्य की समस्या विशेष का समाधान करना ही नहीं है अपितु उसे उपबोध्य के सम्पूर्ण विकास पर ध्यान देना चाहिए। वास्तव में व्यक्ति की समस्याएं परस्पर अन्तर्सम्बन्धित होती हैं। इसलिए भी निर्देशक को उपबोध्य के समग्र विकास पर ध्यान देना चाहिए।

15. **समन्वय का सिद्धान्त (Principle of Co-ordination)** -सामाजिक जटिलताओं एवं भौतिक आवश्यकताओं के बढ़ते हुए भार ने वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति को त्रस्त कर रखा है, अतः सामाजिक कुसमायोजन निरन्तर बढ़ता जा रहा है जिसके कारण एक ही व्यक्ति को अनेक निर्देशकों से निर्देशन प्राप्त करने की आवश्यकता अनुभव होती है। ऐसी परिस्थितियों में निर्देशकों को परस्पर समन्वय स्थापित कर लेना चाहिए एवं यदि सम्भव हो तो उसमें वरिष्ठ एवं अनुभवी व्यक्ति को महत्त्व देना चाहिए।
16. **निरपेक्षता का सिद्धान्त (Principle of Objectivity)**- निर्देशक किसी भी व्यक्ति के जीवन को नयी राह दिखाने वाला होता है अतः उसे सदैव निरपेक्ष रहकर निर्देशन करना चाहिए। निर्देशक को अपनी अभिरूचियों, क्षमताओं, विश्वासों तथा पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर उपबोध्य का पथ प्रदर्शन करना चाहिए। उसके अन्दर इतनी समझ होनी चाहिए कि वह उपबोध्य की परिस्थितियों, उसकी रूचियों, क्षमताओं तथा सीमाओं को ध्यान में रखकर उसे संभावित सर्वोत्तम पथ प्रदर्शन दे सके। यदि वह निरपेक्ष नहीं रहेगा तो वह अपने निर्णयों को दूसरे पर आरोपित करेगा जिससे वह अपने दायित्व मार्ग से पूर्णतः भटक जायेगा।
17. **गोपनीयता का सिद्धान्त (Principle of Confidentialness)** -निर्देशक को निरपेक्ष होने के साथ-साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह उपबोध्य की किसी भी गोपनीय सूचना को अन्यत्र अभिव्यक्त न करे उपबोध्य की व्यक्तिगत सूचनाओं में कोई रूचि न होने पर भी उसे उन सब सूचनाओं को स्वयं तक ही सीमित रखना चाहिए। क्योंकि यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो अपने साथ-साथ दूसरे निर्देशकों के लिए भी विश्वसनीयता की समस्या खड़ी कर देगा।
18. **समय प्रबन्धन का सिद्धान्त (Principle of Time Management)** -उपबोध्य की समस्याएं अनेक प्रकार की होती हैं। अनेक समस्याएं ऐसी भी होती हैं जिनके लिए यदि उचित समय पर निर्देशन न मिले तो वे समस्याएं गम्भीर रूप धारण कर सकती हैं। अतः निर्देशक को समस्या के विश्लेषण आदि में अधिक समय नष्ट नहीं करना चाहिए तथा उसे यथासम्भव शीघ्रतापूर्वक निर्देशन प्रदान करना चाहिए।
19. **विशिष्टता का सिद्धान्त (Principle of Specialization)**- विविधताओं से भरे इस समाज में समस्याएं भी विविध प्रकार की हैं। अतः कोई एक निर्देशक सभी प्रकार की समस्याओं के समाधान हेतु निर्देशन कार्य कर सके यह कदापि सम्भव नहीं है। अतः निर्देशक को भी विशिष्ट होना होगा। कार्य विशेष के लिए जैसे शैक्षिक कार्य, व्यावसायिक कार्य, व्यक्तिगत कार्य, आयु विशेष के लिए जैसे बालक, किशोर, युवा, वृद्ध आदि एवं व्यक्ति विशेष के लिए जैसे सामान्य, विशिष्ट आदि अलग-अलग निर्देशकों की आवश्यकता होती है।

20. **प्रशिक्षण का सिद्धान्त (Principle of Training)**- यदि हमने निर्देशन के उपरोक्त सिद्धान्तों का गम्भीरता पूर्वक मनन किया तो हम पायेंगे कि बिना प्रशिक्षण प्राप्त किये निर्देशन कार्य कठिन ही नहीं अपितु असम्भव है। अतः अपने कार्य में निपुणता (Perfection) के लिए प्रत्येक निर्देशक को भली भांति प्रशिक्षित होना चाहिए।

### अभ्यास प्रश्न

1. \_\_\_\_\_ निर्देशन व्यक्ति के दृष्टिकोणों एवं उसके बाद के व्यवहार को प्रभावित करने के उद्देश्य से स्थापित गतिशील आपसी सम्बन्धों का एक प्रक्रम है।
2. निर्देशन के किन्हीं पाँच सिद्धान्तों के नाम को लिखिए।

### 1.6 निर्देशन की अवधारणा Assumption of Guidance

संसार की श्रेष्ठतम् कृति मानव है। भाषा, बुद्धि और विवेक जैसे गुणों से सम्पन्न मानव जब विकास पथ पर आगे बढ़ता है तो उसे निर्देशन की आवश्यकता होती है। निर्देशन का लक्ष्य लोगों को उद्देश्य पूर्ण बनाना है। यह किसी भटके हुए राही को रास्ता दिखाने जैसा है। निर्देशन की इस प्रक्रिया को उपयोगी बनाये रखने के लिए हमने पिछले पृष्ठों में इसके सिद्धान्तों का अध्ययन किया है अब हम निर्देशन की अवधारणाओं के विषय में चर्चा करेंगे।

विभिन्न भारतीय एवं पश्चिमी विद्वानों ने अपने-अपने मत के अनुसार निर्देशन की अवधारणायें निर्धारित की हैं यहां लेखक के मतानुसार निर्देशन की महत्त्व पूर्ण अवधारणाएं निम्नवत हैं -

1. मानव समाज में प्रत्येक व्यक्ति को निर्देशन की आवश्यकता होती है।
2. निर्देशन की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है।
3. निर्देशन अधिगम (Learning) में सहायक होता है।
4. निर्देशन व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।
5. निर्देशन का कार्य उपबोध (Learner) की क्षमताओं का विकास करना है।
6. निर्देशन उपबोध की उपलब्धि और प्रगति को बढ़ाता है।

### 1.7 निर्देशन के विचारणीय विषय एवं समस्याएं Issues and Problems of Guidance

1. **जागरूकता की कमी (Lack of Awareness)**- भारतीय समाज विश्व का सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्क रखने के बाद भी अपने भोलेपन और जागरूकता के अभाव के कारण सैकड़ों वर्ष छोटे-छोटे देशों का गुलाम रहा और जागरूकता का यही अभाव उसे आज भी विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा पिछड़ा बनाये हुए है। यह बात निर्देशन के क्षेत्र में अक्षरशः सत्य है। पीछे के पृष्ठों में हम यह बात भली भांति समझ चुके हैं कि उचित निर्देशन के बिना व्यक्ति

अपने जीवन में क्षमताओं का अपेक्षित विकास नहीं कर सकता तथा उसकी सफलता का स्तर भी कम हो जाता है। तथापि अधिकांश लोग समस्याओं से जूझते हुए भी निर्देशन प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते अथवा निर्देशक की सलाह को अपेक्षित महत्त्व नहीं देते।

2. **उपयुक्त प्रशिक्षण का अभाव (Lack of Proper Training)** - समाज में तो निर्देशन के प्रति जागरूकता की कमी है ही साथ ही निर्देशक वर्ग भी अपने इस महत्त्व पूर्ण कार्य के प्रति उदासीन नजर आता है जिसका एक प्रमुख कारण निर्देशकों को उपयुक्त प्रशिक्षण न मिलना है आज जितनी संख्या में शिक्षक प्रशिक्षित हो रहे हैं यदि उसका 10% भी निर्देशकों को प्रशिक्षण दिया गया होता तो हम प्रशिक्षित निर्देशकों की कमी का सामना न कर रहे होते।
3. **कुशल निर्देशकों का अभाव (Lack of Expert Guides)** - प्रशिक्षण की कमी के कारण विद्यालयों में तथा स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाले कुशल निर्देशकों का अभाव उत्पन्न हो गया है आज विद्यालयों में या तो निर्देशकों की नियुक्ति की ही नहीं गयी है और यदि कहीं नियुक्ति की भी गयी है तो उनमें बहुत कम निर्देशक ऐसे हैं जो अपने कार्य को दक्षता पूर्वक सम्पन्न कर पाते हैं। इसके अनेक कारणों में से कुछ कारण इस प्रकार हैं- जैसे प्रशिक्षण का न होना, निर्देशक की निर्देशन कार्य में रूचि न होना, निर्देशक पर कार्य भार की अधिकता, निर्देशक की व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याएं आदि।
4. **तीव्रता से बदलती सामाजिक परिस्थितियाँ (Rapidly Changing Social Senerio)**- विश्व के अनेक राष्ट्र आज बहुत तेजी से एक दूसरे के निकट आ रहे हैं जिसके कारण हम दूसरों की संस्कृति और सभ्यता की ओर तेजी से आकर्षित हो जाते हैं परिणामस्वरूप सामाजिक परिस्थितियों का चक्र तेजी से घूम जाता है। एक प्रकार की सामाजिक परिस्थिति में निर्देशन प्राप्त करके व्यक्ति जब उसको बदली हुई परिस्थिति में प्रयोग करता है तो सफलता की संभावनायें कम हो जाती है और इसका दोष निर्देशन कार्य पर मढ़ दिया जाता है।
5. **निरन्तर बढ़ती प्रतिस्पर्धा (Constantly Increasing Competition)** वैश्वीकरण ने हमारे समक्ष विचित्र परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी हैं। एक ओर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अवसरों की भरमार हुई है तो दूसरी ओर पारस्परिक प्रतिस्पर्धा ने भी अपने पांव तेजी से पसारे हैं। बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा के इस युग में व्यक्ति अनुपयुक्त साधनों का भी प्रयोग करने लगता है, ऐसी स्थिति में उचित प्रकार से दिया गया निर्देशन भी काम नहीं आता।
6. **व्यक्ति सापेक्षता (Subjectivity)**- निर्देशन प्रक्रिया के अन्तर्गत निर्देशक को वस्तुनिष्ठता का पूरा ध्यान रखना चाहिए। किन्तु, मानव की स्वाभावगत विशेषताओं के कारण निर्देशक में व्यक्ति सापेक्षता आ जाती है जो निर्देशन कार्य की गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। दूसरे शब्दों में निर्देशन कार्य करते समय व्यक्ति के स्वभाव, प्रतिक्रिया आदि के प्रभाव में आकर निर्देशक दो अलग-अलग प्रकार से निर्देशन देने लगता है जो निर्देशन के सिद्धान्तों के विरुद्ध है।

7. **पूर्वाग्रहों से ग्रसित होना (Prejudiciousness)**- निर्देशन कार्य की प्रक्रिया में कभी-कभी निर्देशक उपबोध की रूचि, योग्यता, क्षमता आदि के विषय में अपनी कुछ पूर्वधारणाएं बना लेता है तथा उसकी यह धारणाएं निर्देशन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। कभी-कभी इन पूर्वाग्रहों के कारण निर्देशन की प्रक्रिया समुचित प्रकार से पूर्ण नहीं हो पाती तथा कभी-कभी इससे घातक परिणाम भी प्राप्त हो सकते हैं।
8. **व्यक्तिगत विचारधारा (Personal Ideology)**- प्रत्येक व्यक्ति का अपना जीवन दर्शन होता है और वह समाज, परिस्थितियों, व्यवस्थाओं एवं घटनाओं को अपने इसी दृष्टिकोण से देखता है। जब कभी निर्देशक और उपबोध जो विपरीत जीवन दर्शन को मानने वाले होते हैं तब निर्देशन की प्रक्रिया बहुत कठिनाई से पूर्ण हो पाती है। इसी प्रकार निर्देशक के व्यक्तिगत जीवन दर्शन का प्रभाव उसके निर्देशन कार्य पर पड़ता है जो उपबोध के लिए सदैव उपयोगी हो यह जरूरी नहीं।
9. **प्रोत्साहन का अभाव (Lack of Motivation)**- निर्देशन प्रक्रिया को कुशलतापूर्वक सम्पन्न कराने के लिए निर्देशकों का अत्यधिक अभाव होने के बाद भी निर्देशन कार्य को किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। न तो निर्देशकों के पास उनके उपबोध की सफलता का श्रेय होता है और न ही कोई अन्य लाभ। विद्यालयों में निर्देशन कार्य करने वाले शिक्षकों को यह कार्य अतिरिक्त कार्य के रूप में दिया जाता है तथा इसकी प्रतिक्रिया में न तो उनका कार्यभार ही कम होता है और न ही कोई अन्य लाभ होता है।
10. **नैतिक मूल्यों का क्षरण (Inharresment of Moral Values)**-निर्देशन कार्य करते समय निर्देशक समाज के नैतिक मूल्यों का ध्यान रखता है; किन्तु, उपबोध जिस समाज में इस निर्देशन का प्रयोग करता है वहाँ यदि उपबोध का सामना अनैतिकता का आश्रय लेने वाले प्रतियोगी से होता है तो इस दशा में निर्देशन कार्य के अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं होते। अतः गिरता हुआ नैतिक स्तर भी इसमें बहुत बड़ी बाधा है।
11. **शिक्षा का गिरता स्तर (Decreasing Level of Education)**-वर्तमान परिवेश में शिक्षा का स्तर निरन्तर गिरता जा रहा है विद्यार्थी में ज्ञान प्राप्ति की ललक निरन्तर कम होती जा रही है वह अनुपयुक्त (अनुचित) रास्तों को अपनाकर श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त करने का सफल प्रयास करता है। ऐसी परिस्थितियों में कुशल से कुशल निर्देशक भी अपने निर्देशन कार्य की सफलता की गारन्टी नहीं ले सकता। क्योंकि ज्ञान के ठोस आधार के बिना यथार्थ सफलता की दीवार खड़ी नहीं हो सकती।

## 1.8 निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व **Need and Importance of Guidance**

जैसा कि हम पहले ही जान चुके हैं कि निर्देशन जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। यह एक बहु आयामी प्रक्रिया है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चाहे वह शैक्षिक हो या राजनीतिक, व्यावसायिक हो या कलात्मक निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

वर्तमान युग अपेक्षाकृत अधिक जटिल है। तकनीकी के निरन्तर विकास ने इस जटिलता को और बढ़ा दिया है। जहाँ एक ओर तकनीकी विकास ने हमारी सामर्थ्य को बढ़ाकर कार्यप्रणाली को सरल किया है वहीं इसी तकनीक के कारण नये-नये कौशलों का जन्म भी हुआ है जिससे निर्देशन की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है। यद्यपि बालक को उसके जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त निर्देशन की आवश्यकता प्रत्येक युग में रही है तथापि जटिलताओं के वर्तमान युग में निर्देशन की आवश्यकता ने अपने पांव और अधिक पसार लिए हैं। अतः जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निर्देशन जल और वायु की तरह अनिवार्य हो गया है। यहां पर हम कतिपय महत्त्व पूर्ण क्षेत्रों में निर्देशन की आवश्यकता पर चर्चा करेंगे।

### व्यक्तिगत जीवन में निर्देशन की आवश्यकता **Need of Guidance in Personal Life**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज के बिना उसका मनुष्य अस्तित्व संभव नहीं है। वह समाज में रहते हुए जीवन के प्रत्येक पग पर दूसरों से सीखता है। अपने दैनिक जीवन में कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जिसे वह दूसरों की सहायता से न सीखता हो। धीरे-धीरे वह इन कार्यों का अभ्यस्त हो जाता है तथा स्वयं ही इन कार्यों को करने में सक्षम हो जाता है। चूंकि जीवन की परिस्थितियाँ निरन्तर बदलती रहती हैं अतः उसे समायोजन हेतु नये-नये कार्यों को सीखना पड़ता है। अतः जीवन पर्यन्त व्यक्तिगत कार्यों को करने के लिए निर्देशन की आवश्यकता होती है। व्यक्तिगत जीवन में निर्देशन की आवश्यकता मुख्यतः निम्न कारणों से पड़ती है -

- i. **व्यक्तिगत क्षमताओं के विकास हेतु (For Development of Individual Skills) -** कोई भी व्यक्ति स्वयं में पूर्ण नहीं है किन्तु पूर्ण होने के प्रयास में वह अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं को निरन्तर विकसित करता रहता है। संभवतः प्रकृति ने निरन्तर श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक जीव में इस तरह की अपेक्षा को जन्म दिया होगा। किसी भी व्यक्ति की व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास निर्देशन के बिना संभव नहीं है। यदि हमें बालपन में माता की उंगली का सहारा न मिला होता तो शायद हम अभी तक सीधे खड़े होना भी न सीख पाये होते। निर्देशन का यह पहला चरण हमारी प्रकृति और क्षमताओं को समझते हुए जिस प्रकार हमारा विकास करता है निर्देशन की वह प्रक्रिया हमारे सम्पूर्ण जीवन में हमारी व्यक्तिगत क्षमताओं को विकसित करती रहती है। इस विषय में हम भीतर के पृष्ठों में और अधिक चर्चा करेंगे।

- ii. **पारिवारिक जीवन में आवश्यक (Necessary in Family Life)**- प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी परिवार का अंग अवश्य होता है। परिवार में माता पिता भाई बहन तथा अन्य सम्बन्धियों के साथ अपने सम्बन्ध बनाये रखना एवं परिवार के लिए उपयोगी होना प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है। माता-पिता के कुशल निर्देशन में बालक परिवार की व्यवस्थाओं को ठीक से समझ जाता है। पारिवारिक जीवन में स्वयं को स्थापित करने के लिए निर्देशन की अत्यधिक आवश्यकता है।
- iii. **किशोरावस्था का सामना करने के लिए (To Face Adolescence Period)**- स्टेनले हाल जैसे मनोवैज्ञानिकों ने किशोरावस्था को संवेग और तूफान की अवस्था कहा है। इस अवस्था में बालक युवावस्था की ओर कदम बढ़ा रहा होता है। उसके भीतर बहुत तेजी से शारीरिक मानसिक और संवेगात्मक परिवर्तन आ रहे होते हैं। बदलती हुई सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में बालक इन परिवर्तनों में डूब जाना चाहता है। उपयुक्त निर्देशन के अभाव में इस अवस्था का बालक अप्रत्याशित निर्णय ले सकता है जो उसके जीवन तथा समाज दोनों के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। अतः किशोरावस्था में निर्देशन अति आवश्यक है।

---

### अभ्यास प्रश्न

---

3. निर्देशन की महत्त्वपूर्ण अवधारणाएं लिखिए।

#### शिक्षा के क्षेत्र में निर्देशन की आवश्यकता Need of Guidance in Educational Field

शिक्षा मनुष्य को पशुओं से अलग करती है। संस्कृत में कहा गया है “साहित्य, संगीत, कला विहीनः साक्षात् पशु पुच्छविषाणहीनः” किन्तु न तो प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक प्रकार की विद्या प्राप्त कर सकता है और न ही ऐसा हो सकता है कि कोई भी विद्यार्थी किसी भी विषय का चयन कर ले और सफल हो जाय। आज देश में हम बेरोजगारों की जो भारी भीड़ देख रहे हैं उसका एक महत्त्वपूर्ण कारण अपनी रूचि, योग्यता और क्षमता को जाने बिना किसी भी विषय का अध्ययन कर लेना भी है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में विषय चयन से लेकर परीक्षा उत्तीर्ण करने तक प्रत्येक चरण में व्यक्ति को निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है।

- i. **उपयुक्त विषयों के चयन हेतु (For Selecting Appropriate Subject)** - शिक्षा के क्षेत्र में आज सबसे बड़ी समस्या यह है कि विद्यार्थी को यह समझ में नहीं आता कि वह किन विषयों का चयन करे जिसके द्वारा वह भविष्य में सफल हो सके। आज यद्यपि शिक्षा के क्षेत्र में विषयों की भरमार है लेकिन सबसे बड़ी समस्या उसके उपयुक्त चयन की है अतः आज विद्यार्थियों को उपयुक्त विषयों के चयन हेतु निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

- ii. **कक्षा कक्ष व्यवहार के लिए (For Classroom Behaviour)**- बालक जब से विद्यालय में प्रवेश लेता है तथा जब तक विद्यालय में रहता है वह विभिन्न स्तरों से गुजरता है। प्रत्येक स्तर पर उससे एक विशेष प्रकार के व्यवहार की आशा की जाती है। इस व्यवहार को बालक को सिखाना पड़ता है, तथा इसके लिए निर्देशक की आवश्यकता पड़ती है। बालक को कक्षा में किस प्रकार का आचरण करना है उसे अपने गुरुजनों, साथियों से किस प्रकार का व्यवहार करना है, तथा उसे अपनी कक्षा की भौतिक सम्पत्ति को किस प्रकार सहेज कर रखना है, यह सब वह निर्देशन से ही सीखता है।
- iii. **शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने हेतु (For the Increasment of Educa-tional Achievenent)** - विद्यालय में अलग-अलग मानसिक स्तर के विद्यार्थी अध्ययन करते हैं कभी-कभी विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि उसके मानसिक स्तर से मेल नहीं खाती। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। किन्तु, इसका प्रमुख कारण उचित निर्देशन का अभाव है। प्रायः निर्देशन के अभाव में विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान को अभिव्यक्त करने में असफल रहता है, जिससे उसकी शैक्षिक उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उचित प्रकार से दिया गया निर्देशन बालक की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक है।
- iv. **विद्यालय की अन्य गतिविधियों हेतु (For Other Activities of School)**- विद्यालय केवल विद्या का मन्दिर ही नहीं है अपितु वहाँ अध्ययन-अध्यापन के अतिरिक्त अन्य प्रकार की गतिविधियाँ सम्पन्न होती हैं, किन्तु अभिभावकों तथा विद्यार्थियों की नजर में इन गतिविधियों का महत्त्व न होने के कारण विद्यालय के बहुत कम विद्यार्थी इस प्रकार की गतिविधियों में भाग लेते हैं। यदि अध्यापकों एवं विद्यार्थियों को इस प्रकार का निर्देशन प्रदान किया जाये तो न केवल विद्यार्थियों की सहभागिता बढ़ेगी अपितु उनका तीव्रतर विकास भी होगा।

### व्यावसायिक क्षेत्र में निर्देशन की आवश्यकता (Need of Guidance in Vocational Field)

बालक का व्यक्तिगत एवं शैक्षिक जीवन उसके व्यावसायिक जीवन की आधारशिला है। घर और विद्यालय मिलकर बालक को भली-भाँति जीवन यापन के लिए तैयार करते हैं। तभी वह समाज के लिए उपयोगी नागरिक सिद्ध हो सकता है अतः व्यक्तिगत एवं शैक्षिक जीवन में निर्देशन की जितनी आवश्यकता अनुभव होती है। व्यावसायिक जीवन के लिए निर्देशन की आवश्यकता उससे कहीं अधिक है। निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत हम अपनी बात को और अधिक स्पष्ट कर सकेंगे।

- i. **उपयुक्त व्यवसाय के चयन हेतु (for Selection of Appropriate Occupation)**  
वर्तमान युग औद्योगिकीकरण का युग है। औद्योगिकीकरण के साथ-साथ जनसंख्या वृद्धि भी हुई है, जिसके कारण बेरोजगारी की समस्या बढ़ी है। परन्तु, आज बेरोजगारी का एक कारण लोगो द्वारा उपयुक्त व्यवसाय का चयन न करना भी है। खासतौर पर आज का युवा दिग्भ्रमित है। जिस तरफ सब जा रहे हैं वह भी उसी अंधी दौड़ में शामिल है। उसे अपनी रुचि, क्षमताओं तथा योग्यताओं का तो पता ही नहीं है। भारत जैसा देश जहाँ आबादी का

सबसे बड़ा हिस्सा युवाओं का है तथा जहाँ युवा बेरोजगारी की समस्या से जूझ रहे हैं वहाँ निर्देशन की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। आज भारत को अच्छे निर्देशकों की आवश्यकता है जो यहां के युवाओं की ऊर्जा को सकारात्मक दिशा में मोड़ कर (लगाकर) भारत को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बना सके।

- ii. **व्यावसायिक क्षमताओं के विकास हेतु (For the Development of Vocational Skill)**- केवल उपयुक्त व्यवसाय का चयन करने में सहायता करने पर ही निर्देशन की भूमिका समाप्त नहीं हो जाती अपितु व्यवसाय चयन के बाद निर्देशन की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। तकनीकी विकास के इस युग में प्रत्येक व्यवसाय विशिष्ट से विशिष्टतर होता जा रहा है। व्यवसाय आरम्भ करते ही कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसाय का विशेषज्ञ नहीं हो सकता। कभी-कभी व्यवसाय में असफलता का भय भी बना रहता है। व्यवसाय चयन के बाद व्यवसाय विशेष की बारीकियों को समझने तथा अपने प्रिय व्यवसाय में अपनी क्षमताओं को बढ़ाते रहने के लिए सतत निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है।
- iii. **तकनीकी जटिलताओं का सामना करने के लिए (To Face Technical Complication)**- आज का युग तकनीकी का युग है। आज हर कार्यक्षेत्र में नयी-नयी तकनीकों का विकास हो रहा है। आज इस क्षेत्र में इतने नवाचार हो रहे हैं कि किसी भी व्यक्ति का इन सबसे स्वयं अवगत रहना तथा इन सारी कुशलताओं का स्वयं में विकास करना लगभग असम्भव सा कार्य है। अतः आज इन सभी क्षेत्रों में हो रहे नवाचारों को समझने के लिए उसे निर्देशक की आवश्यकता पड़ती है।

#### **सामाजिक जीवन में निर्देशन की आवश्यकता (Need of Guidance in Social Life)**

परिवार को समाज की प्रथम इकाई माना जाता है तथा परिवार से प्रशिक्षित होकर ही बालक समाज में जाता है। ऐसा समझा जाता है कि जो बालक परिवार में भली-भाँति समायोजित हो जाते हैं वो समाज में भी भली प्रकार से समायोजन करने में समर्थ होते हैं। लेकिन कभी-कभी परिस्थितियाँ इसके विपरीत भी होती हैं। कोई-कोई परिवार बालक को अत्यन्त लाड़ प्यार देकर पालते हैं तथा बालक को आत्मनिर्भर होने का अवसर ही प्रदान नहीं करते। ऐसा बालक जब समाज में जाता है तो वह संरक्षण के अभाव में स्वयं को असुरक्षित अनुभव करने लगता है। परिणामतः वह कुसमायोजन का शिकार हो जाता है अतः समाज में सामंजस्य हेतु निर्देशन की महती आवश्यकता है। वस्तुतः बालक को समाज में केवल अपनी विचारधाराओं, धारणाओं तथा विश्वासों के आधार पर ही नहीं अपितु सामाजिक विश्वासों, धारणाओं तथा विचारधाराओं के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए जीवन यापन करना होता है तथा इन सबके लिए उसे निर्देशन की आवश्यकता होती है।

- i. **समाज के परिवर्तनशील मानदंडों में समायोजन के लिए (For the Compatibility of Changing Social Norms)**. सामाजिक परिवर्तन समाज की अनिवार्य आवश्यकता है। कोई भी समाज समय-समय पर अपने मानदंडों को बदले बिना नहीं रह सकता। तकनीकी

के विकास तथा वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने समाज के मानदंडों में तीव्रगामी परिवर्तन ला दिये हैं। इन बदलते सामाजिक मानदंडों में समायोजन के लिए व्यक्ति को निर्देशन की अत्यधिक आवश्यकता है।

- ii. **मजबूत लोकतन्त्र के निर्माण हेतु (For the Building of Strong Democracy)-** मजबूत लोकतन्त्र के निर्माण हेतु भी निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है। आज भारत के समक्ष क्षेत्रवाद, जातिवाद, तथा साम्प्रदायिकता जैसी अनेक समस्याएँ हैं जो भीतर ही भीतर राष्ट्र की मजबूत नींव को खोखला कर रही हैं। आज वैश्वीकरण का युग है जिसमें प्रत्येक राष्ट्र को अत्यन्त मजबूत होकर विश्व पटल पर स्वयं को प्रस्तुत करना है। अतः ऐसे में एक निर्देशक का दायित्व और भी बढ़ जाता है कि वह राष्ट्र के लोगों को इन संकीर्ण मानसिकताओं से ऊपर उठाकर उन्हें एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण के लिए प्रेरित करे।

### 1.9 निर्देशन का विषय क्षेत्र Scope of Guidance

हम पिछले पृष्ठों में यह बात जान चुके हैं कि निर्देशन जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है अतः जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन निर्देशन का कार्य क्षेत्र कहा जा सकता है। यद्यपि निर्देशन के कार्यक्षेत्र को बताना सप्रयास निर्देशन प्रक्रिया का सीमांकन करना है; तथापि अध्ययन को सरल बनाने की दृष्टि से हम निर्देशन के कार्य क्षेत्र को कुछ बिन्दुओं के अन्तर्गत अभिव्यक्त करने का प्रयास करेंगे।

- i. **व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन (Personal Life of Individual)-** प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत जीवन में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जैसे शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक आदि। ये समस्याएँ व्यक्ति को तोड़कर रख देती हैं, किन्तु, एक कुशल निर्देशक व्यक्ति को इन समस्याओं से न केवल उबार लाता है बल्कि उसे जीवन में सफलता भी प्राप्त कराता है, अतः व्यक्ति का सम्पूर्ण वैयक्तिक जीवन निर्देशन का कार्य क्षेत्र कहा जा सकता है।
- ii. **व्यक्ति का सामाजिक जीवन (Social Life of Individual)-** व्यक्ति परिवार के सम्पर्क में आते ही अपना सामाजिक जीवन जिसे हम पारिवारिक जीवन कहते हैं जीना आरम्भ कर देता है। धीरे-धीरे वह समाज के सीधे सम्पर्क में आता है और अनेक सामाजिक समस्याओं का सामना करने लगता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए उसे निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है। हम कह सकते हैं कि व्यक्ति के समस्त सामाजिक सम्बन्ध निर्देशन के कार्य क्षेत्र में आते हैं।
- iii. **व्यक्ति के शैक्षिक क्रियाकलाप (Educational Activity of Individual)** विद्यालय में प्रवेश के बाद विषय चयन से लेकर विषय को समझने, उसकी कठिनाईयाँ दूर करने, विद्यार्थियों के पारस्परिक सम्बन्ध, विद्यार्थी और अयापकों के कार्य सम्बन्ध, विद्यार्थी और कार्यालय, विद्यार्थी और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी तथा विद्यार्थी की अध्ययन से सम्बन्धित

अन्य समस्याएँ सभी निर्देशन के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत आती हैं, क्योंकि बिना निर्देशन के इन समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं है।

- iv. **व्यक्ति के व्यावसायिक क्रियाकलाप (Vocational Activity of Individual)**  
प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन यापन के लिए कोई न कोई कार्य अवश्य करता है। जीवन यापन के लिए किया जाने वाला कार्य व्यवसाय की श्रेणी में आता है। बिना उपयुक्त निर्देशन के उचित व्यवसाय का चयन नहीं किया जा सकता। व्यवसाय चयन के बाद भी उसके व्यावसायिक जीवन में अनेक समस्याएँ आती रहती हैं; इन समस्त समस्याओं का निदान करने के लिए निर्देशन की आवश्यकता होती है। अतः व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यावसायिक जीवन निर्देशन के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत आता है।

### 1.10 निर्देशन की उपयोगिता Significance of Guidance

एक ओर कुछ दार्शनिक इस संसार को 'असार' कहते हैं तो दूसरी ओर कुछ दार्शनिकों की मान्यताये हैं कि इस संसार में कुछ भी अनुपयोगी नहीं है इस दृष्टि से किसी भी दूसरे तत्व की ही भाँति निर्देशन की भी अपनी उपयोगिता है।

प्रत्येक सम्प्रदाय के धर्म ग्रन्थ निर्देशन की उपयोगिता से भरे पड़े हैं इसीलिए जीवन जीने की कला सिखाने वाली महान विभूतियों को इन ग्रन्थों में भगवान, देवता, ईश्वर का पुत्र, गुरु और पैगम्बर आदि सम्माननीय नामों से सम्बोधित किया गया है।

यहाँ हम वर्तमान परिस्थितियों में निर्देशन की उपयोगिता पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

- i. **आधारभूत कौशलों को सीखने में सहायक (Helpful to Learn Fundamental Skills)**— इतिहास इस बात का साक्ष्य है कि आज तक कोई भी व्यक्ति बिना उपयुक्त निर्देशन के आधारभूत कौशलों को नहीं सीख पाया है जैसे - खड़े होना, चलना, बोलना, पढ़ना, लिखना, खाना-पीना इत्यादि। अतः शैक्षिक, व्यक्तिगत, व्यवसायिक एवं सामाजिक जीवन में आधारभूत कौशलों को सीखने के लिए निर्देशन की भूमिका महत्वपूर्ण है।
- ii. **बालक का परिवार से विद्यालय में समायोजन (Adjustment of Child from Family to Home)**- अपने बाल्यकाल में बालक जब परिवार से विद्यालय का रूख करता है तब उसके सामने समायोजन की भीषण समस्या होती है निर्देशन के द्वारा ऐसी स्थिति में बालक का विद्यालय में समायोजन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।
- iii. **अध्ययन छोड़ने वाले बालकों को पुनः अध्ययन के लिए प्रेरित करने में सहायक (Helpful to Re-enrollment of Droppers)**- अपने अध्ययन कार्य को बालक अनेक कारणों से बीच में ही छोड़ देते हैं। उचित निर्देशन के द्वारा इन बच्चों को पुनः अध्ययन के लिए प्रेरित करने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

- iv. **शैक्षिक उपलब्धि एवं प्रगति में सहायक (Helpful in Academic Achievement and Development)**-विषयवस्तु का ज्ञान होना एक बात है तथा उसकी श्रेष्ठ अभिव्यक्ति दूसरी बात। अनेकशः विषय वस्तु का पर्याप्त ज्ञान होने पर भी अनेक बालकों की शैक्षिक उपलब्धि बहुत कम रह जाती हैं ऐसे बालकों की शैक्षिक उपलब्धि एवं प्रगति को उचित निर्देशन के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है।
- v. **बालक के समग्र विकास में सहायक (Helpful in Wholesome Development of Child)**- निर्देशन कार्य बालक को न केवल जीवन का अर्थ समझने में सहायता देता है अपितु उसके वैयक्तिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, व्यावसायिक एवं तकनीकी विकास में पूरी तरह से सहायता करता है।
- vi. **भविष्य की योजना बनाने में सहायक (Helpful to Future Planning)**- निर्देशन की प्रक्रिया के दौरान निर्देशक बालक की दैनंदिन सामान्य समस्याओं से अवगत होता रहता है अतः वह भविष्य की शिक्षा योजना बनाते समय इन समस्याओं का विशेष ध्यान रखता है। हम कह सकते हैं कि निर्देशन का कार्य भविष्य की योजना बनाने में सहायक है।

### 1.11 सारांश

ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति मानव के पास स्वयं की भाषा, बुद्धि एवं विवेक आदि होते हुए भी उपयुक्त विकास के लिए उसे किसी अन्य की सहायता लेनी पड़ती है। व्यक्ति की उत्तम क्षमताओं का विकास करने से सहायता करने का कार्य निर्देशन कहलाता है। निर्देशन की प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व हमें निर्देशन के सिद्धान्तों से अवश्य परिचित होना चाहिए। हमें यह ज्ञात होना चाहिए कि निर्देशन एक सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक प्रक्रिया है। निरन्तर चलने वाली इस प्रक्रिया में निर्देशक को सामाजिकता एवं नैतिकता का ध्यान रखना चाहिए। निर्देशन कार्य करने से पूर्व उसे वैज्ञानिक आधारों पर परिस्थितियों का विश्लेषण कर लेना चाहिए। निर्देशक को चाहिए कि वह अपने उपबोध्य को सकारात्मक निर्देशन दे तथा उसे आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करे। उपबोध्य निर्देशक का निर्देशन मानने अथवा न मानने के लिए स्वतन्त्र हो निर्देशन की प्रक्रिया लचीली होनी चाहिए। व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति को समान महत्त्व दिया जाना चाहिए तथा उपबोध्य के सम्पूर्ण विकास का प्रयास करना चाहिए।

एक से अधिक निर्देशक होने की स्थिति में निर्देशकों को परस्पर समन्वय स्थापित करना चाहिए। निर्देशक को चाहिए कि वह निरपेक्ष रहकर निर्देशन का कार्य करे तथा विशिष्ट क्षेत्रों में निर्देशन के लिए निर्देशक को प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना चाहिए।

निर्देशन की अत्यधिक आवश्यकता होते हुए भी भारत में इसके प्रति जागरूकता का अभाव है। निर्देशकों को उपयुक्त प्रशिक्षण नहीं मिलता फलतः समाज में कुशल निर्देशकों की कमी है। तेजी से बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियाँ तथा बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा के कारण भी निर्देशन के सुपरिणाम

नहीं मिल रहे। निर्देशक भी यदा कदा पूर्वाग्रहों से ग्रसित हो जाते हैं; व्यक्तिगत विचारधारा को महत्त्व देने लगते हैं तथा व्यक्ति सापेक्ष हो जाते हैं। शिक्षा का गिरता हुआ स्तर भी निर्देशन कार्य में बाधा बनता है।

हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निर्देशन की आवश्यकता है। मुख्य रूप से व्यक्तिगत जीवन में क्षमताओं के विकास के लिए, पारिवारिक जीवन में समायोजन के लिए, तथा किशोरावस्था का सामना करने के लिए निर्देशन अति आवश्यक है। इसी प्रकार शैक्षिक क्षेत्र में उपयुक्त विषयों के चयन के लिए, कक्षा कक्ष व्यवहार के लिए तथा अपनी शैक्षिक उपलब्धियाँ बढ़ाने के लिए निर्देशन की आवश्यकता होती है। व्यावसायिक क्षेत्र में उपयुक्त व्यवसाय चयन करने के लिए, व्यवसायिक क्षमताओं का विकास करने के लिए तथा तकनीकी जटिलताओं का सामना करने के लिए निर्देशन की आवश्यकता होती है। सामाजिक जीवन में बदलते हुए मानदंड तथा मजबूत लोकतन्त्र के लिए निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है। व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन सामाजिक जीवन, शैक्षिक क्रियाकलाप, सामाजिक क्रियाकलाप आदि निर्देशन के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं।

### 1.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गुड के अनुसार
2. निर्देशन के किन्हीं पाँच सिद्धान्तों के नाम हैं-
  - i. ज्ञान का सिद्धान्त
  - ii. सार्वभौमिकता का सिद्धान्त
  - iii. निरन्तरता का सिद्धान्त
  - iv. सामाजिकता का सिद्धान्त
  - v. नैतिकता का सिद्धान्त
3. निर्देशन की महत्त्व पूर्ण अवधारणाएं निम्नवत हैं
  - i. मानव समाज में प्रत्येक व्यक्ति को निर्देशन की आवश्यकता होती है।
  - ii. निर्देशन की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है।
  - iii. निर्देशन अधिगम (Learning) में सहायक होता है।
  - iv. निर्देशन व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।
  - v. निर्देशन का कार्य उपबोध्य (Learner) की क्षमताओं का विकास करना है।
  - vi. निर्देशन उपबोध्य की उपलब्धि और प्रगति को बढ़ाता है।

### 1.13 संदर्भ ग्रंथ

1. Agrawal Rashmi, (Education Vocational Guidance and counseling) Shipra Publications, Delhi- 11092 (2006)

2. Suri S.P., T.S. Sodhi, (Guidance and counseling), Bawa Publication Patiala (1997)
3. Sharma R.A., (Career information in career guidance) Surya Publication Meerut (2004)
4. Sharma R.A (Guidance and counseling) Vinay Rakheia c/o R. Lall book Depot Meerut (2010)
5. सिंह रामपाल राधावल्लभ उपाध्याय, (शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन) विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
6. जायसवाल सीताराम (शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श), अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा (2009)

---

### 1.13 निबंधात्मक प्रश्न

---

1. निर्देशन के प्रमुख सिद्धान्त कौन-कौन से हैं?
2. निर्देशन की प्रमुख अवधारणायें स्पष्ट कीजिए?
3. भारतवर्ष में निर्देशन के क्षेत्र में कौन-कौन सी समस्याएँ हैं?
4. निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व को स्पष्ट कीजिए?

## इकाई 2 निर्देशन के प्रकार : शैक्षिक , व्यवसायिक एवं व्यक्तिगत , समूह निर्देशन

- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 निर्देशन के प्रकारों का वर्गीकरण
- 2.4 शैक्षिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा
  - 2.4.1 शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व
  - 2.4.2 शैक्षिक निर्देशन के उद्देश्य
- 2.5 व्यावसायिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा
  - 2.5.1 व्यावसायिक निर्देशन का महत्त्व
  - 2.5.2 व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्य
- 2.6 व्यक्तिगत निर्देशन: अर्थ
  - 2.6.1 व्यक्तिगत निर्देशन के प्रकार
  - 2.6.2 व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व
  - 2.6.3 व्यक्तिगत निर्देशन के उद्देश्य
- 2.7 सामूहिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा
  - 2.7.1 सामूहिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व
  - 2.7.2 सामूहिक निर्देशन के उद्देश्य
- 2.8 सारांश
- 2.9 संदर्भ ग्रंथ
- 2.10 निबंधात्मक प्रश्न

### 2.1 प्रस्तावना

जटिलताओं के आधुनिक युग में, जैसे-जैसे मानव समाज विकसित होता जा रहा है उसके जीवन में जटिलतायें और बढ़ती जा रही हैं। किसी समय में कंटीली घास को ले आने वाला व्यक्ति कुशल कहलाता था किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कुशल कहलाने के लिए मनुष्य को अपने भीतर अनेक योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास करना होगा। निरन्तर जटिल होते इस समाज में कोई भी व्यक्ति केवल अपने अनुभवों के द्वारा पूर्ण सफल नहीं हो सकता। समस्याओं का समाधान करने के लिए, अध्ययन में मन लगाने के लिए, उपलब्धि का स्तर ऊँचा उठाने के लिए, आदत में सुधार के लिए

अथवा इसी तरह के किसी अन्य कारण से जब हम अपने अनुभव अथवा ज्ञान को व्यक्ति विशेष के लिए प्रदान करते हैं तब अनुभव एवं ज्ञान के आदान-प्रदान की यह प्रक्रिया निर्देशन का रूप ले लेती हैं।

वास्तव में निर्देशन एक बहुमुखी प्रक्रिया है। उदाहरण के लिए जब व्यक्ति शैक्षिक निर्देशन ले रहा होता है तब वह अपना व्यक्तिगत तथा सामाजिक परिष्कार भी कर रहा होता है। इसी प्रकार अनेक बार शैक्षिक निर्देशन बालक की व्यावसायिक समस्याओं का भी समाधान कर देता है। अतः निर्देशन को यदि विभिन्न प्रकारों में बाँटा जाये, तो भी ये परस्पर इतने अन्तर्सम्बद्ध होंगे कि उनमें भेद करना मुश्किल हो जायेगा। प्रस्तुत इकाई में आप निर्देशन के प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

---

## 2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

1. निर्देशन के अनेक प्रकारों के विषय में जान सकेंगे।
2. शैक्षिक निर्देशन के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जान सकेंगे।
3. शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता महत्त्व एवं उद्देश्य के बारे में जान सकेंगे।
4. व्यावसायिक निर्देशन के अर्थ एवं परिभाषा से अवगत हो सकेंगे।
5. व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्य एवं महत्त्व को समझ सकेंगे।
6. व्यक्तिगत एवं सामूहिक निर्देशन के अर्थ एवं परिभाषा से अवगत हो सकेंगे।
7. व्यक्तिगत निर्देशन के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो सकेंगे।
8. व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता, महत्त्व एवं उद्देश्यों को जान सकेंगे।
9. सामूहिक निर्देशन की आवश्यकता, महत्त्व एवं उद्देश्यों को भली भाँति समझ सकेंगे।

---

## 2.3 निर्देशन के प्रकारों का वर्गीकरण Classification of Types of Guidance

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि केवल अध्ययन की दृष्टि से निर्देशन के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण किया जा सकता है। अध्ययन की दृष्टि से विभिन्न विद्वानों ने निर्देशन के अनेक प्रकार बताये हैं जिनमें कुछ निम्नवत हैं:-

### पैट्रसन के अनुसार निर्देशन के प्रकारों का वर्गीकरण Classification of Guidance According to Petron

पैट्रसन ने निर्देशन को पाँच भागों में बाँटा है। पैट्रसन के अनुसार निर्देशन का वर्गीकरण इस प्रकार है:-

1. शैक्षिक निर्देशन Educational Guidance

2. व्यावसायिक निर्देशन Vocational Guidance
3. व्यक्तिगत निर्देशन Personal Guidance
4. स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्देशन Health & Hygenic Guidance
5. आर्थिक निर्देशन Financial Guidance

### विलियम मार्टिन के अनुसार निर्देशन के प्रकारों का वर्गीकरण Classification of Guidance According to William Martin

विलियम मार्टिन प्रॉक्टर के द्वारा उनकी पुस्तक “Educational and Vocational Guidance” में निर्देशन के निम्नांकित 6 प्रकार बताये गये हैं:-

1. शैक्षिक निर्देशन Educational Guidance
2. व्यावसायिक निर्देशन Vocational Guidance
3. सामाजिक एवं नागरिक कार्यों में निर्देशन Social and Civic Guidance
4. स्वास्थ्य एवं शारीरिक समस्याओं से सम्बन्धित निर्देशन Guidance for Health & Physical Problem
5. अवकाश के उत्तम उपयोग के लिये निर्देशन Guidance for Leisure
6. चरित्र निर्माण के कार्यों में निर्देशन Guidance for Development of Charactor

पश्चिमी विद्वानों के द्वारा किया गया निर्देशन का उपरोक्त वर्गीकरण, अस्पष्ट एवं अधूरा है। अतः निर्देशन को भली भांति समझने के लिए इसका वर्गीकरण निम्नांकित प्रकार से किया जा सकता है:-

1. क. वैयक्तिक निर्देशन  
ख. सामूहिक निर्देशन
2. क. प्रत्यक्ष निर्देशन  
ख. अप्रत्यक्ष निर्देशन
3. क. औपचारिक निर्देशन  
ख. अनौपचारिक निर्देशन
4. क. निर्देशात्मक निर्देशन  
ख. सुझावात्मक निर्देशन
5. क. सैद्धान्तिक निर्देशन  
ख. प्रयोगात्मक निर्देशन
6. क. मौखिक निर्देशन  
ख. लिखित निर्देशन

निर्देशन के इन सभी प्रकारों को पुनः निम्नांकित भागों में बाँटा जा सकता है:-

1. शैक्षिक निर्देशन
2. व्यावसायिक निर्देशन
3. सामाजिक निर्देशन
4. चिकित्सकीय निर्देशन
5. धार्मिक निर्देशन
6. तकनीकी निर्देशन
7. पारिवारिक निर्देशन
8. अवकाश सदुपयोग से सम्बन्धित निर्देशन
9. नैतिक निर्देशन

हम यह कह सकते हैं कि पूर्वोक्त सभी प्रकार के निर्देशन (शैक्षिक, व्यावसायिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी आदि) व्यक्तिगत अथवा सामूहिक दोनों प्रकार से दिये जा सकते हैं। प्रत्येक वैयक्तिक अथवा सामूहिक निर्देशन, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार का हो सकता है। प्रत्येक प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष निर्देशन औपचारिक अथवा अनौपचारिक निर्देशन, निर्देशात्मक अथवा सुझावात्मक दोनों प्रकार का हो सकता है और प्रत्येक निर्देशात्मक अथवा सुझावात्मक निर्देशन सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक दोनों प्रकार का हो सकता है। इस प्रकार निर्देशन कुल मिलाकर 576 प्रकार का हो सकता है ( $9 \times 2^{12} = 576$ )

यहाँ पर हम मुख्यः रूप से शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन का अध्ययन करेंगे

#### 2.4 शैक्षिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा

निर्देशन के विभिन्न प्रकारों के विषय में जानने के बाद हम शैक्षिक निर्देशन शब्द को जानने का प्रयास करेंगे। अब हम जानते हैं कि निर्देशन एक व्यापक शब्द है तथा हमें अपने जीवन के जिस किसी भी क्षेत्र में निर्देशन की आवश्यकता होती है, निर्देशन का वही प्रकार हमारे लिये उपयोगी हो जाता है। जैसे सामाजिक समायोजन के लिए सामाजिक निर्देशन, शैक्षिक समायोजन के लिये शैक्षिक निर्देशन तथा व्यावसायिक समायोजन के लिये व्यावसायिक निर्देशन।

आदि काल से ही अपने जीवन में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना कर रहा मानव समाज आधुनिक समय में जटिल समाज की संज्ञा से विभूषित है। तकनीकी के विकास ने इस जटिलता को और भी बढ़ा दिया है। आज मनुष्य की रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकताओं को गौण करके तकनीकी तथा अन्य समस्याओं ने स्वयं महत्त्व पूर्ण स्थान ले लिया है। दूसरे शब्दों में आज का मानव यन्त्रों की भीड़ में स्वयं भी यन्त्रवत् बनता जा रहा है। भारत सहित अनेक देशों की सरकारों ने मानव को संसाधन मानकर इस आग में घी डालने का ही काम किया है।

आधुनिक तकनीकी युग में मनुष्य का अधिकांश समय किसी न किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने में ही व्यतीत होता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण भाग, जिसे हम किशोरावस्था एवं युवावस्था के नाम से सम्बोधित करते हैं, विद्यालयों में बीतता है; इसलिये उसके सामने शैक्षिक समायोजन से सम्बन्धित समस्याएँ सर्वाधिक होती हैं। अतः प्रायः प्रत्येक मनुष्य को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

### शैक्षिक निर्देशन का अर्थ

निर्देशन का यह भाग शैक्षिक सेवा एवं विद्यालयों से सम्बन्धित है। इस सेवा के माध्यम से विद्यार्थी अपनी प्रतिभा का अधिकतम उपयोग करने में सक्षम होते हैं। इसके अतिरिक्त निर्देशन के द्वारा उनका वैयक्तिक विकास भी होता है। निर्देशन, चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो, एक प्रकार की शैक्षिक प्रक्रिया है। अपने व्यापक अर्थों में हम किसी भी प्रकार के निर्देशन को शिक्षा प्रक्रिया का अंग मान सकते हैं, किन्तु जब हम “शैक्षिक निर्देशन” शब्द का प्रयोग कर रहे होते हैं तब हमारा तात्पर्य विद्यार्थी के शैक्षिक समायोजन में आने वाली समस्याओं का समाधान करने से होता है। यद्यपि शिक्षा भी एक प्रकार का निर्देशन ही है, तथापि शैक्षिक निर्देशन शिक्षण कार्य का स्थान नहीं ले सकता। शैक्षिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए हम यह कह सकते हैं कि “विद्यार्थी जीवन में आने वाली ज्ञान प्राप्ति से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करने में जब हम सहायता करते हैं तब यह प्रक्रिया शैक्षिक निर्देशन कहलाती है”

### शैक्षिक निर्देशन की परिभाषा

विभिन्न भारतीय एवं पश्चिमी विद्वानों ने शैक्षिक निर्देशन को अपनी अपनी रीति से परिभाषित करने का प्रयास किया है। इनमें से कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

**किट्सन** - “शिक्षा का वैयक्तिकरण करने का प्रयास ही निर्देशन है”

**लिफिगर, टसेल एवं विट्जिल** “निर्देशन एक शैक्षिक सेवा है जो विद्यालय में प्राप्त दीक्षा का अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली उपयोग करने में विद्यार्थियों की सहायता प्रदान करने के लिये आयोजित की जाती है”

**कैरोल एच. मिलर** “निर्देशन सेवाओं का सम्बन्ध विद्यालय के सम्पूर्ण कार्यक्रमों के अन्तर्गत आने वाले उन संगठित क्रियाकलापों से है जो विद्यार्थी के वैयक्तिक विकास की आवश्यकताओं में सहयोग देने के उद्देश्य से आयोजित किये जाते हैं”

**आर्थर जे. जोन्स** “शैक्षिक निर्देशन का सम्बन्ध छात्रों को प्रदान की जाने वाली उस सहायता से है जो उन्हें विद्यालयों, पाठ्यक्रमों एवं शिक्षालय के जीवन से सम्बद्ध चुनावों एवं समायोजन के लिए अपेक्षित है”

### 2.4.1 शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व

मनुष्य की ही भांति इस धरती पर चींटी से लेकर हाथी तक का अपना समाज होता है तथा उनके समाज के अनुभवी एवं सक्रिय सदस्य अपने समाज के नए सदस्यों को विभिन्न कार्यों से निर्देशन प्रदान करते हैं। अनेक वैज्ञानिक अनुसंधानों ने भी इस बात को सिद्ध किया है। मनुष्य स्वयं को समस्त प्राणी जगत में सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि मनुष्य को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त शैक्षिक निर्देशन की सर्वाधिक आवश्यकता है। वस्तुतः “शैक्षिक निर्देशन शैक्षिक परिवेश में समायोजन से सम्बन्धित प्रत्येक समस्या से जुड़ा हुआ है।” तथापि शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता को हम निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत सम्मिलित कर सकते हैं-

1. **अध्ययन के विषय चयन के लिए** - अपने शैक्षिक जीवन में जब विद्यार्थी को अध्ययन के विषयों का चयन करना होता है, उस समय तक उसकी मानसिक सामर्थ्य एवं अनुभव इतना कम होता है कि वह सही निर्णय नहीं ले पाता। इस समय तक न तो वह अपनी क्षमताओं को पहचान पाया होता है और न ही अपनी रूचि को समझ पाता है। निर्देशन के अभाव में अपने साथियों की देखा-देखी एवं मित्रों का अनुसरण करते हुए विषयों का चयन कर लेता है। इन परिस्थितियों में यदि उसे समुचित शैक्षिक निर्देशन प्राप्त हो जाये तो वह इस समस्या से बच सकता है। समुचित शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से वह कृषि, विज्ञान, कला अथवा वाणिज्य विषय का चयन अपनी रूचि, योग्यता एवं क्षमता के अनुसार कर सकता है।
2. **विद्यालय एवं जीवन में अनुशासन स्थापना के लिए** - अनुशासनहीनता की समस्या आज शिक्षा की सार्वभौमिक समस्या बन गयी है। अध्यापकगण एवं समाज अनुशासनहीनता की समस्या के लिए विद्यार्थियों को दोषी ठहराते हैं। अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने भी किशोरवय बालकों को स्वभाव से विद्रोही सिद्ध किया है। दुनिया भर के शिक्षा शास्त्री अनुशासनहीनता की समस्या का समाधान खोजने में लगे हैं तथा आज भी इस समस्या के समाधान के लिए नित नये प्रयोग किये जा रहे हैं। कोई किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन को अनुशासनहीनता का मूल मानता है तो कोई विद्यार्थी के विद्रोही स्वभाव को। कुछ विद्वान तथाकथित आधुनिकता, बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा, सामाजिक व सांस्कृतिक प्रदूषण आदि को भी अनुशासनहीनता का कारण मानते हैं। वास्तव में अनुशासनहीनता के मूल में केवल एक कारण है और वह है उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन का अभाव। यदि विद्यार्थी को उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन प्राप्त होता रहे तब ऊपर बताये गए अनुशासनहीनता के सभी कारण गौण हो जायेंगे तथा विद्यालयों के साथ-साथ विद्यार्थी के जीवन में भी अनुशासन स्थापित हो जायेगा।
3. **सीखने की प्रक्रिया को तेज करने के लिये** - जैसा कि हम पहले ही जान चुके हैं कि निरन्तर बढ़ते हुए तकनीक के विकास ने न केवल अभिभावकों की अपेक्षाओं को पहले से भी अधिक बढ़ा दिया है, अपितु विद्यार्थियों में भी प्रतिस्पर्धा की भावना तेज हो गयी है। कक्षा

में प्रथम स्थान पर बने रहने का प्रयास बालक के मन पर एक प्रकार का दबाव बना देता है जिससे उसके सीखने की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन इन विषम परिस्थितियों में विद्यार्थी की सीखने की गति को बढ़ा सकता है तथा वह सीखने की प्रतिस्पर्धात्मक परिस्थितियों का सरलता से सामना कर सकते हैं।

4. **अध्ययन सामग्री का चुनाव करने के लिये** -आज बाजार में अनेक प्रकार की उच्चस्तरीय तथा निम्नस्तरीय अध्ययन सामग्री उपलब्ध है। जो विद्यार्थी को भ्रमित करने के लिए पर्याप्त है। समुचित शैक्षिक निर्देशन विद्यार्थी की इस कठिनाई को हल कर सकता है।
5. **उपयुक्त अध्ययन विधि का चयन करने के लिए**-अध्ययन सामग्री का चयन करने के पश्चात विद्यार्थी के सामने सबसे बड़ी समस्या उपयुक्त अध्ययन विधि का चुनाव करने की आती है। प्रायः प्रत्येक विद्यार्थी के लिये अलग-अलग प्रकार की अध्ययन विधियाँ उपयोगी होती हैं। इसके लिये भी उसे उचित शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।
6. **परीक्षा की समुचित तैयारी के लिए**- प्रायः यह देखा गया है कि विद्यार्थी अत्यधिक अध्ययन तथा ज्ञानार्जन के बाद भी परीक्षा में अपेक्षित अच्छे अंक प्राप्त करने में असफल रहता है। इसका मुख्य कारण प्राप्त ज्ञान को विधिवत अभिव्यक्त करने में कठिनाई का अनुभव करना है। इस समस्या के निदान के लिए भी समुचित शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता है।

### शैक्षिक निर्देशन का महत्त्व

1. **प्रतिभा का समुचित उपयोग** -शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी को उपयुक्त विषय सामग्री का चयन कराकर हम प्रतिभाओं का समुचित उपयोग करने में सक्षम होते हैं।
2. **श्रेष्ठतम पुस्तकों के चयन में सहायक** -प्रायः विद्यार्थी अपने अध्ययन के लिये उपयुक्त पुस्तकों का चयन नहीं कर पाता है। शैक्षिक निर्देशन श्रेष्ठतम पुस्तक के चयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करता है।
3. **आत्मज्ञान** - शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी को अपनी रुचि, आवश्यकताओं एवं क्षमताओं का ज्ञान हो जाता है तथा वह अपनी क्षमताओं का अधिकतम प्रयोग करने में समर्थ हो जाता है।
4. **अपव्यय तथा अवरोधन को रोकने में सहायक** - शिक्षा के क्षेत्र में अपव्यय तथा अवरोधन एक बड़ी समस्या है शैक्षिक निर्देशन की प्रक्रिया इस समस्या का समाधान करने में सक्षम है। इस प्रक्रिया के द्वारा हम विद्यालय के भौतिक संसाधनों का समुचित प्रयोग कर पाते हैं। जिन विद्यालयों में शैक्षिक निर्देशन नहीं दिया जाता वहाँ लगभग 50 प्रतिशत विद्यार्थी अनुत्तीर्ण हो जाते हैं अथवा पढ़ाई छोड़ देते हैं। अतः शैक्षिक निर्देशन अपव्यय तथा अवरोधन को रोकने में सहायता करता है।

5. **नैतिक मूल्यों का संरक्षण-** प्रत्येक समाज के नैतिक मूल्य दूसरे समाज के नैतिक मूल्यों से भिन्न होते हैं। भारतीय समाज विश्व के प्राचीनतम समाजों में से एक है तथा इसके नैतिक मूल्य विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। वर्तमान समय में भारत में पश्चिमी सभ्यता और उसके मूल्यों का प्रसार बड़ी तेजी से होता जा रहा है। इसका मुख्य कारण मीडिया द्वारा पश्चिमी मूल्यों का प्रचार-प्रसार है। वर्तमान समय में छात्र अपने प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों तथा पश्चिमी सभ्यता के मूल्यों में से कौन से मूल्य उनके लिये सही हैं, इस बात को लेकर द्वन्द्व की स्थिति में है। उसके मस्तिष्क में निरन्तर इस बात को लेकर संघर्ष चलता रहता है जिसका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ता है और वे नकरात्मकता की ओर अग्रसर हो जाता है। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा भारतीय समाज के विशिष्ट नैतिक मूल्यों का संरक्षण किया जाता है तथा पश्चिम की चकाचौंध से ग्रसित बालक को उपयुक्त निर्देशन से सही दिशा प्रदान की जाती है।
6. **वैज्ञानिक सामाजिक संरचना के निर्माण में सहायक -** शैक्षिक निर्देशन वैज्ञानिक सामाजिक संरचना के निर्माण में सहायता प्रदान करता है। यह छात्रों के अन्धविश्वासों को दूर करता है, साथ ही साथ उन्हें पश्चिम के अन्धानुकरण से भी बचाता है जिससे उनके मस्तिष्क में एक ऐसे समाज की छवि बन सके जो सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों, रूढ़िवादों एवं सभी प्रकार के अन्धविश्वासों से मुक्त हो और वे इसके अनुरूप समाज की संरचना कर सके।
7. **प्रतिभा संरक्षण-** मानव समाज में प्रतिभाओं का अभाव कभी भी नहीं रहा। सच तो यह है कि सभ्यता का अद्यतन विकास प्रतिभाओं के बल पर ही सम्भव हो सका; किन्तु किसी भी समाज में प्रतिभाशाली बालकों को उसी प्रकार संरक्षण की आवश्यकता होती है जैसे किसी महत्त्व पूर्ण प्रजाति के पौधे को। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा प्रतिभाओं का संरक्षण भी किया जाता है। भिन्न-भिन्न छात्र भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिभाओं के धनी होते हैं लेकिन इन प्रतिभाओं का समुचित विकास तभी हो पाता है जब इन्हें उचित मार्गदर्शन प्रदान किया जाये और यह शैक्षिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।
8. **पारिवारिक समस्याओं के समाधान में सहायक-** जीवन और समस्या दोनों साथ-साथ चलते हैं। जहां जीवन है वहां समस्या भी है। जीवन में आने वाली विभिन्न समस्याओं से बचने हेतु मानव समाज ने परिवार नामक संस्था का गठन किया। किन्तु परिवार में भी विभिन्न प्रकार की समस्याओं ने जन्म लेना प्रारम्भ कर दिया। विद्यालय में आने वाले विभिन्न छात्र कई बार अलग-अलग प्रकार की पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त होते हैं, जैसे परिवार में कलह का वातावरण, परिवार की आर्थिक स्थिति का अच्छा न होना, माता या पिता में से किसी का देहान्त, अपंगता इत्यादि। इन समस्याओं से जूझते हुए छात्रों को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता सबसे अधिक होती है जिससे वे इन समस्याओं से उभर कर अपना सम्पूर्ण ध्यान अध्ययन पर केन्द्रित कर सके।

### 2.4.2 शैक्षिक निर्देशन के उद्देश्य

हम जानते हैं कि निरूद्देश्य किया गया कोई भी कार्य निरर्थक होता है अतः हमें शैक्षिक निर्देशन के भी उद्देश्यों का ज्ञान होना चाहिए। अनेक शिक्षाविदों के कार्यों का अध्ययन करने के पश्चात हम निम्नांकित प्रकार से शैक्षिक निर्देशन के उद्देश्यों का निर्धारण कर सकते हैं-

1. **विद्यालयों के चयन में सहायता करना** - भारतीय सन्दर्भ में एक छात्र प्राथमिक स्तर की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात विद्यालयों के चयन की समस्या से जूझने लगता है। वह इस समस्या से निम्न-माध्यमिक, उच्च-माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय स्तर पर भी दो-चार होता है। उसके पश्चात उसके समक्ष सबसे बड़ी समस्या होती है कि वह किस विद्यालय का चयन करे? हालाँकि यह समस्या बहुत छोटी प्रतीत होती है, परन्तु यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि एक विद्यार्थी का भविष्य उपयुक्त विद्यालय के चयन पर निर्भर करता है। शैक्षिक निर्देशन इस संदर्भ में विद्यार्थियों को उचित परामर्श उपलब्ध कराकर उनकी समस्या का समाधान कर सकता है।
2. **पाठ्यक्रम की विविधता के अनुरूप विद्यालयों के चयन में सहायता करना** - वर्तमान समय में पाठ्यक्रम की विविधता के अनुरूप विभिन्न प्रकार के विद्यालयों की स्थापना की गयी है- जैसे बहुउद्देशीय विद्यालय, कृषि विद्यालय, चिकित्सा विद्यालय, व्यावसायिक विद्यालय इत्यादि। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थियों की रुचि और उनकी बौद्धिक मानसिक योग्यता के अनुरूप उन्हें विद्यालयों के चयन में सहायता दी जाती है। विद्यार्थी शैक्षिक निर्देशन के द्वारा अपनी रुचि के अनुरूप विद्यालय का चयन कर सकता है तथा अपनी प्रतिभा को निखार सकता है।
3. **विद्यालय के प्रवेश नियमों को समझने में सहायता करना** - विभिन्न विद्यालयों में प्रवेश के लिए अनेक प्रकार की प्रवेश परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इन प्रवेश परीक्षाओं के अनेक प्रकार होते हैं तथा प्रत्येक प्रवेश परीक्षा की अपनी कुछ तकनीकी औपचारिकताएं होती हैं, जिनमें विद्यार्थी प्रायः गलती कर जाते हैं तथा योग्यता होते हुए भी उस परीक्षा को उत्तीर्ण नहीं कर पाते। शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से हम विद्यार्थी को औपचारिकताएं, नियम तथा परीक्षा हेतु तकनीकी रूप से समृद्ध कर देते हैं जिससे वे प्रवेश के नियमों को भली भाँति समझकर सफल हो जाते हैं।
4. **व्यवहारगत समस्याओं के समाधान के लिए** - विद्यार्थी को कक्षा में तथा कक्षा के बाहर अपने अनेक साथियों, अध्यापकों तथा कर्मचारियों से व्यवहार करना पड़ता है। कभी-कभी परिस्थिति विशेष के कारण अथवा विपरीत मनोदशा के कारण उसके स्वभाव में नकारात्मकता आ जाती है। यह नकारात्मकता कभी-कभी गम्भीर समस्या का रूप धारण कर लेती है। उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी की इन व्यवहारगत समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

5. **अभिव्यक्ति क्षमता का विकास करने के लिए** - शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी स्वयं को मौखिक तथा लिखित दोनों ही प्रकार से अभिव्यक्त करना सीख जाता है तथा समाज के निर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने लगता है।
6. **अनुशासन स्थापना में सहायक** - अनुशासनहीनता आज के विद्यालयों का अभिन्न अंग बन गयी है। इसका एक प्रमुख कारण समुचित शैक्षिक निर्देशन का अभाव है। जिन विद्यालयों में शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से विद्यार्थी को अनुशासित किया जाता है, वहाँ अनुशासनहीनता की समस्या प्रायः बहुत कम होती है।

### 2.5 व्यावसायिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा

जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं कि मानव स्वयं को जीव जगत का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता है। अतः उसे अन्य किसी भी प्राणी की अपेक्षा विशेष प्रशिक्षण की अत्यधिक आवश्यकता होती है। अपने से अधिक योग्य एवं सक्षम व्यक्ति के द्वारा कठिन परिस्थितियों में उचित मार्गदर्शन निर्देशन के अन्तर्गत आता है किन्तु यही निर्देशन जब व्यक्ति के भीतर छिपी हुयी किसी मेधा एवं सामर्थ्य को खोजकर उसके उचित एवं श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिये प्रदान किया जाता है तथा व्यक्ति उससे जीवन निर्वाह के साथ-साथ आत्मसन्तोष भी प्राप्त करता है तब यह व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है।

#### व्यावसायिक निर्देशन का अर्थ

व्यावसायिक निर्देशन किसी भी छात्र के भावी जीवन से सम्बन्धित है। वस्तुतः आधुनिक परिप्रेक्ष्य में किसी भी छात्र के शिक्षा ग्रहण करने का उद्देश्य अन्ततः जीविकोपार्जन की तैयारी करना होता है। वर्तमान में तो शिक्षा की इतनी शाखायें, व्यवसाय के इतने क्षेत्र तथा अनेक प्रकार के विज्ञापन शैक्षिक क्षेत्र में हैं कि छात्र दिग्भ्रमित हो जाता है। वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि किसका चयन करे और किसका नहीं।

जब से मानव को संसाधन मानने का प्रत्यय आरम्भ हुआ है, तब से प्रायः व्यावसायिक निर्देशन का अर्थ यह लगाया जाता है कि इसके माध्यम से व्यक्ति उपयुक्त व्यवसाय का चयन कर सकता है; जबकि व्यावसायिक निर्देशन स्वयं में इससे अधिक व्यापक अर्थ को संजोये हुए है।

वस्तुतः व्यावसायिक निर्देशन प्रारम्भ में निर्देशन से ही सम्बन्धित था। 1932 ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका में व्हाइट हाउस में बाल स्वास्थ्य एवं सुरक्षा विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित किया गया था – “व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति को व्यवसाय के चुनाव, उसके लिये तैयार होने, उसमें लगने एवं उन्नत करने में सहायता करने वाली प्रक्रिया है”

#### व्यावसायिक निर्देशन की परिभाषा Definition of Vocational Guidance

व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करने के लिए हमें कतिपय विद्वानों को उद्धृत करना होगा। किन्तु उससे भी पहले यहां पर हम National Vocational Guidance Association U.S.A. द्वारा 1987 में दी गयी परिभाषा को उद्धृत करेंगे।

“Vocational guidance is the process of assisting the individual to choose an occupation, prepare for it, enter upon and progress in it.”

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि “व्यावसायिक निर्देशन किसी व्यक्ति विशेष को दी जाने वाली वह सहायता है जिसके माध्यम से वह व्यवसाय के चयन एवं विकास से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करता है एवं अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं को बनाये रखते हुए व्यवसाय से सम्बन्धित अवसरों को प्राप्त करने का प्रयास करता है”

“व्यावसायिक निर्देशन व्यक्तियों के गुणों एवं व्यवसाय के अवसरों के साथ उनके सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति को व्यवसाय के वरण एवं उसकी प्रगति में आने वाली समस्याओं के सुलझाने में प्रदान की जाने वाली सहायता को कहते हैं”

**डोनाल्ड सुपर** “किसी व्यक्ति को अपने एवं व्यवसाय जगत के बीच अपनी भूमिका का संपर्याप्त चित्र बनाने एवं उसे स्वीकारने, वास्तविक स्थिति के बीच इस अवधारणा की जांच करने एवं उसे स्वयं के संतोष एवं समाज के लाभ हेतु वास्तविकता में बदलने की सहायता प्रदान करने को व्यावसायिक निर्देशन कहते हैं”

**मेसर्स** “शैक्षिक निर्देशन किसी व्यक्ति को व्यवसाय में समायोजन करने, मानव शक्ति का प्रभावी उपयोग करने में सहायता करने वाली तथा समाज के आर्थिक विकास को सुगम बनाने वाली एक प्रक्रिया है”

**क्रो एण्ड क्रो** “व्यावसायिक निर्देशन की व्याख्या सामान्यतः शिक्षार्थी को व्यवसाय का चयन, तैयारी, एवं विकास करने वाली प्रक्रिया के रूप में की जाती है”

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए हम कह सकते हैं कि “व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति को अपनी रुचि, योग्यता, आवश्यकता एवं सामर्थ्य के अनुसार व्यवसाय का चयन करने में सहायता करने से आरम्भ होता है तथा व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त समस्याओं के समाधान, व्यवसाय, व्यवसायगत परिवर्तन एवं व्यवसाय से सम्बन्धित प्रत्येक कार्य में सहायता पर्यन्त चलता रहता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि निर्देशन का वह प्रकार जो किसी भी रूप में व्यवसाय से सम्बन्धित है, व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है”

### 2.5.1 व्यावसायिक निर्देशन का महत्त्व

व्यावसायिक निर्देशन, जैसा कि परिभाषा से स्पष्ट है, व्यवसाय के चयन से आरम्भ होता हुआ व्यवसाय के प्रत्येक चरण एवं घटनाक्रम में आवश्यक है। आज के भौतिकतावादी एवं तकनीकी युग

में व्यवसाय ने ऐसे-ऐसे क्षेत्रों में अपने पाँव पसार लिये हैं जिनके बारे में कुछ समय पूर्व तक कल्पना करना भी असम्भव था। आज व्यवसाय का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि उसने धर्म, आध्यात्म और व्यक्तियों के नितान्त व्यक्तिगत जीवन को भी नहीं छोड़ा। पश्चिमी देशों सहित भारत ने भी मानव को संसाधन बनाकर आग में घी डालने का कार्य किया है। ज्यो-ज्यो व्यावसायिकता अपने पाँव पसार रही है त्यों-त्यों व्यवसायों से सम्बन्धित जटिलतायें भी बढ़ती जा रही हैं। एक ओर व्यवसायों की संख्या बढ़ने के कारण अवसरों में प्रचुरता आयी है, दूसरी ओर तकनीकी के अत्यधिक विकास ने प्रत्येक व्यवसाय में जोखिम की मात्रा भी अत्यधिक बढ़ा दी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में निर्देशन के अभाव में व्यक्ति गलत व्यवसाय का चयन कर सकता है तथा उसमें असफल होने के कारण अवसाद का शिकार हो सकता है। ऐसी परिस्थितियाँ तथाकथित मानव रूपी संसाधनों के विकास में बाधक ही बनेंगी। अतः आज व्यावसायिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व पहले की अपेक्षा अत्यधिक बढ़ गया है। व्यावसायिक निर्देशन के महत्त्व की सीमित समय में विषद् चर्चा करना असम्भव है। अतः यहां हम व्यावसायिक निर्देशन के महत्त्व से सम्बन्धित कुछ महत्त्व पूर्ण बिन्दुओं पर संक्षेप में चर्चा करेंगे-

1. **व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार व्यवसाय के चयन में सहायक** -भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न भिन्न प्रकार के व्यक्तिगत गुण पाये जाते हैं, जैसे व्यक्तियों में सहनशीलता, धैर्य, वाक्कुशलता, बाहरी आकर्षक व्यक्तित्व आदि। यदि व्यक्ति को उसके व्यक्तिगत गुणों के अनुरूप व्यवसाय चयन में उपयुक्त निर्देशन दिया जाये तो वह अन्य व्यवसायों की अपेक्षाकृत अच्छा प्रदर्शन करेगा। उदाहरण के लिये यदि किसी व्यक्ति में समय प्रबन्धन की क्षमता अच्छी है तो वह किसी भी कम्पनी के लिये अच्छा प्रबन्धक साबित हो सकता है। प्रबन्धक के अन्य गुणों का विकास वह व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा कर लेगा।
2. **व्यवसायों की अनेकरूपता के कारण आवश्यक** -तकनीक के विकास के कारण आज व्यवसायों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। आज विशेषीकरण का युग है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यवसायगत बारीकियों के कारण विशेषज्ञता अनिवार्य हो गयी है। अतः बिना उपयुक्त व्यावसायिक निर्देशन के अपनी अपेक्षाओं और सामर्थ्य के अनुकूल व्यवसाय का चयन करना असम्भव कार्य है। साथ ही व्यवसाय के चयन के उपरान्त किसी भी व्यवसाय में सफलता के लिये भी व्यावसायिक निर्देशन अत्यावश्यक है।
3. **व्यवसाय एवं व्यक्ति की प्रकृति में समानता की खोज** -प्रत्येक व्यवसाय प्रत्येक व्यक्ति के लिये नहीं बना। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि कोई व्यक्ति किसी व्यवसाय विशेष में ही सफल हो सकता है क्योंकि जब तक व्यवसाय एवं व्यक्ति की प्रकृति समान नहीं होगी, तब तक व्यक्ति को सम्बन्धित व्यवसाय में सफलता नहीं मिलेगी। उदाहरण के लिये शिक्षण का व्यवसाय करने वाले व्यक्ति में वक्तृत्व कला (बोलने की कला) एवं अध्ययनशीलता का गुण होना अनिवार्य है। इसी प्रकार तकनीकी रुचि रखने वाले विद्यार्थी

को इंजीनियरिंग का व्यवसाय अपनाना चाहिये। समान प्रकृति के व्यक्ति एवं व्यवसाय को खोजने का काम व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।

4. **व्यक्ति की रुचि एवं क्षमता के अनुरूप व्यवसाय का चयन** -जैसा कि हम ऊपर भी कह चुके हैं, प्रत्येक व्यक्ति किसी भी व्यवसाय में सफल हो जाये यह आवश्यक नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रुचि एवं क्षमता के अनुरूप व्यवसाय का चयन करना अनिवार्य होता है। उदाहरण के लिये शिक्षण कार्य (व्यवसाय के लिये) करने वाले व्यक्ति की प्रकृति बहिर्मुखी होनी चाहिये। किन्तु केवल बहिर्मुखी प्रकृति का स्वामी शिक्षण व्यवसाय में सफलता प्राप्त कर ले यह अनिवार्य नहीं है। अपितु उस व्यक्ति में शिक्षक बनने की क्षमता भी होनी चाहिये। इतना ही नहीं शिक्षण व्यवसाय के प्रति रुचि का अभाव भी व्यक्ति को शिक्षण व्यवसाय में सफल होने से वंचित कर देगा। अतः व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से हमें व्यक्ति को उसकी क्षमता एवं रुचि के अनुरूप व्यवसाय चयन करने का अवसर मिलता है।
5. **आत्म संतुष्टि** - युवा वर्ग प्रायः आकर्षक वेतन को आधार बनाकर ही व्यवसाय का चयन कर लेते हैं। निश्चित रूप से वे भरपूर वेतन भी प्राप्त करते हैं। किन्तु अपने व्यवसाय से असंतुष्ट होने के कारण वे कभी भी स्वयं को सुखी अनुभव नहीं करते और अन्ततः अवसाद के शिकार हो जाते हैं। किसी भी व्यवसाय में आर्थिक सम्पन्नता, सामाजिक प्रतिष्ठा एवं संसाधनों की प्रचुरता के साथ-साथ आत्मसंतुष्टि का होना भी अनिवार्य है। यही आत्मसंतुष्टि का भाव अवसाद से हमारी रक्षा करता है। हमें किस व्यवसाय में आत्मसंतुष्टि मिलेगी यह केवल व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।
6. **संसाधनों का अधिकतम उपयोग** -किसी भी व्यवसाय में सफलता का महत्त्व पूर्ण सूत्र है सीमित संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना। किसी भी व्यवसाय में संसाधनों पर किया गया व्यय बाद में आय का स्रोत बनता है। अतः व्यवसाय विशेष के लिये एकत्र किये गये संसाधन जितने अधिक प्रयुक्त होंगे, उतना ही अधिक लाभ अमुक व्यवसाय से होगा। सीमित संसाधनों के अधिकतम उपयोग की तकनीक व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। समुचित व्यावसायिक निर्देशन प्राप्त व्यक्ति व्यवसाय विशेष के प्रमुख संसाधनों जैसे समय, श्रम, पूंजी, भूमि आदि का अधिकतम उपयोग करना सीख जाता है। इस प्रकार वह अपने व्यवसाय में सफलता प्राप्त करता है।
7. **तकनीकी उपयोग**- वर्तमान युग जटिलता एवं प्रतिस्पर्धा का युग है। इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में जटिलताओं का एक महत्त्व पूर्ण कारण तकनीकी विकास भी है। अधिकांश व्यवसाय किसी न किसी तकनीकी से सम्बन्धित होते हैं तथा तकनीकी ज्ञान के अभाव में पिछड़ने का भय सदैव बना रहता है। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम प्रशिक्षणार्थी को तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराते हैं जिससे वह अपने व्यवसाय से सम्बन्धित तकनीकी का अधिकतम एवं समुचित उपयोग कर सके। इस प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से तकनीकी का उपयोग एवं तकनीकी ज्ञान के माध्यम से व्यवसाय विशेष में सफलता का मार्ग खुलता है।

8. **यन्त्रीकरण के कारण आवश्यक** -अनेक विद्वानों की मान्यता है कि वर्तमान युग को कलयुग कहने का कारण 'कल' (मशीन अथवा यन्त्र) का अधिकतम उपयोग है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि यह युग मशीनों का युग है। मानव समाज निरन्तर यन्त्रों पर अधिक से अधिक आश्रित होता जा रहा है। हमारी लगभग प्रत्येक क्रिया यन्त्रों के बिना अपेक्षाकृत कठिन प्रतीत होती है। किसी भी दूसरे क्षेत्र की ही भांति व्यावसायिक क्षेत्र में अत्यधिक यन्त्रीकरण हुआ है। विविध यन्त्रों का समुचित उपयोग जाने बिना कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसाय में कैसे सफल हो सकता है? व्यावसायिक निर्देशन हमें यन्त्रों का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कराता है। व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से हम यन्त्रों का प्रयोग करके सफलता की दिशा में तेजी से आगे बढ़ जाते हैं।
9. **परिस्थिति परिवर्तन में सहायक** -एक कहावत है कि मनुष्य परिस्थितियों का दास है। किन्तु व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा इस कहावत को उल्टा किया जा सकता है। व्यावसायिक निर्देशन हमारे अन्दर उस क्षमता का विकास कर देता है कि विपरीत परिस्थितियों को भी हम अपने अनुकूल बना सकते हैं। एक उदाहरण के द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की जा सकती है

—  
एक बार कागज बनाने वाली एक बड़ी कम्पनी में श्रमिकों की गलती के कारण कागज बनाने की सारी प्रक्रिया का पालन न हो सका। भूलवश श्रमिक बने हुए कागज को बिना चिकना किये ही पैक कर गये। विपणन (बिक्री) के लिए पहुंचने पर इस भूल का पता लगा और कम्पनी के सामने करोड़ों रुपये के घाटे की समस्या खड़ी हो गयी। किन्तु कम्पनी के प्रबन्धक ने विशेषज्ञों से विचार किया और इस समय ब्लॉटिंग पेपर (स्याही सोखता) अस्तित्व में आया। इस प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम हानि को लाभ में बदल सकते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा विपरीत परिस्थितियों को अनुकूल परिस्थितियों में बदला जा सकता है।

### 2.5.2 व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्य

लेखक के मतानुसार व्यावसायिक निर्देशन के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं-

1. **विद्यार्थी को विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराना**- व्यावसायिक निर्देशन का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थी को विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराना है। व्यावसायिक निर्देशन विद्यार्थियों को अनेक प्रकार के व्यवसायों से परिचित कराता है जिससे वे अपनी व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखकर व्यवसायों का चुनाव कर सकें।
2. **विद्यार्थी को विभिन्न व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों की जानकारी देना** -निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के संस्थानों व प्रशिक्षण केन्द्रों से परिचित होता है जिससे उसे अच्छे प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में जानकारी मिलती है तथा वह उनके गुण-दोषों से परिचित हो पाता है और उपयुक्त प्रशिक्षण संस्थान का चुनाव कर पाता है। किसी भी विद्यार्थी का भविष्य उसके व्यावसायिक प्रशिक्षण पर निर्भर है। यदि वह किसी अच्छे संस्थान से जुड़ता

है तो उसकी उपलब्धि एवं प्रदर्शन पर इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ता है और वह उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर होता है। अतः व्यावसायिक निर्देशन छात्रों के उज्ज्वल भविष्य के लिए अत्यावश्यक है।

3. **विद्यार्थी में व्यवसाय के अनुकूल वैयक्तिक गुणों का विकास करना** -प्रत्येक प्रकार के व्यवसाय के लिए व्यक्ति में कुछ निश्चित वैयक्तिक गुणों का होना आवश्यक है। जैसे एक कुशल अध्यापक को एक कुशल वक्ता होना जरूरी है। इसी प्रकार एक प्रबन्धक में समय समायोजन की क्षमता होनी चाहिये। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में इन्हीं वैयक्तिक गुणों का विकास किया जाता है।
4. **व्यवसाय चयन के बाद विद्यार्थी में व्यवसाय के साथ अनुकूलन का विकास करना** - व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यवसाय का चयन करने के उपरान्त किसी भी व्यक्ति की सबसे बड़ी अपेक्षा यह होती है कि उसमें वे सभी गुण हों जो व्यवसाय के लिये आवश्यक हैं। यद्यपि किसी भी विद्यार्थी को व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा उसी व्यवसाय का चयन करने की सलाह दी जाती है जिससे सम्बन्धित योग्यतायें या गुण उसमें पहले से ही मौजूद होते हैं। लेकिन यह भी आवश्यक नहीं है कि व्यवसाय से सम्बन्धित प्रत्येक गुण उसमें हो। कुछ गुण उसमें पहले से हो सकते हैं जबकि कुछ का विकास व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा करके उसमें व्यवसाय के प्रति अनुकूलता विकसित की जाती है। जैसे - यदि कोई अध्यापक कुशल वक्ता तो है लेकिन वह समय का पाबन्द नहीं है और वह प्रक्रम (Period) में समय से नहीं पहुंच पाता तब उसके इस योग्यता और ज्ञान का लाभ तो विद्यार्थियों को नहीं मिल पाता जिसके आधार पर उसका चयन किया गया। तब व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा उसमें व्यवसाय के अनुरूप गुणों का विकास किया जाता है।
5. **व्यवसाय के प्रति ईमानदारी, समर्पण एवं रुचि का विकास करना** -व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में न केवल व्यावसायिक गुणों को विकसित किया जाता है बल्कि व्यक्ति में व्यवसाय के प्रति ईमानदारी, समर्पण एवं रुचि का भाव भी विकसित किया जाता है क्योंकि इन तीनों के बिना कोई भी व्यक्ति अपने व्यावसायिक क्षेत्र में उच्चतम सीमा पर नहीं पहुंच सकता। जैसे यदि किसी प्रबन्धक को प्रबन्धन के सभी अंगों - नियोजन, संगठन, प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का तो पूर्णरूपेण ज्ञान है लेकिन जिस कम्पनी में वह कार्य कर रहा है उसकी उन्नति में उसे कोई रुचि नहीं है, उसके प्रति उसमें समर्पण का भाव नहीं है, तो वह अपने इन गुणों का उपयोग उसकी उन्नति में नहीं करेगा और कम्पनी उसके इस कौशल से वंचित रह जायेगी। अतः व्यावसायिक निर्देशन विद्यार्थी में इन सभी भावनाओं का विकास करता है जिससे प्रत्येक व्यवसाय में प्रत्येक व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण क्षमताओं का प्रयोग करके उसे उच्च से उच्चतर क्रम पर ले जाये।
6. **आत्मसंतोष प्राप्त करना** -व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में सभी प्रकार के गुणों का विकास होता है। उसमें अनेक प्रकार के व्यावसायिक गुणों का विकास हो जाता है। उसमें

सभी प्रकार की व्यावसायिक रुचियों का विकास हो जाता है जिससे वह अपनी सम्पूर्ण क्षमता का प्रयोग करता है और जब वह ऐसा करता है तो उसके अनुकूल परिणाम उसे प्राप्त होते हैं जिससे उसे आत्मसंतोष की प्राप्ति होती है।

पिछले पृष्ठों में हमने निर्देशन के मुख्य रूप से 9 प्रकारों के बारे में जाना जिनमें से हमने अपनी आवश्यकताओं के कारण शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन पर विस्तृत चर्चा की। (यद्यपि पैट्रसन ने निर्देशन के 5 प्रकार बताते हुए वैयक्तिक निर्देशन को भी एक प्रकार माना है) लेखक के मतानुसार निर्देशन के पूर्वोक्त सभी प्रकारों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से दिया जा सकता है। आगे की पंक्तियों में हम शैक्षिक निर्देशन के व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

## 2.6 व्यक्तिगत निर्देशन : अर्थ

यद्यपि पैट्रसन ने निर्देशन के प्रकारों का वर्गीकरण करते हुए व्यक्तिगत निर्देशन को निर्देशन के मुख्य 5 प्रकारों में सम्मिलित किया है (पृ0सं0 4) पैट्रसन ने व्यक्तिगत निर्देशन को अत्यधिक महत्त्व देते हुए सामाजिक निर्देशन, मनोवेगों से सम्बन्धित निर्देशन तथा अवकाश के समय का सदुपयोग से सम्बन्धित निर्देशन को व्यक्तिगत निर्देशन में सम्मिलित किया है किन्तु लेखक की मान्यता है कि उपरोक्त तीनों कार्यों के अतिरिक्त मनुष्य की अन्य गतिविधियों के लिए अथवा पूर्वोक्त सभी 9 प्रकार के निर्देशन व्यक्तिगत रूप से दिये जा सकते हैं इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि व्यक्तिगत निर्देशन निर्देशन का मुख्य प्रकार न होकर निर्देशन का गौण प्रकार है तथा शैक्षिक, व्यावसायिक आदि निर्देशन के सभी प्रकारों में यह सम्मिलित है। यहाँ पर हम व्यक्तिगत रूप से दिये जाने वाले शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन तथा पैट्रसन के अनुसार व्यक्तिगत निर्देशन के अन्तर्गत आने वाले सामाजिक, मनोवेगात्मक एवं अवकाश सम्बन्धी निर्देशन पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

### व्यक्तिगत निर्देशन का अर्थ

व्यक्तिगत निर्देशन अथवा वैयक्तिक निर्देशन को हम दो प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं प्रथमतः किसी भी प्रकार का निर्देशन जब किसी व्यक्ति विशेष को अकेले में प्रदान किया जाता है तब उस निर्देशन को हम व्यक्तिगत निर्देशन कहते हैं।

पैट्रसन के विचारानुसार व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए जो निर्देशन प्रदान करते हैं उसे व्यक्तिगत या वैयक्तिक निर्देशन कहते हैं चाहे वह सामूहिक रूप से क्यों नहीं दिया जा रहा है।

### 2.6.1 व्यक्तिगत निर्देशन के प्रकार

उपरोक्त परिभाषाओं को आधार बनाकर हम व्यक्तिगत निर्देशन के दो प्रकार निर्धारित कर सकते हैं:-

1. व्यक्तिगत रूप से प्रदान किया जाने वाला निर्देशन।

2. व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए प्रदान किया जाने वाला निर्देशन।

यहाँ हम पुनः स्पष्ट कर दें कि व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिये दिया जाने वाला निर्देशन सामूहिक रूप से भी प्रदान किया जा सकता है।

### 2.6.2 व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व

हमें निम्नांकित कारणों से व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है-

1. **व्यक्ति विशेष की आवश्यकता को समझने के लिए** -व्यक्तिगत निर्देशन व्यक्ति विशेष की आवश्यकता को समझने के लिए अति महत्त्व पूर्ण है। व्यक्ति विशेष को किस प्रकार की परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है, तथा उसे इन परिस्थितियों में किस प्रकार के निर्देशन की आवश्यकता है यह दोनों बातें व्यक्तिगत निर्देशन के माध्यम से ही समझी जा सकती हैं।
2. **व्यक्ति विशेष की समस्याओं के निजी रूप से समाधान के लिए** - व्यक्ति की अनेक समस्याएँ इस प्रकार की होती हैं जिनका समाधान समूह के साथ नहीं हो सकता ऐसी स्थिति में भी व्यक्ति को वैयक्तिक निर्देशन की आवश्यकता होती है जिससे वह समस्याओं का निजी समाधान प्राप्त कर सके।
3. **व्यक्तिगत गोपनीयता के लिए** - हम जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति का निजी जीवन होता है तथा उसकी अनेक समस्याएँ भी गोपनीय होती हैं अतः उसकी समस्याओं एवं उनके समाधान को गोपनीय बनाये रखने के लिए व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता होती है।

### व्यक्तिगत निर्देशन का महत्त्व

व्यक्तिगत निर्देशन के महत्त्व को हम निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत स्पष्ट करेंगे-

1. **समस्या का तुरन्त समाधान** -समस्या का तुरन्त समाधान करने के लिए व्यक्तिगत निर्देशन अत्यन्त महत्त्व पूर्ण है इसमें व्यक्ति अपने निर्देशक से सीधे सम्पर्क करके अपनी समस्या का त्वरित समाधान प्राप्त कर सकता है।
2. **समस्या का पूर्ण समाधान** -व्यक्ति की समस्या का पूर्ण समाधान व्यक्तिगत निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है। इसमें व्यक्ति एवं निर्देशक के बीच में कोई बाधा नहीं होती और वह अपनी निजी बातें भी निर्देशक के समक्ष निःसंकोच रख देता है तथा अपनी समस्या का समाधान हो जाने तक निरन्तर निर्देशन प्राप्त कर सकता है।
3. **गोपनीयता** - व्यक्तिगत निर्देशन ही गोपनीयता बनाये रखने की एकमात्र गारन्टी दे सकता है इसमें निर्देशक और उपबोध्य के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति न होने के कारण उपबोध्य अपनी अत्यन्त निजी बातों को भी निर्देशक के समक्ष निःसंकोच रख देता है और वह अपनी समस्या का सही समाधान पाने के साथ-साथ उसे गोपनीय बनाये रखने में सफल होता है।

### 2.6.3 व्यक्तिगत निर्देशन के उद्देश्य

निम्नांकित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर व्यक्तिगत निर्देशन दिया जाना चाहिए-

- व्यक्ति के पारिवारिक समायोजन के लिए** - समाज व्यक्तियों के समूह से मिलकर बना है एक व्यक्ति समाज की ही तरह परिवार की भी एक इकाई होती है परिवार में समायोजन किये बिना वह समाज में समायोजन नहीं कर सकता अतः व्यक्तिगत निर्देशन का पहला महत्त्व पूर्ण उद्देश्य पारिवारिक समायोजन है।
- व्यक्ति के सामाजिक समायोजन के लिए** - समाज में कुसमायोजित व्यक्ति सामाजिक विध्वंस के लिए उत्तरदायी होता है अतः व्यक्तिगत निर्देशन का दूसरा महत्त्व पूर्ण उद्देश्य व्यक्ति का सामाजिक समायोजन करना है।
- व्यक्ति की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति**- प्रत्येक व्यक्ति की शैक्षिक आवश्यकतायें अन्य व्यक्तियों से भिन्न होती है अतः व्यक्तिगत निर्देशन के द्वारा उसकी शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है।

### 2.7 सामूहिक निर्देशन: अर्थ एवं परिभाषा

यद्यपि इलाहाबाद स्थित Bureau of Psychology ने निर्देशन के प्रकार बताते हुए समूह निर्देशन को इसके मुख्य प्रकारों में गिना है किन्तु लेखक के मतानुसार व्यक्तिगत निर्देशन की तरह ही सामूहिक निर्देशन भी निर्देशन का एक गौण प्रकार है तथा यह निर्देशन के सभी मुख्य प्रकारों में सम्मिलित है।

#### सामूहिक निर्देशन का अर्थ

निर्देशन की पूर्वोक्त परिभाषा के आधार पर हम कह सकते हैं कि निर्देशन चाहे वह किसी भी प्रकार क्यों न हो यदि समूह में दिया जा रहा है तो वह सामूहिक निर्देशन की श्रेणी में आता है।

#### सामूहिक निर्देशन की परिभाषा

इस पुस्तक के लेखक के मतानुसार वे सभी समस्याएँ जो सामूहिक रूप से समाधान के योग्य होती हैं उनके लिए दिया जाने वाला निर्देशन तथा व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए समूह में दिया जाने वाला निर्देशन सामूहिक निर्देशन कहलाता है।

#### 2.7.1 सामूहिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व

निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व को हम निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट करेंगे -

- समय, श्रम एवं धन की बचत** - भारत जैसे देश में जहाँ संसाधनों का नितान्त अभाव होते हुए भी हमारी महत्वाकांक्षायें विश्व के सफल राष्ट्रों से होड़ लेने की हैं, सामूहिक निर्देशन अत्यन्त, महत्त्व पूर्ण हो जाता है। व्यक्तिगत निर्देशन में जहाँ हम एक-एक व्यक्ति को अलग-

अलग निर्देशन प्रदान करते हैं वही सामूहिक निर्देशन में अनेक व्यक्तियों को एक साथ बैठाकर निर्देशन प्रदान करने से समय, श्रम एवं शक्ति की पर्याप्त बचत कर लेते हैं।

- ii. **विद्यार्थी के सामान्य व्यवहार को सुधारने में सहायक** -निर्देशन प्राप्त करते समय व्यक्ति प्रायः अकेला होने के कारण असामान्य अनुभव करता है तथा अनेक सूचनाओं को देने में सकुचाता है। सामूहिक निर्देशन में अपने समूह के साथ होने के कारण उसका व्यवहार अपेक्षाकृत सामान्य रहता है तथा किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत सूचनायें दिये बिना निर्देशन प्राप्त कर लेता है।
- iii. **नये व्यक्ति (उपबोध्य) को निर्देशन प्रदान करने में सरलता** -निर्देशन की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है व्यक्तिगत निर्देशन में व्यक्ति इसे बहुत देर से समझता है। जबकि सामूहिक निर्देशन में नया व्यक्ति भी अपने पुराने साथियों की सहायता से सरलतापूर्वक समझ लेता है।
- iv. **सामाजीकरण में सहायक** -सामूहिक रूप से निर्देशन प्राप्त करने की प्रक्रिया में बालक को बार-बार अपने साथियों के साथ अन्तः क्रिया करनी पड़ती है। सहज और सामान्य रूप से चलने वाली यह प्रक्रिया बालक के सामाजीकरण में सहायता करती है।
- v. **दूसरे के अनुभवों से लाभ उठाने में सहायक** -सामूहिक निर्देशन की प्रक्रिया में व्यक्ति अनेक बातें अपने साथ निर्देशन प्राप्त कर रहे लोगों के साथ बाँटता है परस्पर अनुभव बाँटने की इस प्रक्रिया में व्यक्ति जिन अनुभवों को अपने योग्य समझता है उन अनुभवों का प्रयोग करता है तथा निर्देशन प्रक्रिया के द्वारा उनमें आवश्यकतानुसार संशोधन भी कर लेता है अतः सामूहिक निर्देशन की प्रक्रिया दूसरों के अनुभवों से लाभ लेने में सहायता करती है।

### 2.7.2 समूह निर्देशन के उद्देश्य

सामूहिक निर्देशन के विभिन्न उद्देश्य निम्नवत् निर्धारित किए जा सकते हैं-

- i. **सामान्य समस्याओं का समाधान** - बालक की समस्याएँ दो प्रकार की हो सकती हैं- सामान्य एवं विशिष्ट। उसकी सामान्य समस्याओं का समाधान करना सामूहिक निर्देशन का प्रमुख उद्देश्य है।
- ii. **सामाजिक तथा राज्य सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करना**- व्यक्ति की सामाजिक तथा राज्य सम्बन्धी अनेक समस्याएँ ऐसी होती हैं जो प्रायः प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक सी होती हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए यदि व्यक्तिगत रूप से निर्देशन दिया जाये तो इस प्रक्रिया में बहुत समय लग जाता है। अतः बालक की राज्य तथा समाज सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करना सामूहिक निर्देशन का उद्देश्य है।
- iii. **समूह में रहते हुए व्यक्ति की गतिविधियों का निरीक्षण करना** -प्रत्येक व्यक्ति समूह में रहते हुए जो व्यवहार करता है वह बहुत कुछ उसके व्यक्तित्व तथा उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं का परिचय देता है। उसके व्यवहार का निरीक्षण करके यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि उसमें सामाजिकता के लक्षण विद्यमान हैं या नहीं तथा सामाजिकता की भावना विकसित

करने के लिए हमें उसे किस प्रकार का निर्देशन देना होगा इन सबके लिए समूह में रहते हुए व्यक्ति की गतिविधियों का निरीक्षण करना सामूहिक निर्देशन का एक प्रमुख उद्देश्य है।

- iv. **व्यक्तिगत निर्देशन के लिए सुपात्र ढूंढना**-यद्यपि सामूहिक निर्देशन में व्यक्ति समूह के व्यवहार के अनुरूप व्यवहार करता है तथापि उपबोधक को उपबोध्य की व्यक्तिगत विशेषताओं का अनुमान समूह में व्यक्ति की गतिविधियों को देखकर ही हो जाता है। तथा वह व्यक्तिगत निर्देशन के लिए सुपात्र चुन लेता है।
- v. **व्यक्तिगत निर्देशन के लिए पृष्ठभूमि तैयार करना**- सामूहिक निर्देशन से न केवल एक बड़े समूह को निर्देशन प्राप्त होता है बल्कि यह व्यक्तिगत निर्देशन के लिए पृष्ठभूमि भी तैयार करता है। जब व्यक्ति सामूहिक रूप से निर्देशन प्राप्त करता है तो उसकी न केवल निर्देशन सम्बन्धी भ्रान्तियां दूर होती हैं बल्कि उसे यह भी ज्ञात होता है कि उसकी किन समस्याओं का समाधान व्यक्तिगत निर्देशन के माध्यम से हो सकता है। साथ ही साथ निर्देशक भी इस बात से भली-भांति परिचित हो जाता है कि सामूहिक निर्देशन की किन कठिनाइयों को व्यक्तिगत निर्देशन के माध्यम से सुलझाया जा सकता है।

## 2.8 सारांश

जटिल एवं तकनीकी युग ने प्राणी जगत में निर्देशन की आवश्यकता को अत्याधिक बढ़ा दिया है। निर्देशन स्वयं के अनुभवों का प्रयोग दूसरों की सहायता के लिये करना है। आदिकाल से चले आ रहे इस निर्देशन को विभिन्न विद्वानों ने अपनी-अपनी तरह से परिभाषित भी किया है। अतः हम कह सकते हैं कि जब अभ्यर्थी स्वयं के अनुभवों के द्वारा अपने विद्यार्थी की सहायता उसके शैक्षिक समस्याओं का समाधान करने में करता है तब यह प्रक्रिया शैक्षिक निर्देशन कहलाती है। शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता व्यक्ति को पग-पग पर पड़ती है चाहे वह विषयों का चयन हो, विद्यालय में अनुशासन की स्थापना हो अथवा विद्यार्थी के सीखने की गति को तेज करना हो। इतना ही नहीं विद्यार्थी अपने लिये अध्ययन सामग्री, पाठ्य पुस्तक एवं अध्ययन विधि का चुनाव भी शैक्षिक निर्देशन के द्वारा करते हैं। शैक्षिक निर्देशन से विद्यार्थी आत्मज्ञान प्राप्त करता है तथा शैक्षिक निर्देशन विद्यार्थी की व्यावहारिक समस्याओं का समाधान भी करता है। इस प्रकार शैक्षिक निर्देशन के द्वारा प्रतिभाओं का समुचित उपयोग होता है।

शैक्षिक निर्देशन की ही भांति व्यावसायिक निर्देशन भी एक प्रकार का निर्देशन है जो हमें विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराता है। व्यवसायों के बारे में जानकारी देना, व्यवसाय का चयन कराना तथा व्यवसाय की प्रगति में आने वाली बाधाओं को दूर करना जिस मार्गदर्शन के द्वारा संभव होता है, मार्गदर्शन का वह प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के नाम से जाना जाता है। विभिन्न विद्वानों ने व्यावसायिक निर्देशन की भिन्न-भिन्न परिभाषाएं दी हैं। व्यावसायिक निर्देशन व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त प्रकार की समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है। व्यावसायिक निर्देशन हमें

अपने स्वभाव के अनुसार व्यवसाय का चयन करने में सहायता करता है। इतना ही नहीं व्यावसायिक निर्देशन हमें अपने व्यवसाय में सन्तुष्ट रहना सिखाता है। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम उपलब्ध संसाधनों एवं तकनीकी का उपयोग कर सकते हैं। उदाहरणों ने यह सिद्ध किया है कि व्यावसायिक निर्देशन विपरीत परिस्थितियों को अनुकूल परिस्थितियों में परिवर्तित कर सकता है। व्यावसायिक निर्देशन से हम विभिन्न व्यवसायों की जानकारी प्राप्त करते हैं। विद्यार्थी को व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में जानकारी देते हैं। व्यावसायिक निर्देशन से हम विद्यार्थी में व्यवसाय के अनुकूल वैयक्तिक गुणों एवं व्यवसाय के साथ अनुकूलता का विकास करते हैं। व्यावसायिक निर्देशन हमें व्यवसाय के प्रति ईमानदारी एवं समर्पण सिखाता है तथा व्यवसाय विशेष में रुचि लेकर आत्मसंतोष प्राप्त करना सिखाता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक निर्देशन व्यावसायिक सफलता के मार्ग में प्रकाश स्तम्भ का कार्य करता है तथा इसके अभाव में हम अंधेरे में चलने का प्रयास करते हैं। फलतः हमारी व्यावसायिक सफलता संदिग्ध हो जाती है।

शैक्षिक एवं व्यावसायिक दोनों प्रकार का निर्देशन व्यक्तिगत भी हो सकता है और सामूहिक भी। पैट्रसन ने व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए दिये जाने वाले निर्देशन को व्यक्तिगत निर्देशन की संज्ञा दी है चाहे वह सामूहिक रूप से दिया जा रहा हो। व्यक्ति विशेष की आवश्यकताओं को समझने उसकी समस्याओं का समाधान करने और गोपनीयता को बनाये रखने के लिए व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता होती है। व्यक्तिगत निर्देशन समस्या का त्वरित एवं पूर्ण समाधान करता है। यह व्यक्ति के पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओं के लिए तथा शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दिया जाता है।

समूह में दिया जाने वाला किसी भी प्रकार का निर्देशन सामूहिक निर्देशन कहलाता है। सामूहिक निर्देशन समय, धन एवं श्रम की बचत करता है। विद्यार्थी के सामान्य व्यवहार को सुधारता है तथा सामाजिकरण में सहायक होता है। सामूहिक निर्देशन व्यक्तिगत निर्देशन के लिए पृष्ठभूमि तैयार करता है। तथा एक दूसरे के अनुभवों से लाभ लेना सिखाता है।

## 2.9 संदर्भ ग्रंथ

7. Agrawal Rashmi, (Education Vocational Guidance and counseling) Shipra Publications, Delhi- 11092 (2006)
8. Suri S.P., T.S. Sodhi, (Guidance and counseling), Bawa Publication Patiala (1997)
9. Sharma R.A., (Career information in career guidance) Surya Publication Meerut (2004)
10. Sharma R.A (Guidance and counseling) Vinay Rakheia c/o R. Lall book Depot Meerut (2010)
11. सिंह रामपाल राधावल्लभ उपाध्याय, (शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन) विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

- 
12. जायसवाल सीताराम (शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श), अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा (2009)
- 

### 2.10 निबंधात्मक प्रश्न

---

1. विभिन्न विद्वानों ने निर्देशन को कितने प्रकारों से वर्गीकृत किया है। आपकी दृष्टि में निर्देशन का सर्वश्रेष्ठ वर्गीकरण कौन सा है।
2. शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए दोनों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।
3. व्यावसायिक निर्देशन भारत के आर्थिक विकास में किस प्रकार सहायता कर सकता है।
4. व्यक्तिगत एवं सामूहिक निर्देशन में अन्तर बताइये।

---

**इकाई – 3 निर्देशन में शिक्षक की भूमिका एवं निर्देशन तथा पाठ्यक्रम**

---

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 निर्देशन में शिक्षक की भूमिका
  - 3.3.1 शिक्षक की परिभाषा
  - 3.3.2 निर्देशन कार्य में शिक्षक का महत्व
  - 3.3.3 शिक्षक के निर्देशन सम्बन्धी कार्य
  - 3.3.4 शिक्षक का निर्देशन सम्बन्धी कार्यक्षेत्र
- 3.4 पाठ्यक्रम (भूमिका)
  - 3.4.1 पाठ्यक्रम की परिभाषा
  - 3.4.2 अच्छे पाठ्यक्रम के सिद्धान्त
- 3.5 पाठ्यक्रम एवं निर्देशन (प्रस्तावना)
  - 3.5.1 निर्देशन एवं पाठ्यक्रम में समानतायें
  - 3.5.2 पाठ्यक्रम के माध्यम से निर्देशन
- 3.6 निर्देशन और कक्षा कक्ष अधिगम
  - 3.6.1 कक्षा कक्ष शिक्षण के सिद्धान्त
  - 3.6.2 शिक्षक का निर्देशक के रूप में कक्षा कक्ष अधिगम में महत्व
  - 3.6.3 कक्षा कक्ष अधिगम में अधिगमकर्ता के रूप में विद्यार्थी की भूमिका
  - 3.6.4 कक्षा कक्ष अधिगम से सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक कारक
- 3.7 सारांश
- 3.8 संदर्भ ग्रंथ
- 3.9 निबंधात्मक प्रश्न

---

**3.1 प्रस्तावना**

---

जैसा कि हम जानते हैं, निर्देशन प्रत्येक व्यक्ति की अनिवार्य आवश्यकता है, अतः निर्देशन का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है, इस महत्वपूर्ण कार्य को सम्पादित करने के लिए निर्देशक का योग्य एवं कुशल होना आवश्यक है।

एक कुशल निर्देशक माता पिता की भाँति निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति को हाथ पकड़कर सही दिशा में ले जाता है। प्रत्येक व्यक्ति जीवन पर्यन्त किसी न किसी निर्देशक के सम्पर्क में रहता है; चाहे वह दादा-दादी, माता-पिता, पति-पत्नी अधिकारी अथवा किसी अन्य रूप में क्यों न हो। व्यक्ति का अधिकांश समय विद्यालय में व्यतीत होता है, अतः निर्देशन कार्य में एक अध्यापक का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

### 3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. जान सकेंगे कि अच्छे निर्देशन कार्य में शिक्षक की क्या भूमिका होती है।
2. कुशल निर्देशक के रूप में एक अच्छे शिक्षक के गुणों से अवगत करा सकेगी।
3. शिक्षक को परिभाषित कर सकेंगे।
4. यह जान सकेंगे कि एक अध्यापक किन-किन रूपों में निर्देशक की भूमिका का निर्वहन कर सकता है।
5. पाठ्यक्रम को परिभाषित कर सकेंगे।
6. अच्छे पाठ्यक्रम के सिद्धान्तों से अवगत हो सकेंगे।
7. पाठ्यक्रम एवं निर्देशन में समानता एवं अन्तर से अवगत करा सकेगी।

### 3.3 निर्देशन में शिक्षक की भूमिका Role of Teacher in Guidance

निर्देशन कार्य में शिक्षक की भूमिका को समझने से पहले हमें निर्देशन और शिक्षक इन दो शब्दों को भली-भाँति समझना होगा। अब तक की चर्चा में हम निर्देशन शब्द से भली भाँति परिचित हो चुके हैं। अतः अब हम शिक्षक शब्द से परिचय प्राप्त करने का प्रयास करेंगे।

#### 3.3.1 शिक्षक की परिभाषा Definition of Teacher

शिक्षा शब्द 'शिक्ष' धातु से बना है, जिसका अर्थ है 'सीखना' अथवा 'सिखाना' अतः जो व्यक्ति सिखाने का कार्य करता है, उसे हम शिक्षक कह सकते हैं। किन्तु एक वास्तविक शिक्षक का कार्य केवल इतना ही नहीं है। अपितु उसे एक कुम्हार की भाँति अपने छात्र को गढ़ना होता है।

जान एडम्स के अनुसार "शिक्षक मनुष्य का निर्माता है"

हुमाँयु कबीर ने शिक्षक को "राष्ट्र का भाग्य निर्माता कहा है"

भारतीय संस्कृति में गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, महेश की संज्ञा दी गयी है -

*गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः गुरुर्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।*

अतः हम कह सकते हैं कि गुरु ब्रह्मा बनकर अपने शिष्य के भीतर श्रेष्ठता को जन्म देता है, विष्णु बनकर उस श्रेष्ठता का पालन पोषण करता है, तथा शिव बनकर शिष्य के दोषों का संहार करता है, अतः गुरु साक्षात् परब्रह्मा हैं।

### 3.3.2 निर्देशन कार्य में शिक्षक का महत्व Importance of Teacher in Guidance

शिक्षक की उपरोक्त परिभाषायें यह सिद्ध करती हैं कि एक व्यक्ति को जीवनपर्यन्त निर्देशक की आवश्यकता होती है, तथा शिक्षक कुशलतापूर्वक निर्देशक की इस भूमिका का निर्वाह करता है।

निर्देशन कार्य में शिक्षक की भूमिका को हम निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट करते हैं-

1. विद्यार्थी शिक्षक को अपना आदर्श मानता है।
2. अनेक विद्यार्थी शिक्षक का अन्धानुसरण करते हैं।
3. शिक्षक और विद्यार्थी का अत्यधिक सम्पर्क रहता है।
4. शिक्षक विद्यार्थी को भली भांति समझता है।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर हम कह सकते हैं, कि एक निर्देशक के रूप में शिक्षक की भूमिका उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी परिवार में माता-पिता, समाज में नेता, जहाज में कप्तान, और बाग में माली की है।

### 3.3.3 शिक्षक के निर्देशन सम्बन्धी कार्य Guidance Related Works of a Teacher

निर्देशक के रूप में शिक्षक अपने विद्यार्थियों को अनेक प्रकार से निर्देशन प्रदान करता है, शिक्षक के निर्देशन सम्बन्धी कार्यों को समझने के लिए हम उसके कार्यों को निम्नांकित दो भागों में विभाजित कर सकते हैं-

1. वैयक्तिक निर्देशन Personal Guidance
2. शैक्षिक निर्देशन Educational Guidance

**वैयक्तिक निर्देशन Personal Guidance-** यद्यपि किसी भी प्रकार का निर्देशन व्यक्ति विशेष को ही प्रदान किया जाता है, अतः प्रत्येक निर्देशन वैयक्तिक निर्देशन की श्रेणी में रखा जा सकता है तथापि अध्ययन की सुविधा के लिए हम वैयक्तिक निर्देशन के प्रकारों का विभाजन निम्नांकित रूप में कर सकते हैं-

1. **संवेगात्मक निर्देशन Emotional Guidance** -हमारा अधिकांश जीवन संवेगों के द्वारा संचालित होता है अतः जीवन को उपयुक्त दिशा देने के लिए हमें संवेगों पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है। किशोरावस्था में बालक का संवेगात्मक विकास तीव्रता से हो रहा होता है, एक अध्यापक के सम्पर्क में अधिकांशतः किशोर अथवा युवा बालक आते हैं अतः

निर्देशक के रूप में शिक्षक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य बालक के संवेगों को सही दिशा देना है।

2. **स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्देशन Health Related Guidance-** किशोरावस्था तूफान की अवस्था कही जाती है, इस अवस्था में बालक का ध्यान अपने स्वास्थ्य पर या तो नहीं रहता या वह स्वास्थ्य के प्रति बहुत सजग हो जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में उसे शिक्षक के द्वारा कुशल निर्देशन की आवश्यकता होती है, यदि वह अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग नहीं है तो उसे सचेत करने का दायित्व शिक्षक का बनता है। यदि वह अपने शरीर निर्माण के लिए गलत साधनों का प्रयोग कर रहा है तो उसे रोकना भी शिक्षक का दायित्व है।
3. **व्यवहार सम्बन्धी निर्देशन Behavioural Guidance-** छात्र जीवन में व्यक्ति प्रायः व्यवहार कुशल नहीं होता जिस कारण उसके समक्ष सामाजिक समायोजन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। एक कुशल निर्देशक के रूप में शिक्षक अपने विद्यार्थियों को इस प्रकार का निर्देशन देता है जिससे वह अपने साथियों और समाज में भली-भाँति समायोजित हो सके।

### शैक्षिक निर्देशन Educational Guidance

जैसा कि हम जानते हैं कि व्यक्ति के जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण समय उसका अध्ययन काल है, अतः व्यक्ति के लिए उचित शैक्षिक निर्देशन अनिवार्य है, अध्यापक के शैक्षिक निर्देशन सम्बन्धी कार्य को हम निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित कर सकते हैं-

1. **उपयुक्त विषय के चुनाव में सहायता करना Helpful in Selecting Appropriate Subject** -पूर्व माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती अध्ययन के विषयों का चयन करना है, प्रायः विषय चयन के सम्बन्ध में विद्यार्थी अपने साथियों का अनुसरण करते हैं और गलत विषयों का चुनाव कर बैठते हैं। अध्यापक का दायित्व बनता है कि वह विद्यार्थी की रुचि और योग्यता का ध्यान रखते हुए उसे विषय चयन में इस प्रकार सहायता प्रदान करे जिससे विद्यार्थी अपना भविष्य सुरक्षित कर सके।
2. **ज्ञान प्राप्ति में सहायता करना Helpful in Acquiring Knowledge-** अनुपयुक्त परीक्षा प्रणाली और निम्नस्तरीय पुस्तकों की भीड़ ने विद्यार्थियों के ज्ञान प्राप्ति के स्तर को कम कर दिया है। अध्यापक का दायित्व यह है कि वह अपने विद्यार्थियों को विषय सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने में सहायता करे तथा ज्ञान वृद्धि के लिए आवश्यक पुस्तकें उपलब्ध कराने में सहायता करे।
3. **श्रेष्ठ अभिव्यक्ति की विद्या सिखाना Teaching, Better Style of Manifestation-** आपने अपने विद्यार्थी जीवन में प्रायः यह अनुभव किया होगा कि जितना हम किसी विषय विशेष में जानते हैं, मौखिक अथवा लिखित अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त होने पर हम स्वयं को उतना अभिव्यक्त नहीं कर पाते। इस तरह की समस्या अधिकांश विद्यार्थियों के जीवन

में आती है। एक कुशल निर्देशक के रूप में अध्यापक का यह कर्तव्य बनता है कि वह उन्हें मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति के उपाय सिखाने हेतु उचित निर्देशन प्रदान करें।

4. **कक्षा कक्ष व्यवहार सम्बन्धी निर्देशन Guidance Related to Class Room Behaviour-** विद्यालय स्तर पर विद्यार्थी प्रायः कक्षा कक्ष में किये जाने वाले व्यवहारों से अनभिज्ञ रहता है। अध्यापक के कक्षा में प्रवेश करते समय, अध्यापन कार्य करते समय अथवा कक्षा से अध्यापक के बाहर जाते समय विद्यार्थी को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए यह निर्देशन देने का दायित्व अध्यापक का है। इतना ही नहीं अध्यापक के समक्ष अपनी जिज्ञासा अभिव्यक्त करने अथवा अपनी बात कहने का तरीका भी अध्यापक को ही सिखाना चाहिए।
5. **अध्ययन सामग्री का चयन करने के लिए निर्देशन Guidance to Select the Study-Material** विद्यालय में पढ़ाये गये पाठ को आत्मसात करने के लिए विद्यार्थी को श्रेष्ठ अध्ययन सामग्री की आवश्यकता होती है। बाजार में उपलब्ध अनेक प्रकार की अध्ययन सामग्री में से कौन सी सामग्री स्तरीय एवं उपयोगी है इस बात का ज्ञान विद्यार्थी को नहीं होता। अतः उचित अध्ययन सामग्री का चयन करने हेतु विद्यार्थी को निर्देशन प्रदान करना शिक्षक का दायित्व है।
6. **प्रयोगात्मक कार्य के लिए निर्देशन Guidance for Practical Work** - विद्यालय की प्रयोगशालाओं में उपलब्ध उपकरणों तथा रसायनों से विद्यार्थी प्रायः अनभिज्ञ रहते हैं। ऐसी स्थिति में वे प्रयोगशाला उपकरण, रसायन अथवा स्वयं को गम्भीर क्षति पहुँचा सकते हैं। अतः अध्यापक को चाहिए कि वह प्रयोगशाला में कार्य करते समय विद्यार्थियों के साथ स्वयं भी उपस्थित रहे तथा उन्हें प्रयोगात्मक कार्य के लिए उचित निर्देशन प्रदान करे।

### 3.3.4 अध्यापक का निर्देशन सम्बन्धी कार्यक्षेत्र Scope of a Teacher as a Guide -

अध्यापक के निर्देशन सम्बन्धी कार्यों की चर्चा करने से पूर्व हमें यह जान लेना आवश्यक है कि किन परिस्थितियों में विद्यार्थी को अध्यापक के निर्देशन की आवश्यकता होती है। लेखक के मतानुसार निम्नांकित कार्य क्षेत्र ऐसे हैं जहां विद्यार्थी को अध्यापक के निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होती है-

1. शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति का क्षेत्र
2. कुसमायोजित बालकों के समायोजन का क्षेत्र
3. शैक्षिक विकास का क्षेत्र
4. सूचनाओं को समझने एवं अनुसरण करने का क्षेत्र
5. शैक्षिक उपकरणों एवं रसायनों का प्रयोग
6. पुस्तकाला।

7. पाठ्य-सहगामी गतिविधियाँ
8. विशिष्ट बालकों के लिए निर्देशन

निर्देशक के रूप में अध्यापक की भूमिका का निर्वहन निम्न रूपों में किया जा सकता है:-

- i. एक व्यक्ति के रूप में
- ii. कक्षा अध्यापक के रूप में
- iii. विषय अध्यापक के रूप में
- iv. खेल शिक्षक के रूप में
- v. प्रशासक के रूप में
- vi. अनुशासक (चतवर्जवत) के रूप में

इसके अतिरिक्त अध्यापक विद्यार्थी का अभिभावक और नेता भी होता है।

### 3.4 पाठ्यक्रम

उपरोक्त चर्चा के पश्चात हम निर्देशक के रूप में शिक्षक की भूमिक से भली भाँति परिचित हो चुके हैं। आगे की पंक्तियों में हम निर्देशन कार्य एवं पाठ्यक्रम के पारस्परिक सम्बन्धों पर चर्चा करेंगे।

एक विद्यार्थी का छात्र जीवन उसकी अन्तिम परीक्षा तक निरन्तर चलता रहता है। किसी भी विद्यालय में प्रवेश के दिन से आरम्भ करके विद्यार्थी जो भी गतिविधियाँ सम्पादित करता है चाहे वे गतिविधियाँ कक्षा में हों, कक्षा के बाहर हों, अथवा अपने अध्यापक के साथ विद्यालय के बाहर हो उसकी समस्त गतिविधियाँ निर्देशन, पाठ्यक्रम और अधिगम के अन्तर्गत आती है। अतः हमें क्रमशः उक्त तीनों ही पक्षों को स्पष्ट रूप से समझना और समझाना होगा।

#### 3.4.1 पाठ्यक्रम की परिभाषा

“लेखक के अनुसार विद्यालय में प्रवेश लेने के पश्चात परीक्षा उत्तीर्ण करने तक विद्यार्थी जो भी गतिविधियाँ अध्यापक के निर्देशानुसार सम्पन्न करता है वह सभी गतिविधियाँ पाठ्यक्रम (Curriculum) का अंग होती है।”

पाठ्यक्रम की उपरोक्त परिभाषा को ध्यान से देखने पर हमें यह पता चलता है, कि हममें से अधिकाँश लोग जिसे पाठ्यक्रम समझते हैं वास्तव में पाठ्यक्रम उससे कहीं अधिक है।

विद्यार्थियों, अध्यापकों और अभिभावकों में से अधिकाँश लोग पाठ्यवस्तु (Syllabus) को पाठ्यक्रम का पर्याय मानते हुए अपना सारा ध्यान उसी पर केन्द्रित कर देते हैं। जबकि वस्तुस्थिति इससे बिल्कुल भिन्न है। वास्तव में पाठ्यवस्तु पाठ्यक्रम का पर्याय न होकर उसका एक अंग मात्र है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि जिसे हम पाठ्यवस्तु कह रहे हैं वह पाठ्यक्रम का सैद्धान्तिक पक्ष है अथवा पाठ्यक्रम का लिखित रूप है। पाठ्यक्रम के जिस भाग को हम पुस्तकों की

सहायता से समझाते हैं तथा लिखित परीक्षा के माध्यम से उसका मूल्यांकन करते हैं पाठ्यक्रम का वह भाग पाठ्यवस्तु कहलाता है। यद्यपि पाठ्यवस्तु पाठ्यक्रम का अति महत्वपूर्ण अंग है तथापि पाठ्यक्रम में विद्यार्थी को अनेक अन्य गतिविधियाँ करनी पड़ती हैं जैसे कक्षा कक्ष व्यवहार, खेल की गतिविधियाँ, शैक्षिक भ्रमण आदि।

अपनी इस बात को हम एक उदाहरण से और अधिक स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। मान लीजिए कक्षा टप्पू के विज्ञान विषय में पाठ्यवस्तु का एक अंग 'बल' (Force) है। हम प्रायः अपने विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु के माध्यम से बल की परिभाषा, बल के प्रकार, और बल के विभिन्न प्रयोग बता कर संतुष्ट हो जाते हैं। हमारा विद्यार्थी उससे कुछ कम पढ़कर, पढ़े हुए से कुछ कम रटकर और रटे हुए से भी कुछ कम लिखकर अपने कर्तव्य की इति समझ लेता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि उसका मूल्यांकन भी इसी आधार पर हो जाता है। यही कारण है कि हमारे विद्यार्थियों का ज्ञान का स्तर दुनिया के दूसरे विद्यार्थियों के ज्ञान के स्तर से कम रह जाता है।

उपरोक्त उदाहरण में यदि हम बच्चे को कक्षा कक्ष से लेकर खेल के मैदान तक बल के विषय में बताते रहें और उसे सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक ज्ञान से समृद्ध करते हुए उसके जीवन में इस ज्ञान के प्रयोग का कौशल विकसित कर सके तभी यह वास्तविक रूप से पाठ्यक्रम के रूप में बल को पढ़ाना होगा।

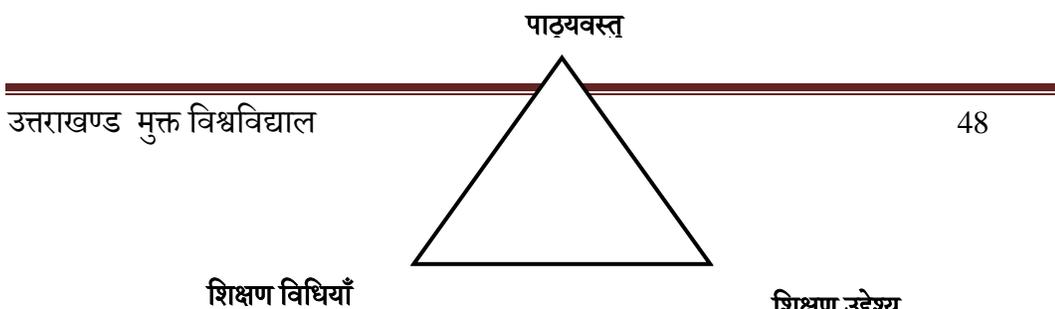
उदाहरण के सन्दर्भ में हम विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी पाठ्यक्रम की परिभाषाओं को समझने का प्रयास करेंगे।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर कमीशन) ने पाठ्यक्रम को परिभाषित करते हुए स्पष्ट कहा है कि "पाठ्यक्रम का अर्थ उन बौद्धिक विषयों से नहीं है जो विद्यालय में पढ़ाये जाते हैं; अपितु पाठ्यक्रम में वे सभी अनुभव समाहित हैं जिनको विद्यार्थी विद्यालय में प्राप्त करता है"

उपरोक्त परिभाषा पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में दी गयी हमारी परिभाषा की ही एक तरह से पुष्टि करती है। फ्रोबेल महोदय तो पाठ्यक्रम को परिभाषित करते हुए उसमें पूरे जीवन के अनुभवों को ही समाहित कर लेना चाहते हैं। उनके अनुसार "मानव जाति का सम्पूर्ण ज्ञान एवं उसके समस्त अनुभवों को पाठ्यक्रम के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए।"

पाठ्यक्रम की यह विस्तृत परिभाषा हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती अतः यहाँ पर हम कुछ ऐसे विद्वानों की परिभाषाओं का अध्ययन करेंगे जिन्होंने पाठ्यक्रम को विद्यालय के सन्दर्भ में परिभाषित किया है।

टेलर महोदय के अनुसार "पाठ्यक्रम में पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधियाँ तथा शिक्षण के उद्देश्य सम्मिलित हैं।" इसे टेलर महोदय त्रिविमीय अन्तः क्रिया की संज्ञा देते हैं।



इसी बात को मुनरो अपेक्षाकृत सरल शब्दों में कहते हैं, उनके अनुसार “पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वे सभी गतिविधियाँ आ जाती हैं जिनका उपयोग विद्यालय शिक्षा के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए करता है।”

हॉर्न महोदय भी इसी तरह के विचारों का अनुमोदन करते हुए कहते हैं कि “जो कुछ विद्यार्थी को पढ़ाया जाता है वह पाठ्यक्रम है। यह लिखने व पढ़ने से अधिक है। इसमें अभ्यास, गतिविधियाँ, उद्योग-धन्धे, अवकाश तथा ज्ञान प्राप्त करना सम्मिलित है।”

विद्वानों की अलग-अलग परिभाषायें अन्ततः एक ही सत्य की ओर जाती हैं अतः इन परिभाषाओं के आधार पर लेखक पाठ्यक्रम को इस प्रकार परिभाषित कर सकता है-

“विद्यालय में प्रवेश लेने से परीक्षा उत्तीर्ण करने तक विद्यार्थी एवं अध्यापक की प्रत्येक वह प्रक्रिया जो शैक्षिक निहितार्थ लिये हुए है पाठ्यक्रम है”

### 3.4.2 अच्छे पाठ्यक्रम के सिद्धान्त Principle of Good Curriculum

पाठ्यक्रम की उपरोक्त परिभाषायें हमें यह स्पष्ट संकेत देती हैं कि पाठ्यक्रम निर्माण का कार्य अति महत्वपूर्ण कार्य है। वास्तव में जिस प्रकार हम भवन निर्माण के समय उसकी सामग्री की गुणवत्ता देखकर भवन की गुणवत्ता का अनुमान लगा सकते हैं उसी प्रकार पाठ्यक्रम की गुणवत्ता राष्ट्र के भविष्य की ओर इंगित करती है। इस सन्दर्भ में अरस्तू, पेस्टालाजी, काण्ट आदि विद्वानों ने विस्तृत चर्चा करते हुए पाठ्यक्रम निर्माण के अनेक सिद्धान्त निर्धारित किये हैं। स्थानाभाव के कारण हम यहाँ पर इन सभी विद्वानों के द्वारा दिये गये कुछ अति महत्वपूर्ण सिद्धान्तों की चर्चा करेंगे-

1. **ज्ञान वृद्धि में सहायक Helpful in Enhancing Knowledge-** वास्तव में मानव को अन्य जीव-जन्तुओं की अपेक्षा इसीलिए श्रेष्ठ कहा गया है, क्योंकि वह विविध साधनों के माध्यम से अपने ज्ञान की वृद्धि करने में समर्थ है, अतः विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जो विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि करने में समर्थ हो।
2. **शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक Helpful to Acquire the Teaching Objectives-** मानव की प्रत्येक क्रिया सोद्देश्य होती है, अतः शिक्षण कार्य भी कुछ निश्चित उद्देश्यों को लेकर किया जाता है। शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम

सर्वोत्तम उपकरण है; अतः पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जो शिक्षण के विविध उद्देश्यों को सरलता से प्राप्त कर सके।

3. **बालक के समग्र विकास में सहायक Helpful in Wholesome Development of Child** - प्रायः हम शिक्षा को ज्ञान प्राप्ति का साधन मानते हैं। किन्तु शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्ति के लिए नहीं है अपितु शिक्षा का उद्देश्य बालक का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, नैतिक आदि अनेक प्रकार का विकास करना है। अतः विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जो बालक का सर्वांगीण विकास करने में सहायक हो।
4. **सिद्धान्त एवं प्रयोग का समन्वय Coordination of Principle and Practical** - हम पहले भी इस पर चर्चा कर चुके हैं कि पाठ्यक्रम केवल सैद्धान्तिक ज्ञान के लिए नहीं है, अपितु पाठ्यक्रम में शिक्षा का प्रयोगात्मक पक्ष भी अनिवार्य है। अतः विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जो सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ-साथ बालक को विषय से सम्बन्धित व्यवहारिक ज्ञान भी प्रदान करे।
5. **अनुभवों को वरीयता Priority to Experiences**- प्रत्येक जीव दूसरे की अपेक्षा अपने अनुभवों से जल्दी सीखता है। यह बात मानव जाति के लिए भी उतनी ही सही है। विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार से बनाया जाना चाहिए जिससे बच्चा सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसे अपने अनुभवों से पुष्ट कर सके।
6. **अभ्यास को महत्व Importance to Exercise**- संस्कृत में उक्ति है “अभ्यासात् धारयते विद्या” अर्थात् विद्या को अभ्यास से धारण किया जाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि हमारा ज्ञान चाहे कितनी भी उच्च श्रेणी का क्यों न हो अभ्यास के अभाव में वह अस्थिर हो जाता है। अतः किसी भी विषय के लिए विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जिसमें बालक के अभ्यास कार्य की पर्याप्त संभावनाएँ हों।
7. **गतिविधियों पर आधारित Activity Centred** - विद्यालय का पाठ्यक्रम केवल पुस्तकीय ज्ञान तक ही सीमित नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में चल रहे शोध इस बात की ओर संकेत करते हैं कि विद्यालय के पाठ्यक्रम में विभिन्न गतिविधियों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिये।
8. **विद्यार्थियों के स्तर के अनुकूल According to the Level of Students** - हम जानते हैं कि किसी भी पात्र में उसकी सामर्थ्य से अधिक पदार्थ नहीं भरा जा सकता और यदि हम ऐसा करते हैं तो पात्र अथवा पदार्थ अथवा दोनों की क्षति हो सकती है। ठीक इसी प्रकार यदि हम विद्यार्थी को उसके स्तर से अधिक का ज्ञान प्रदान करेंगे तो वह उसे प्राप्त करने में असफल रहेगा और यदि हम उसे उसके स्तर से नीचे का ज्ञान प्रदान करेंगे तो वह सम्बन्धित विषय में रुचि नहीं लेगा। अतः विद्यालय का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि प्रत्येक स्तर का विद्यार्थी अपने स्तर के अनुकूल ज्ञान को प्राप्त कर सके।
9. **शैक्षिक अवधि के अनुकूल According to Academic Period**- अलग-अलग राज्यों में विभिन्न स्तरों के पाठ्यक्रम का अवलोकन करने से हमें यह ज्ञात होता है कि कुछ विषयों

के पाठ्यक्रम एक शैक्षिक वर्ष की अवधि की तुलना में अधिक समय की अपेक्षा रखते हैं। इसी प्रकार अनेक पाठ्यक्रम इस प्रकार से बने होते हैं कि उन्हें विद्यार्थी दो से तीन माह की अवधि में ही पूरा कर लेता है। उक्त दोनों ही प्रकार के पाठ्यक्रम विसंगति की श्रेणी में आते हैं। वास्तव में विद्यालय के पाठ्यक्रम की संरचना इस प्रकार से की जानी चाहिए जिससे विद्यार्थी स्वयं पर समय का अधिक दबाव अनुभव न करे अथवा उसे बहुत कम समय में पूर्ण न कर सके। अतः हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम शैक्षिक अवधि के अनुकूल होना चाहिए।

10. **अन्य विषयों से सहसम्बद्ध Corelated With Other Subjects** - ज्ञान ईश्वर की तरह पूर्ण और अखंड होता है; उसे खण्डों में विभाजित कर सकना असम्भव है। हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि एक विषय में प्राप्त किया गया ज्ञान किसी न किसी स्थिति में दूसरे विषय में भी प्रयोग करने के योग्य होता है। अतः पाठ्यक्रम की रचना करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि पाठ्यक्रम अन्य विषयों से भलीभाँति सम्बद्ध हो।
11. **अवकाश का सदुपयोग करने में सहायक Helpful in use of Lesiure** - प्रायः यह देखने में आता है कि अवकाश के दिनों में विद्यार्थी खेल-कूद कर अपना सारा समय खर्च कर देते हैं तथा उनकी अवकाश कालीन गतिविधियों का पाठ्यक्रम/पाठ्यवस्तु से कोई सम्बन्ध नहीं होता। पाठ्यक्रम की संरचना करते समय यदि हम इस तथ्य का ध्यान रख सकें कि पाठ्यक्रम अवकाश के समय का सदुपयोग करने में सहायक होना चाहिए तो इस समस्या से मुक्ति पायी जा सकती है।
12. **आयु एवं बौद्धिक क्षमता के अनुसार पाठ्यक्रम का बढ़ता स्तर Improving Standered of Curriculum According to Age and Mental Capacity**- आपने अपने अध्ययन काल में विभिन्न विषयों का अध्ययन करते हुए यह पाया होगा कि राज्य सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम में कहीं-कहीं छोटी कक्षाओं में अपेक्षाकृत कठिन तथा बड़ी कक्षाओं में अपेक्षाकृत सरल पाठ्यक्रम का निर्धारण कर दिया गया है। यह पाठ्यक्रम निर्धारण की बड़ी विसंगति है। पाठ्यक्रम निर्धारण करते समय विद्यार्थी की आयु एवं बौद्धिक क्षमता के अनुरूप पाठ्यक्रम का स्तर भी बढ़ता रहना चाहिए।
13. **विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम की परस्पर सहसम्बद्धता Corelation of Carriculum at Different Level** - कभी-कभी निम्न स्तर के पाठ्यक्रम में कुछ विषय उच्च स्तर तक जाते-जाते समाप्त कर दिये जाते हैं। ऐसी स्थिति में विषय विशेष में प्राप्त किया गया विद्यार्थी का ज्ञान एवं उसका परिश्रम व्यर्थ हो जाता है। अतः विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम की परस्पर सहसम्बद्धता होनी चाहिए।
14. **राष्ट्र की आवश्यकता के अनुकूल According to the Requirment of Nation**- प्रत्येक राष्ट्र की बौद्धिक एवं भौतिक सम्पदा किसी भी दूसरे राष्ट्र की अपेक्षा अलग होती है। उदाहरण के लिए भारत भौगोलिक सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा नैतिक दृष्टि से

विविधताओं वाला देश है। जनसंख्या की दृष्टि से इसका विश्व में दूसरा तथा क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में सातवां स्थान है। विद्यालय पाठ्यक्रम का निर्धारण करते समय उसे राष्ट्र के उपलब्ध संसाधनों, भौगोलिक स्थिति तथा उसकी आवश्यकता का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए।

15. **जीवन की वास्तविकताओं के निकट Nearabout the realities of life-**पाठ्यक्रम निर्माण के उपरोक्त सिद्धान्तों का ध्यान रखते-रखते कहीं ऐसा न हो कि हमारा पाठ्यक्रम जीवन की वास्तविकताओं से बहुत दूर चला जाये। ऐसा होने की स्थिति में पाठ्यक्रम के लिए किये गये प्रयास न केवल निष्फल सिद्ध होंगे अपितु नकारात्मक परिणाम प्राप्त होने की भी पर्याप्त संभावनायें हैं। अतः कुछ भी करके हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हमारा पाठ्यक्रम जीवन की वास्तविकताओं के निकट अवश्य हो।

### 3.5 पाठ्यक्रम एवं निर्देशन Guidance and Curriculum

निर्देशन पाठ्यक्रम का एक अति महत्वपूर्ण एवं अभिन्न अंग है। निर्देशन और पाठ्यक्रम में इतनी अभिन्नता है कि हम निर्देशन के बिना पाठ्यक्रम की कल्पना भी नहीं कर सकते। आगे की पंक्तियों में हम निर्देशन एवं पाठ्यक्रम की समानता पर चर्चा करेंगे।

#### निर्देशन और पाठ्यक्रम में समानतायें Similarities between Guidance and Curriculum

निर्देशन और पाठ्यक्रम में कुछ महत्वपूर्ण समानतायें निम्नवत हैं -

- छात्र केन्द्रित** - निर्देशन और पाठ्यक्रम दोनों ही छात्र केन्द्रित होते हैं। छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही निर्देशन का कार्यक्रम बनाया जाता है, तथा विभिन्न कक्षाओं के पाठ्यक्रम का निर्माण भी छात्रों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर किया जाता है।
- विषय केन्द्रित**- निर्देशन प्रक्रिया का आयोजन छात्र की प्रत्येक विषय की आवश्यकता को ध्यान में रखकर अलग-अलग किया जाता है। प्रत्येक विषय का पाठ्यक्रम भी विषय की आवश्यकता के अनुसार अलग-अलग प्रकार से निर्धारित किया जाता है। जैसे भाषा के पाठ्यक्रम में व्याकरण पर अधिक बल दिया जाता है, तो विज्ञान के पाठ्यक्रम में प्रयोग पर।
- शिक्षक की भूमिका**- पाठ्यक्रम निर्माण तथा निर्देशन कार्यक्रम के आयोजन में शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। बिना शिक्षक की भूमिका के न तो पाठ्यक्रम का निर्माण संभव है और न ही निर्देशन कार्य। अतः हम यह कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम निर्माण तथा निर्देशन कार्यक्रम के केन्द्र में शिक्षक धुरी के रूप में खड़ा है।
- बालक के शारीरिक विकास में सहायक** - पाठ्यक्रम तथा निर्देशन दोनों ही बालक के शारीरिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शारीरिक शिक्षा, खेल-कूद, शैक्षिक

भ्रमण तथा गृह विज्ञान आदि कुछ पाठ बालक के शारीरिक विकास के लिए अति महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार उक्त समस्त गतिविधियों में कुशल निर्देशन के बिना बालक का समुचित शारीरिक विकास सम्भव नहीं है।

### 3.5.2 पाठ्यक्रम के माध्यम से निर्देशन Guidance through Curriculum

जब हम विद्यार्थी को पाठ्यक्रम के माध्यम से विषयों का ज्ञान प्रदान कर रहे होते हैं हम उसे विषय विशेष का ज्ञान देने के साथ-साथ उस विषय से सम्बन्धित निर्देशन भी प्रदान कर रहे होते हैं। इस तथ्य को एक उदाहरण के माध्यम से और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। जब हम कक्षा 6 अथवा 7 के विद्यार्थी को पाठ्यक्रम के माध्यम से भाषा का ज्ञान प्रदान करते हैं। तब हम भाषा ज्ञान के अन्तर्गत उसे गद्य, पद्य तथा व्याकरण का ज्ञान प्रदान करेंगे। गद्य का पाठ पढ़ते समय बालक या विद्यार्थी को भाषा के उचित प्रयोग का निर्देशन भी देते हैं। पाठ में समाहित विषय वस्तु के आधार पर हम उसे किसी न किसी प्रकार का निर्देशन जो विद्यार्थी के ज्ञान पक्ष को प्रबल करता है दे रहे होते हैं। पद्य को पढ़ते समय हम उसे भावनात्मक संतुलन बनाने का निर्देशन देते हैं।

इसी प्रकार व्याकरण का शिक्षण भाषा के शुद्ध तथा सटीक प्रयोग का निर्देशन है। उदाहरण केवल कक्षा 6 तथा 7 नहीं अपितु किसी भी स्तर के विद्यार्थी के लिए समान रूप से सही है।

सामाजिक विषयों का शिक्षण करते समय हम विद्यार्थी को विभिन्न प्रकार के सामाजिक मूल्यों के विकास, समाज में सामंजस्य स्थापित करना, समाज से अनुकूलन तथा समाज में अपने लिए श्रेष्ठतर स्थान प्राप्त करने आदि का निर्देशन देते हैं।

भाषा और सामाजिक विषयों की ही भाँति हम विद्यार्थी को विज्ञान से सम्बन्धित विषयों का ज्ञान प्रदान करते हैं। विज्ञान से सम्बन्धित विषयों का शिक्षण करते समय हम विद्यार्थी को विभिन्न वैज्ञानिक तकनीकों के प्रयोग तथा वह प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग कैसे करें, इसका भी निर्देशन प्रदान करते हैं। इसके साथ-साथ हम उसे विभिन्न प्रकार के कृत्रिम उपकरणों के प्रयोग का निर्देशन भी प्रदान करते हैं।

सामाजिक विषय सामाजिक मूल्यों का विकास समाज में उसका स्थान तथा भूमिका, समाज में कैसे श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करें।

विज्ञान, वैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग, प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों एवं कृत्रिम उपकरणों का प्रयोग करने हेतु निर्देशन।

### 3.6 निर्देशन और कक्षा कक्ष अधिगम Guidance and Classroom Learning

यदि हम शिक्षण प्रक्रिया को ध्यानपूर्वक देखें तो हम पायेंगे कि शिक्षण का कार्य निर्देशन से अधिक कुछ भी नहीं है। प्रायः विद्यालयों में दो प्रकार से शिक्षण कार्य किया जाता है। अध्यापक केन्द्रित तथा छात्र केन्द्रित।

व्याख्यान विधि से किया गया कार्य अध्यापक केन्द्रित होता है और इसमें छात्र केवल सुनते हैं। इस प्रकार प्राप्त किया गया ज्ञान ऊपर से थोपा गया ज्ञान होता है।

छात्रों की सहायता से किया जाने वाला शिक्षण कार्य एक प्रकार से निर्देशन का ही दूसरा रूप है, अध्यापक विषय को प्रस्तावित करके उसका विकास छात्रों पर छोड़ देता है तथा बीच-बीच में आवश्यकतानुसार निर्देशन प्रदान करता रहता है। कक्षा कक्ष अधिगम की इस प्रक्रिया के विषय में हम आगे विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

#### कक्षा कक्ष अधिगम में निर्देशन की भूमिका Roll of Guidance in Classroom Learning-

कक्षा कक्ष अधिगम में निर्देशन की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रतिदिन के कक्षा कक्ष व्यवहार में एक कुशल शिक्षक अधिगम का उच्च स्तर प्राप्त करना चाहता है। शिक्षण की श्रेष्ठ कला, शिक्षक का उच्चस्तरीय ज्ञान तथा छात्रों का उच्च मानसिक स्तर मिलकर श्रेष्ठ अधिगम के लिए उत्तरदायी हैं किन्तु उक्त समस्त तथ्य निर्देशन की भूमिका के बिना आधारहीन हैं। जब प्रतिदिन के कक्षा-कक्ष व्यवहार में एक शिक्षक कुशल निर्देशक की भूमिका का निर्वहन करता है तब वह शिक्षण की गतिविधि को आधार प्रदान कर रहा होता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि प्रतिदिन का कक्षा-कक्ष व्यवहार निर्देशन की आधार भूमि पर ही सम्पन्न हो सकता है। आगे की जाने वाली चर्चा कक्षा-कक्ष अधिगम में निर्देशन की भूमिका को और अधिक स्पष्ट करने में सक्षम होगी।

#### 3.6.1 कक्षा कक्ष शिक्षण के सिद्धान्त Theories of Classroom Teaching

1. **पाठ्यक्रम का ज्ञान Knowledge of Curriculum-** किसी भी कक्षा का पाठ्यक्रम शिक्षण एवं निर्देशन कार्य का मूल आधार है अध्यापक को कक्षा कक्ष शिक्षण आरम्भ करने से पूर्व सर्वप्रथम अपने लिए निर्धारित कक्षा के पाठ्यक्रम से भली-भाँति अवगत हो जाना चाहिए तभी वह उचित प्रकार से शिक्षण कार्य करने में सक्षम होगा।
2. **सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण Determination of General Objectives** -कक्षा कक्ष शिक्षण आरम्भ करने से पहले अध्यापक को वर्षपर्यन्त किये जाने वाले शिक्षण कार्य के लिए उद्देश्यों का निर्धारण कर लेना चाहिए। उसे पहले से ही यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि पढ़ाये जाने वाले पाठ्यक्रम को किन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निर्धारित किया गया है, तथा इन उद्देश्यों की प्राप्ति किस प्रकार की जा सकेगी।

3. **शिक्षण लक्ष्य का निर्धारण Determination of Learning Aims**-पूरे वर्ष के लिए शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण करने के पश्चात अध्यापक का प्रथम दायित्व यह बनता है कि वह अपने प्रतिदिन के शिक्षण कार्य की योजना बना लें। उक्त योजना में उसे यह भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि कक्षा में प्रवेश करने से लेकर एक दिन का शिक्षण कार्य समाप्त करने के पश्चात वह किन-किन लक्ष्यों को प्राप्त कर लेगा।
4. **विद्यार्थी के ज्ञान का आकलन Estimate of Student's Knowledge**-कक्षा में जाने से पूर्व हमें यह अवश्य पता होना चाहिए कि हम जिन विद्यार्थियों को पढ़ाने जा रहे हैं, उनका मानसिक स्तर क्या है तथा हमारे विषय से सम्बन्धित कितना और किस प्रकार का ज्ञान छात्र पहले से ही रखते हैं छात्रों के ज्ञान का स्तर पता चल जाने से शिक्षण का कार्य अपेक्षाकृत सरल हो जाता है।
5. **सहायक सामग्री का एकत्रीकरण Collection of Helping Aid**- एक कुशल अध्यापक के रूप में हमें अपने शिक्षण विषय से सम्बन्धित वह सामग्री पहले से ही एकत्र कर लेनी चाहिए जो शिक्षण कार्य में सहायक हो सकती है। यह सामग्री किसी भी प्रकार की कोई वस्तु, उपकरण, चित्र, रेखाचित्र, ग्राफ, चार्ट, मानचित्र, किसी वस्तु का मॉडल आदि हो सकती है।
6. **विद्यार्थियों में विषय के प्रति रूचि उत्पन्न करना To Increase the Interest of Student for Particular Subject** - गली में तमाशा दिखाने वाला मदारी और कक्षा में शिक्षण करने वाले शिक्षक दोनों की भूमिका इस दृष्टि से समान होती है कि वे स्वयं में अथवा अपने विषय में बालक का रुझान विकसित किये बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। विशेषकर किशोरावस्था की ओर बढ़ रहे बालक केवल उन्हीं कार्यों को पूरे मन से सम्पादित करते हैं जिनमें उनकी रूचि होती है। अतः कक्षा कक्ष में जाने पर एक अध्यापक का पहला कर्तव्य यह बनता है कि वह किसी भी प्रकार से पढ़ाये जाने वाले विषय में विद्यार्थी की रूचि का विकास करे।
7. **मूल विषय का प्रस्तुतीकरण Presentation of Main Subject** - अंग्रेजी में एक कहावत है कि well begin is half done अर्थात् अच्छी तरह से आरम्भ किया गया कार्य सहजता और सरलता से सम्पन्न होता है यह बात कक्षा कक्ष शिक्षण पर भी पूरी तरह से लागू होती है, अतः एक अध्यापक का यह दायित्व बनता है कि वह पढ़ायी जाने वाली विषयवस्तु को अपनी सर्वोत्तम क्षमता का उपयोग करते हुए प्रस्तुत करे।
8. **पाठ का विकास Development of Lesson**- पाठ के उत्तम प्रस्तुतीकरण के बाद अध्यापक के भीतर बैठा हुआ निर्देशक सक्रिय हो जाता है। शिक्षण की कला में पारंगत अध्यापक इस बात को भली-भाँति जानते हैं कि ईश्वर ने समस्त प्रकार का ज्ञान बालक के भीतर पहले से ही भरा हुआ है किन्तु उसको विकसित करने का दायित्व अध्यापक का है। एक कुशल अध्यापक अपने विद्यार्थियों पर अपना ज्ञान कभी भी थोपता नहीं है अपितु वह

तो उनके भीतर के ज्ञान को ही निर्देशन की विभिन्न विधियों से बाहर निकालने का कार्य करता है। इस बात को हम निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट करेंगे।

- a. **विद्यार्थियों की सुनिश्चित भागीदारी Confirmation of Participation of Students** - पाठ के विकास की प्रक्रिया में एक कुशल अध्यापक यह सुनिश्चित कर लेता है कि पाठ का विकास करते समय कक्षा के अधिकांश छात्र सक्रिय रूप से भागीदार रहें। वस्तुतः पाठ का वास्तविक विकास विद्यार्थी ही करते हैं। अध्यापक तो अपने उचित निर्देशन के माध्यम से पाठ को उपयुक्त दिशा और सही गति प्रदान करता है।
- b. **कक्षा की आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षण गति Teaching Speed According to Requirement of Classes**- किसी भी पाठ का विकास किस गति से होगा यह कक्षा के विद्यार्थियों पर निर्भर करता है। वास्तव में कक्षा में उपस्थित विद्यार्थियों की रूचि तथा उनका मानसिक स्तर पाठ के विकास के लिए उत्तरदायी होता है।
- c. **विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का विशेष ध्यान Special Care for Special Child** - किसी भी कक्षा में प्रायः तीन प्रकार के विद्यार्थी होते हैं कुछ मानसिक स्तर पर पिछड़े हुए कुछ प्रखर तथा अधिकांश सामान्य बुद्धि के प्रायः शिक्षण कार्य को सामान्य बुद्धि के विद्यार्थी संचालित करते हैं, किन्तु कक्षा के पिछड़े एवं प्रखर विद्यार्थियों की आवश्यकताएँ अलग-अलग होती हैं। अतः अध्यापक को इन विद्यार्थियों की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखना चाहिए।
- d. **सहायक सामग्री का सटीक प्रयोग Appropriate use of Material Aid** - शिक्षण कार्य के लिए कक्षा में उपकरण आदि सहायक सामग्री का ले जाना ही अध्यापक के लिए पर्याप्त नहीं है अपितु उसे इस बात का भली-भाँति ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार की सामग्री का प्रयोग कब और कैसे करना है। सहायक सामग्री वास्तव में शिक्षण की कला को जानने वाले अध्यापकों के हाथ में एक महत्वपूर्ण उपकरण तथा अकुशल शिक्षक के हाथ में खतरे की घंटी है। पाठ के विकास में अध्यापक की निर्देशक के रूप में भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है इस पर सम्पूर्ण चर्चा करने के लिए अलग से एक पुस्तक लिखने की आवश्यकता है। समय तथा स्थान के अभाव में यहाँ कतिपय महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर संक्षिप्त चर्चा की गयी है। उक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त कक्षा कक्ष शिक्षण की प्रक्रिया में कुछ और बिन्दु भी हैं जो अधिगम के स्तर को बढ़ाते हैं, जैसे-आवश्यकतानुसार विषय की गहराई में जाना, बीच-बीच में प्रश्नोत्तर, प्रेरणात्मक वाक्यों का प्रयोग, उपयुक्त उदाहरणों का प्रयोग तथा हाव-भाव का प्रदर्शन आदि।

9. **प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन Evaluation of Aquired Knowledge** - एक कुशल अध्यापक प्रतिदिन के कक्षा कक्ष शिक्षण के अन्तिम चरण में इस बात का मूल्यांकन अवश्य करता है कि उसके विद्यार्थियों ने आज की कक्षा में किस सीमा तक ज्ञान प्राप्त किया।
10. **समस्त पाठ की संक्षिप्त आवृत्ति Brief Recapitulation of Whole Lesson-** कक्षा कक्ष शिक्षण का समापन करते हुए एक कुशल अध्यापक को उस दिन के समस्त पाठ की संक्षिप्त आवृत्ति अवश्य करनी चाहिए यह प्रक्रिया प्राप्त किये गये ज्ञान को स्थिर करने में सहायक होती है।
11. **पुनरावलोकन के अवसर प्रदान करना To Provide Oppurtunity of Revision** - केवल एक बार विषय वस्तु को भली-भाँति पढ़ाकर अध्यापक का कर्तव्य पूर्ण नहीं होता, अपितु छात्र को विषयवस्तु के पुनरावलोकन का अवसर प्रदान करना भी शिक्षक का दायित्व बनता है। इस कार्य के लिए वह ग्रह कार्य की सहायता ले सकता है।
12. **प्राप्त ज्ञान का व्यवहारिक पटल पर आकलन Evaluation of acquired Knowledge on the Practical Basis** - मेरी कक्षा के छात्रों ने कितना सीखा? क्या वह सीखे हुए ज्ञान का उपयोग पर पायेंगे? इस तरह के प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए उसे छात्रों के समक्ष भविष्य में ज्ञान के प्रयोग हेतु परिस्थितियों का निर्माण करना होगा, प्रयोगशाला में प्रयोग कराने होंगे तथा आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों को उपयुक्त निर्देशन देना होगा।

उक्त बिन्दुओं के माध्यम से की गयी अति संक्षिप्त चर्चा यह स्पष्ट करती है कि कक्षा कक्ष शिक्षण में अधिगम का श्रेष्ठ स्तर प्राप्त करने के लिए एक अध्यापक तथा उसके द्वारा दिया जाने वाला निर्देशन अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

### 3.6.2 शिक्षक का निर्देशक के रूप में कक्षा कक्ष अधिगम में महत्व Importance of Teacher as a Guide in Classroom Learning

अध्यापक के महत्व को स्वीकार करते हुए विद्वानों ने उसकी तुलना जहाज में कप्तान, घड़ी में कमानी तथा शरीर में मस्तिष्क से की है। इतनी महत्वपूर्ण स्थितियों को संजोकर रखने वाले अध्यापक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कक्षा कक्ष शिक्षण है। एक विषय अध्यापक के रूप में अध्यापक अपने सर्वाधिक महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वहन करता है अतः यह स्पष्ट ही है कि कक्षा कक्ष शिक्षण में अध्यापक का महत्वपूर्ण स्थान है।

किसी विषय का विशेषज्ञ अध्यापक यदि निर्देशन की कला से अनभिज्ञ है तो उसकी विद्वता विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी इसमें संशय है। किन्तु, यदि अध्यापक निर्देशन कार्य को निपुणतापूर्वक सम्पन्न करना जानता है तो उसकी यह विशेषता न केवल अध्यापक को सफल सिद्ध करेगी अपितु ऐसे अध्यापक के विद्यार्थी ज्ञान के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित करने में सफल होंगे,

अतः एक अध्यापक के लिए जितना अनिवार्य विषय विशेषज्ञ होना है उतना ही निर्देशन की कला में निपुण होना भी है।

### 3.6.3 कक्षा कक्ष अधिगम में अधिगमकर्ता के रूप में विद्यार्थी की भूमिका Role of a Student as a Learner in Classroom Learning

कुम्हार चाहे कितना ही कुशल क्यों न हो बर्तन बनाने की मिट्टी यदि उत्तम प्रकार की नहीं है तब श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त होने की आशा कम रहती है। इसी प्रकार एक योग्य अध्यापक के कुशल निर्देशक होते हुए भी अधिगम का स्तर कक्षा के विद्यार्थियों पर अधिक निर्भर करता है। यदि कक्षा के विद्यार्थी श्रेष्ठ मानसिक स्तर (High I.Q) स्वस्थ शरीर वाले एवं विषय में रूचि रखने वाले होंगे तभी विषय विशेष में उनका अधिगम का स्तर ऊंचा होगा। निश्चित रूप से निर्देशक के रूप में अध्यापक की भूमिका जितनी अधिक महत्वपूर्ण है अधिगमकर्ता के रूप में उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका अध्येता (विद्यार्थी) की है।

### 3.6.4 कक्षा कक्ष अधिगम से सम्बन्धित कुछ मनोवैज्ञानिक कारक Some Psychological Factors Related to Classroom Learning-

किसी भी कार्य को भली-भाँति सम्पन्न करने की प्रक्रिया में मनोवैज्ञानिक कारकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार कक्षा कक्ष अधिगम में भी मनोवैज्ञानिक कारक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, यहाँ हम कुछ अति महत्वपूर्ण कारकों का संक्षिप्त वर्णन करेंगे।

1. अध्यापक को बालक के ज्ञान का स्तर पता होने की दशा में अधिगम का स्तर बढ़ने की सम्भावना रहती है।
2. अध्यापक द्वारा ज्ञान प्रदान करने से पूर्व विद्यार्थी की विषय के प्रति रूचि विकसित कर लेने से रूचिपूर्वक पढ़े गये पाठ सदैव श्रेष्ठ परिणाम देने वाले होते हैं।
3. विषय के प्रस्तुतीकरण से सम्बन्धित संसाधनों को पहले से ही एकत्र कर लेना तथा कक्षा में उनका सहज और सटीक प्रदर्शन भी अधिगम के स्तर को बढ़ाने में सफल होता है।
4. कक्षा कक्ष में शिक्षण करते समय अध्यापक पाठ के विकास में विद्यार्थियों की जितनी अधिक भागीदारी सुनिश्चित करेगा अधिगम का स्तर उतना ही अधिक होगा।
5. पाठ का विकास करते समय विद्यार्थियों की अनुकूल प्रतिक्रिया मिलने पर अध्यापक द्वारा उनके लिए प्रशंसासूचक शब्दों का प्रयोग अधिगम के स्तर को बढ़ाने का कार्य करता है।
6. आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों को प्रेरित करने वाले वाक्य भी अधिगम का स्तर बढ़ाते हैं।
7. एक कुशल निर्देशक समय-समय पर कक्षा की प्रगति का मूल्यांकन भी करता रहता है जिससे वह अधिगम के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए उपयुक्त प्रयास कर सके।
8. उपरोक्त समस्त कारकों के साथ यदि विद्यार्थी में दृढ़ इच्छा शक्ति एवं आत्मविश्वास का विकास कर दिया जाये तो हम निश्चित रूप से अधिगम के श्रेष्ठ स्तर को प्राप्त कर सकेंगे।

### 3.7 सारांश

निर्देशन प्रत्येक व्यक्ति की अनिवार्य आवश्यकता है, इस कार्य में शिक्षक की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि विद्यार्थी शिक्षक को न केवल अपना आदर्श मानते हुए उसका अन्धानुसरण करता है अपितु उसके अत्यधिक सम्पर्क में होने के कारण शिक्षक भी अपने विद्यार्थी को भली भाँती समझता है। एक अच्छा शिक्षक अपने विद्यार्थी को वैयक्तिक निर्देशन के अन्तर्गत संवेगात्मक निर्देशन, स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्देशन एवं व्यवहार सम्बन्धी निर्देशन प्रदान करता है। इसी प्रकार शैक्षिक निर्देशन के अन्तर्गत वह उपयुक्त विषय के चुनाव में सहायता करते हुए न केवल ज्ञान प्राप्ति में सहायता प्रदान करता है अपितु श्रेष्ठ अभिव्यक्ति की विद्या भी सिखाता है। एक शिक्षक अपने विद्यार्थी को कक्षा कक्ष व्यवहार सम्बन्धी निर्देशन देने के साथ-साथ अध्ययन सामग्री का चयन करने में सहायता तथा प्रयोगशाला कार्य के लिए निर्देशन भी प्रदान करता है। एक अध्यापक अपने विद्यार्थी को कभी एक व्यक्ति के रूप में, कभी कक्षा अध्यापक के रूप में, कभी विषय अध्यापक के रूप में, कभी खेल शिक्षक के रूप में और कभी अनुशासक के रूप में निर्देशन प्रदान करता है।

निर्देशन एवं पाठ्यक्रम में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। कभी-कभी पाठ्यवस्तु एवं पाठ्यक्रम को पर्याय मान लिया जाता है किन्तु पाठ्यवस्तु पाठ्यक्रम का एक अंग मात्र है। विद्यालय के सन्दर्भ में की गयी प्रत्येक प्रक्रिया पाठ्यक्रम का ही अंग होती है। अच्छे पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय हमें अनेक बातों का ध्यान रखना चाहिए। जैसे पाठ्यक्रम न केवल ज्ञान वृद्धि में सहायक हो अपितु शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में भी सहायक हो। बालक के समग्र विकास में सहायता करने वाला पाठ्यक्रम उसे अवकाश के समय का सदुपयोग करना सिखाये और जीवन की वास्तविकताओं के निकट हो।

निर्देशन और पाठ्यक्रम दोनों ही छात्र केन्द्रित एवं विषय केन्द्रित होने चाहिए तथा बालक के समग्र विकास में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण होनी चाहिए। एक कुशल अध्यापक अपने विद्यार्थी को पाठ्यक्रम के माध्यम से श्रेष्ठ निर्देशन प्रदान करता है तथा कक्षा कक्ष अध्ययन के समय अनेक महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का ध्यान रखता है।

### 3.8 संदर्भ ग्रंथ

1. Agrawal Rashmi, (Education Vocational Guidance and counseling) Shipra Publications, Delhi- 11092 (2006)
2. Suri S.P., T.S. Sodhi, (Guidance and counseling), Bawa Publication Patiala (1997)
3. Sharma R.A., (Career information in career guidance) Surya Publication Meerut (2004)
4. Sharma R.A (Guidance and counseling) Vinay Rakheia c/o R. Lall book Depot Meerut (2010)

5. सिंह रामपाल राधावल्लभ उपाध्याय, (शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन) विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
6. जायसवाल सीताराम (शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श), अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा (2009)

---

### 3.9 निबंधात्मक प्रश्न

---

1. एक कुशल निर्देशक के रूप में अध्यापक के दायित्वों का वर्णन करो।
2. निर्देशक के रूप में शिक्षक को किन-किन भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है।
3. पाठ्यक्रम एवं पाठ्यवस्तु में क्या अन्तर है?
4. एक अच्छे पाठ्यक्रम की विशेषतायें संक्षेप में बताइये।
5. एक सफल कक्षा कक्ष अधिगम के लिए किन बातों की आवश्यकता होती है।
6. 'कक्षा कक्ष अधिगम में शिक्षक एवं विद्यार्थी एक दूसरे के पूरक हैं' सिद्ध कीजिए।

---

## इकाई - 4 निर्देशन के अभिकरण: राष्ट्रीय स्तर, राज्य स्तर

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 अभिकरण की परिभाषा
- 4.4 भारत में निर्देशन के अभिकरण
- 4.5 भारत में निर्देशन अभिकरणों के विभिन्न स्तर
  - 4.5.1 राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण
  - 4.5.2 राज्य स्तर पर निर्देशन के अभिकरण
  - 4.5.3 स्थानीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण
- 4.6 सारांश
- 4.7 संदर्भ ग्रंथ
- 4.8 निबंधात्मक प्रश्न

---

### 4.1 प्रस्तावना

पीछे के पृष्ठों में हम निर्देशन के विषय में पर्याप्त अध्ययन कर चुके हैं। हम जानते हैं कि निर्देशन शिक्षा की ही भाँति जन्म से आरम्भ होकर मृत्यु तक चलने वाली प्रक्रिया है। निर्देशन की यह प्रक्रिया अनेक प्रकार से सम्पादित की जा सकती है। यद्यपि निर्देशन की यह प्रक्रिया अन्य लोगों की सहायता से सम्पन्न की जाती है, तथापि इसमें किसी विशेष प्रकार के संगठन की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु, जब हम निर्देशन की इस प्रक्रिया को व्यवस्थित एवं समग्र रूप से करना चाहते हैं तो हमें विशेष प्रकार के संगठन की आवश्यकता होती है। आगे के पृष्ठों में हम निर्देशन के अभिकरणों के बारे में जानेंगे।

---

### 4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

1. निर्देशन के अभिकरण को परिभाषित कर सकेंगे।
2. भारत में निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
3. यह जान सकेंगे कि भारत में राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन के कौन-कौन से अभिकरण हैं तथा उनके क्या कार्य हैं।

4. यह जान सकेंगे कि राष्ट्रीय स्तर पर समाचार पत्र तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकायें किस प्रकार निर्देशन के अभिकरण के रूप में कार्य करते हैं।
5. यह भी जान सकेंगे कि निर्देशन के गैर सरकारी अभिकरण कौन-कौन हैं; तथा वह क्या कार्य करते हैं ?
6. राज्य स्तर पर निर्देशन के सरकारी, गैर सरकारी तथा अन्य अभिकरणों के बारे में जान सकेंगे।
7. राज्य स्तर पर निर्देशन में पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका के बारे में जान सकेंगे।
8. यह भी जान सकेंगे कि स्थानीय स्तर पर निर्देशन के कौन-कौन से अभिकरण हैं तथा वे किस प्रकार से कार्य करते हैं ?

---

### 4.3 अभिकरण की परिभाषा Definition of Agencies

---

जैसा कि हम ऊपर की पंक्तियों में जान चुके हैं कि निर्देशन की प्रक्रिया को दो प्रकार से सम्पादित किया जा सकता है –

- i. नितान्त निजी स्तर पर
- ii. संगठित रूप से

निर्देशन का यह कार्य कभी भी और कहीं भी किया जा सकता है। किन्तु, जब हम निर्देशन का यह कार्य संगठित और व्यवस्थित तरीके से करना चाहते हैं तो हमें इसके लिए किसी संगठन या संस्था की आवश्यकता होती है। किसी क्षेत्र विशेष में निर्देशन के कार्य विशेष के लिए बनायी गयी यह व्यवस्था अथवा संस्था ही अभिकरण कहलाती है। हम अभिकरण को निम्नांकित प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं- “जब किसी व्यक्ति अथवा संस्था को (जैसे निर्देशन) किसी कार्य विशेष को करने के लिए वैधानिक अधिकार प्रदान करते हैं तथा उसका दायित्व निर्धारित करते हैं तो हम कह सकते हैं कि उस संस्था तथा व्यक्ति के पास कार्य विशेष (जैसे निर्देशन) का अभिकरण (एजेन्सी) है”

---

### 4.4 भारत में निर्देशन के अभिकरण Agencies of Guidance in India

---

जैसा कि हम भली भाँति जानते हैं कि सभ्यता के आरम्भ से ही निर्देशन का भी आरम्भ हो गया था। निरन्तर चलने वाली यह प्रक्रिया जीवन के छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े कार्य में आवश्यक होती है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ निर्देशन की प्रक्रिया में भी परिवर्तन होता रहा। आदि काल में मानव एकाकी जीवन व्यतीत करता था किन्तु जैसे ही मानव ने समूह में रहना आरम्भ किया वैसे ही उसे समायोजन के लिए निर्देशन की आवश्यकता अनुभव होने लगी।

सभ्यता के उन्नति शिखर पर पहुँचने के लिए जैसे-जैसे मानव ने विकास की सीढ़ियों पर कदम बढ़ाये वैसे-वैसे निर्देशन की यह प्रक्रिया औपचारिक रूप लेने लगी।

लेखन कला का विकास-काल निर्देशन के अभिकरणों का आरम्भिक काल कहा जा सकता है। ज्ञात रूप से सर्वप्रथम पुस्तकें ही निर्देशन का ऐसा अभिकरण थी जो व्यक्ति को व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से निर्देशन प्रदान करती थी।

औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने निर्देशन के अभिकरणों को पुस्तकों से निकालकर प्रथम संगठित एवं औपचारिक रूप प्रदान किया। धीरे-धीरे जनसंख्या वृद्धि और संसाधनों के अत्यधिक दोहन ने बेरोजगारी सहित अनेक विकराल समस्याओं को जन्म दिया। इन समस्याओं के समाधान के लिए निर्देशन की प्रक्रिया जटिल, संगठित और अधिक महत्वपूर्ण हो गयी।

मानव अब तक मशीनो का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में करने लगा था और समाज अपनी जीवन शैली के कारण अपेक्षाकृत अधिक जटिल हो गया था। परिणामस्वरूप निर्देशन की आवश्यकता अधिक, और प्रक्रिया जटिल होने लगी।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही शिक्षा व्यवस्था पूरी तरह से निर्देशन की ही प्रक्रिया थी। प्राचीन भारतीय मनीषियों ने ज्ञान एवं सूचना के बारीक अन्तर को भली-भाँति समझा हुआ था, तथा वे सूचना पर ज्ञान को प्रधानता देते थे, इसीलिए गुरुकुलों में ज्ञान पर आधारित शिक्षा दी जाती थी। शिष्य, गुरु के निर्देशन में घर से बहुत दूर रहकर न केवल स्वयं में विभिन्न कौशलों का विकास करता था अपितु स्वयं की रूचियों एवं क्षमताओं को सीखने के साथ-साथ समायोजन को भी सीखता था। गुरुकुल शिक्षा पद्धति तथा गुरु और शिष्यों के बीच अत्यधिक घनिष्ठता ने भारत में अलग से निर्देशन हेतु किसी संगठन की आवश्यकता अनुभव नहीं की। भारत के जन-जन तथा कण-कण में व्याप्त निर्देशन प्रक्रिया का ही ये परिणाम था कि वैदिक भारत से लेकर स्वतन्त्र भारत तक निर्देशन का कोई स्वतन्त्र अभिकरण न होते हुए भी भारतीय समाज ने विश्व में न केवल सफलता का परचम लहराया बल्कि भारतीय विवेक, बुद्धि तथा कौशल का भी लोहा मनवाया था। तथापि परतन्त्र भारत में पश्चिमी जगत की देखा-देखी पहली बार 1938 में व्यावसायिक निर्देशन का पहला अभिकरण स्थापित हुआ। इसकी स्थापना कलकत्ता यूनिवर्सिटी के व्यवहारिक मनोविज्ञान की शाखा के अन्तर्गत की गयी। 1941 में बम्बई प्रान्त में भी संगठित रूप से व्यावसायिक निर्देशन आरम्भ किया गया जिसे बाद में पारसी पंचायत ने संभाल लिया और स्वतन्त्रता के वर्ष 1947 में व्यावसायिक ब्यूरो के रूप में कार्य आरम्भ किया। इसी के अन्तर्गत कैरियर मास्टर के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी थी। इससे पूर्व उ०प्र० के इलाहाबाद में आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में 1942 में मनोविज्ञान निर्देशन ब्यूरो की स्थापना हो चुकी थी। यह ब्यूरो उ०प्र० के विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों को निर्देशन देने के लिए स्थापित किया गया था। बाद में उ०प्र० के पाँच प्रमुख नगरों में इस ब्यूरो की शाखाएँ खुलीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतवर्ष में निर्देशन के अभिकरणों में बहुत तेजी से विकास हुआ। स्वतन्त्र भारत की नयी सरकार में भारतीय जनमानस के लिए बहुत कुछ कर

गुजरने की इच्छा शक्ति थी। उसकी इसी इच्छा शक्ति ने उसे विभिन्न आयोगों के गठन के लिए प्रेरित किया।

सर्वप्रथम 1953 में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन की आवश्यकता पर बल देते हुए उसके विस्तार के लिए सुझाव प्रस्तुत किये। इससे पूर्व 1950 में बम्बई में व्यावसायिक निर्देशन ब्यूरो की स्थापना की जा चुकी थी जिसकी शाखायें अहमदाबाद तथा पूना में भी खोली गयीं जहाँ पर कैरियर मास्टर आदि का प्रशिक्षण दिया जाता रहा।

1954 में केन्द्रीय शिक्षा तथा व्यवसायिक ब्यूरो की स्थापना की गयी। इसका संचालन केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा किया जाता था इसी तारतम्य में 1964 में गठित कोठारी कमीशन ने भी प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक निर्देशन की आवश्यकता पर बल दिया तथा निर्देशन से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण तथा उपयोगी सुझाव दिये जिनके अनुपालन से भारत में निर्देशन के अभिकरण पल्लवित तथा पुष्पित हुए।

1964 में केन्द्र सरकार ने राज्यों को निर्देशन सम्बन्धी सहायता देने के लिए एक विभाग की स्थापना कर दी। इससे पूर्व 1955 से 1957 के बीच उड़ीस, राजस्थान, असोम, आन्ध्र प्रदेश, केरल आदि राज्यों में भी निर्देशन ब्यूरो की स्थापना हो चुकी थी। 1957 में ही राष्ट्रीय स्तर पर रोजगार कार्यालय ने निर्देशन कार्य आरम्भ कर दिया था।

#### **वर्तमान भारत में निर्देशन के अभिकरण Agencies of Guidance in Present India**

जैसा कि हम पहले से ही जानते हैं कि निर्देशन की प्रक्रिया अनेक प्रकार से सम्पादित की जा सकती है। समस्त प्रकार के निर्देशन व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से दिये जा सकते हैं। भारत में निर्देशन की प्रक्रिया प्रशासनिक दृष्टि से मुख्यतः चार स्तरों पर सम्पादित की जाती है - राष्ट्रीय स्तर, राज्य स्तर, स्थानीय स्तर तथा निजी संस्थायें। निर्देशन की प्रक्रिया के स्तरों को यदि हम किसी उदाहरण के द्वारा समझना चाहे तो हम इसकी तुलना प्याज से कर सकते हैं। प्याज के छिलकों की तरह निर्देशन की प्रक्रिया के स्तर बहुत बारीक झिल्ली के माध्यम से एक दूसरे से अलग है यदि इन छिलकों को परस्पर एक रहने दिया जाता है तभी प्याज का अस्तित्व बना रह सकता है इन छिलकों के अलग हो जाने पर प्याज का कोई अस्तित्व नहीं रहता अतः हम कह सकते हैं निर्देशन के विभिन्न स्तर परस्पर अलग होते हुए प्याज की भाँति संयुक्त रहने की ही दशा में निर्देशन कहे जा सकते हैं।

#### **4.5 भारत में निर्देशन अभिकरणों के विभिन्न स्तर**

ऊपर के उदाहरण से हम यह बात भली-भाँति जान चुके हैं कि निर्देशन अभिकरण के विभिन्न स्तर अत्यन्त गुम्फित हैं। भारत में निर्देशन की प्रक्रिया अनेक स्तरों से होकर गुजरती है। इन प्रमुख स्तरों को हम निम्नांकित प्रकार से स्पष्ट कर सकते हैं-

1. राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
2. राज्य स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
3. मण्डल स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
4. विश्वविद्यालय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
5. महाविद्यालय एवं विद्यालय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
6. निजी स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
7. व्यावसायिक स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
8. सामाजिक स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
9. शैक्षिक स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।
10. मनोविज्ञान स्तर पर निर्देशन के अभिकरण।

यद्यपि यहाँ पर हम पाठ्यक्रम की आवश्यकताओं के अनुकूल केवल राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर निर्देशन के अभिकरणों की चर्चा करेंगे। तथापि निर्देशन के अन्य स्तरों पर अभिकरणों के बारे में पाठक अवश्य जान लें कि विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, विद्यालय आदि अपने स्तर पर निर्देशन के विभिन्न सरकारी, अर्धसरकारी अथवा गैर सरकारी स्तर के अभिकरणों से निर्देशन सेवायें प्राप्त करते रहते हैं। सक्षम एवं बड़ी संस्थायें स्वयं अपने लिए तथा दूसरी संस्थाओं के लिए भी अपने स्तर पर निर्देशन के अभिकरण स्थापित करती हैं। निर्देशन की ये सेवायें सशुल्क एवं निशुल्क दोनों ही प्रकार की हो सकती हैं।

राज्य स्तर के अनेक अभिकरण जिनके बारे में हम आगे के पृष्ठों में अध्ययन करेंगे अपनी शाखायें मण्डल, जिला एवं तहसील आदि स्तर पर खोलने के लिए भी स्वतन्त्र होते हैं, इसी प्रकार विभिन्न व्यावसायिक संगठन अपने कर्मचारियों की आवश्यकता पूर्ति के लिए अपने अभिकरण स्थापित करते हैं। कुछ व्यवसायिक संगठन आवश्यकतानुसार अन्य संगठनों को भी निर्देशन की सेवायें प्रदान करते हैं।

भारतवर्ष समाज कल्याण की भावना से ओत-प्रोत देश है इसमें अनेक सामाजिक संगठन आवश्यकतानुसार स्वेच्छा से निर्देशन सेवायें प्रदान करते रहते हैं। अनेक लोग निजी स्तर पर भी निर्देशन सेवायें देने का कार्य करते हैं।

आगे की पंक्तियों में राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर निर्देशन के अभिकरणों की चर्चा की गई है।

#### 4.5.1 राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण Agencies of Guidance at National Level

राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरणों को अध्ययन की सुविधा के लिए प्रमुख रूप से चार भागों में बाँटा जा सकता है -

- i. सरकारी अभिकरण
- ii. गैर सरकारी अभिकरण
- iii. अन्य अभिकरण
- iv. पत्र पत्रिकायें

### सरकारी अभिकरण Government Agencies

केन्द्र सरकार के द्वारा संचालित निर्देशन के अभिकरणों में से कुछ प्रमुख अभिकरण निम्नवत् हैं -

- i. **राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT)**- मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत आने वाली यह संस्था देश भर में शैक्षिक निर्देशन कार्य का समन्वय करने में प्रमुख भूमिका निभाती है। इसके साथ-साथ यह संस्था निर्देशन कार्य करने वाले लोगों को प्रशिक्षण देने का भी कार्य करती है; जिसमें प्रमुख रूप से मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण तथा निर्देशन विद्या का प्रशिक्षण होता है। NCERT के द्वारा निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का सृजन तथा विद्यालयों में इनका वितरण होता रहता है। यह संस्था निर्देशन कार्य के लिए अनुसंधान का कार्य प्रमुख रूप से करती रहती है।

सन् 1954 में केन्द्रीय शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन ब्यूरो की स्थापना की गयी थी जो बाद में NCERT में मिल गया। वर्तमान में यह NCERT के मनोविज्ञान विभाग के साथ मिलकर शैक्षिक निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन करता है तथा यह ब्यूरो निर्देशन सेवायें प्रदान करने के लिए अनुसंधान का कार्य भी करता है।

- ii. **पुनर्स्थापना एवं नियोजन निदेशालय Directorate General of Rehabilitation and Employment** -भारत विभाजन के समय पंजाब तथा बंगाल प्रान्त से विस्थापित लोगों को पुनः स्थापित करने के लिए केन्द्रीय श्रम मंत्रालय के अन्तर्गत इस विभाग की स्थापना हुई। अपने उक्त कार्य को भली-भाँति सम्पन्न कर लेने के पश्चात यह विभाग अब भारतवर्ष के रोजगार कार्यालय को संचालित करने का कार्य करता है। छब्बत्ज की ही तरह निर्देशन तथा नियोजन कार्य से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन करना इसकी कार्यप्रणाली का ही अंग है निर्देशन क्षेत्र से सम्बन्धित अनुसंधान तथा प्रशिक्षण कार्यों में भी यह विभाग बढ़ चढ़ कर भागीदारी करता है।

पुनर्स्थापना एवं नियोजन निदेशालय के अन्तर्गत कार्य करने वाला रोजगार कार्यालय 1957 से देश भर में व्यावसायिक निर्देशन के सम्बन्ध में अपनी सेवायें प्रदान कर रहा है। यह विद्यालयों में जाकर विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित निर्देशन की सेवायें प्रदान करता है। इसके साथ-साथ यह निर्देशन प्रदाताओं को प्रशिक्षण भी प्रदान करता है। रोजगार कार्यालय द्वारा निर्देशन सेवाओं से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त विभिन्न दृश्य श्रव्य सामग्री का उपयोग करके भी यह अपनी निर्देशन सेवाओं का विस्तार कर रहा है। यह देश भर में 500 से भी अधिक शाखाओं के साथ रोजगार से

सम्बन्धित आंकड़ों का संग्रहण करके देश के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्तमान में उत्तर-प्रदेश तथा कुछ अन्य राज्यों में राज्य सरकारों द्वारा रोजगार कार्यालय के माध्यम से बेरोजगारी भत्ता भी वितरित किया जा रहा है। यह विभाग रोजगार कार्यालय के साथ मिलकर समय-समय पर विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए राष्ट्र के युवाओं को निःशुल्क कोचिंग भी प्रदान करता है। किन्तु, उसकी यह सेवा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं विकलांग वर्ग के युवाओं तक ही सीमित है। रोजगार कार्यालय निर्देशन कार्य के लिए केवल सैद्धान्तिक पक्ष पर ही बल नहीं देता अपितु यह निर्देशन के क्रियात्मक पहलू पर भी उतना ही ध्यान देता है। रोजगार कार्यालय ने शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने के लिए अनेक मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण भी प्रदान किये हैं।

- iii. **रोजगार सेवाओं के लिए केन्द्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान Central Institute for Research and Training in Employment Services (CIRTES)**- केन्द्रीय श्रम मंत्रालय के अधीन यह संस्थान विभिन्न व्यवसायों पर अनुसंधान का कार्य करता है। विभिन्न व्यवसायों के लिए इस संस्थान के द्वारा कैरियर से सम्बन्धित साहित्य प्रकाशित किया जाता है। रोजगार अधिकारियों को प्रशिक्षण देने का कार्य भी इसके द्वारा किया जाता है।

### गैर सरकारी अभिकरण Non - Government Agencies

- i. **अखिल भारतीय शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन संघ All India Educational and Vocational Guidance Association** - जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है यह संघ अखिल भारतीय स्तर पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के कार्य को आगे बढ़ाता है। इसके कार्यों में शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन तथा अनुसंधान कार्य सम्मिलित है।

### अन्य अभिकरण Other Agencies

भारतवर्ष विविधताओं का देश है। यहां अनेक संस्कृतियाँ निवास करती हैं। भारतीय संस्कृति मूल रूप से सेवा की संस्कृति है। इसलिए यहाँ सेवा के कार्य को आवश्यक वातावरण सहजता से उपलब्ध हो जाता है। भारतवर्ष में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनेक गैर सरकारी संगठन कार्यरत हैं, जो अपनी मूल संस्था के सिद्धान्तों पर चलते हुए विभिन्न प्रकार की सामाजिक सेवाओं को सम्पादित करते रहते हैं। उनकी सेवाओं के इसी क्रम में शैक्षिक व्यावसायिक निर्देशन आदि की कड़ी भी सम्मिलित है। ये संगठन समय-समय पर आवश्यकतानुसार कभी स्वतन्त्र रूप से और कभी सरकारी अभिकरणों के साथ मिलकर निर्देशन कार्य को सम्पादित करते हैं। इनमें प्रमुख रूप से रोटरी क्लब, दिव्य जीवन संघ, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास आदि का नाम लिया जा सकता है-

**पत्र-पत्रिकायें Magazines & Newspapers**

- i. **राष्ट्रीय समाचार पत्र National Newspaper** - राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित समाचार पत्र निर्देशन कार्य में बहुत बड़ी भूमिका का निर्वहन करते हैं। इसलिए उन्हें निर्देशन का अभिकरण कहा जा सकता है। भारत में मुख्य रूप से यह कार्य हिन्दुस्तान टाइम्स, टाइम्स ऑफ इंडिया, हिन्दुस्तान, दैनिक जागरण, अमर उजाला, नव भारत, बिजनेस स्टैन्ड, इकॉनामिक्स टाइम्स, द हिन्दू, जनसत्ता आदि समाचार पत्र करते हैं। यह समाचार पत्र समय-समय पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक अवसरों पर लेख प्रकाशित करते हैं। अपने पाठकों को विज्ञापन एवं अन्य माध्यमों से शैक्षिक एवं व्यावसायिक अवसरों की सूचना देते हैं। समय-समय पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक अवसरों पर प्रकाशित समाचारों के माध्यम यह समाचार पत्र निर्देशन के क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- ii. **राष्ट्रीय पत्रिकायें National Magazine** - भारतवर्ष में कुछ प्रकाशन समूह इस प्रकार के हैं जो भारतीय युवाओं तथा अन्य नागरिकों को शैक्षिक, व्यवसायिक एवं मनोवैज्ञानिक निर्देशन प्रदान करने के लिए पत्रिकाओं का प्रकाशन करते हैं। ये पत्रिकायें भारतीय युवाओं को रोजगार के अवसरों की सूचना देती हैं। विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कैसे करें इस बारे में बताती हैं। इसके साथ-साथ ये पत्रिकायें अपने पाठकों की मानसिक क्षमता बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार की विधियाँ भी बताती हैं।  
समसामयिक विषयों पर लेखों का प्रकाशन करना, अपने पाठकों को सामान्य ज्ञान एवं सामान्य सूचनायें प्रदान करना, प्रतियोगी परीक्षायें देने के लिए अपने पाठकों को प्रशिक्षित करना तथा विशेष प्रकार के व्यवसायों के लिए मार्गदर्शन प्रदान करना इन पत्रिकाओं का मुख्य कार्य है। राष्ट्रीय स्तर पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्गदर्शन प्रदान करने वाली कुछ पत्रिकाओं के नाम इस प्रकार हैं- प्रतियोगिता दर्पण, सक्सेस मिरर, कम्पटीशन सक्सेस, समसायिकी आदि। राष्ट्र के नागरिकों को मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित निर्देशन प्रदान करने के लिए निरोगधाम, निरोगी दुनिया आदि अनेक पत्रिकायें अलग से प्रकाशित होती हैं। इसी प्रकार योग संदेश, दिव्य जीवन, रस वृन्दावन जैसी पत्रिकायें सामाजिक तथा सांस्कृतिक जागरूकता फैलाने के साथ-साथ अपने पाठकों को योग विज्ञान से सम्बन्धित निर्देशन प्रदान करती हैं।
- iii. **रोजगार समाचार Employment News**-भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी में रोजगार समाचार तथा अंग्रेजी में Employment News नामक समाचार पत्र प्रकाशित किया जाता है जिसमें विभिन्न प्रकार के शैक्षिक एवं व्यावसायिक अवसरों की सूचना मुख्य रूप से दी जाती है इस समाचार पत्र में सम्पादकीय के रूप में समसामयिक विषय पर एक महत्वपूर्ण लेख नियमित रूप से रहता है। इतना ही नहीं यह समाचार पत्र विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं से सम्बन्धित प्रश्न भी प्रकाशित करता है।

#### 4.5.2 राज्य स्तर पर निर्देशन के अभिकरण Agencies of Guidance at State Level

राष्ट्रीय स्तर की ही भाँति राज्य स्तर पर भी निर्देशन के अभिकरणों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है -

- i. सरकारी
- ii. गैर सरकारी
- iii. अन्य अभिकरण
- iv. पत्र-पत्रिकायें

वास्तव में राष्ट्रीय स्तर के अभिकरणों का विस्तार ही राज्य स्तर तक जाता है इस बात को हम आगे की पंक्तियों का अध्ययन करके भली-भाँति समझ सकते हैं।

#### राज्य स्तर पर निर्देशन के सरकारी अभिकरण Government Agencies of Guidance at State Level

- i. **राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् SCERT- NCERT** की ही तरह यह संस्था भी शैक्षिक निर्देशन कार्य का समन्वय करती है। अन्तर केवल इतना है कि यह संस्था अपने समस्त कार्य केवल राज्य स्तर पर सम्पादित करती है। राज्य स्तर पर निर्देशन कार्य करने वाले लोगों को प्रशिक्षण देना जिसमें निर्देशन कला, मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण, निर्देशन से सम्बन्धित सूचनाओं को संकलित एवं प्रसारित करने के उपाय आदि सम्मिलित हैं इस संस्था के प्रमुख कार्य हैं। इसके अतिरिक्त यह संस्था निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन भी करती है। विद्यालयों में निर्देशन सेवा का विस्तार करती है। कैरियर मास्टर को प्रशिक्षण देती है। व्यावसायिक सूचनाओं को एकत्र एवं प्रसारित करती है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि यह संस्था राज्य स्तर पर निर्देशन से सम्बन्धित लगभग वह समस्त कार्य सम्पादित करती है जिन कार्यों को राष्ट्रीय स्तर पर NCERT सम्पादित करती है। अलग-अलग राज्यों में यह संस्था अलग-अलग नामों से जानी जाती है अथवा हम यह भी कह सकते हैं कि भारत के विभिन्न राज्यों में निर्देशन कार्य करने वाली संस्थाएं न तो समान नाम से जानी जाती हैं और न ही उनकी सम्बद्धता आदि के नियम समान हैं। किन्तु, यह बात हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि राज्य स्तर पर भारतवर्ष के प्रत्येक राज्य में शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने, शिक्षा एवं व्यवसाय से सम्बन्धित सूचनाओं का संकलन एवं प्रसारण करने, शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन करने तथा निर्देशन कार्य करने वाले कार्मिकों को प्रशिक्षण देने के लिए किसी न किसी संस्था का अस्तित्व अवश्य है और यह संस्था सीधे तौर पर राज्य सरकार से शक्ति और सम्बद्धता प्राप्त है और उसके लिए उत्तरदायी भी है। इस संस्था को किसी राज्य में SCERT राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, किसी राज्य में राज्य शैक्षिक एवं

व्यावसायिक निर्देशन प्राधिकरण, किसी राज्य में राज्य निर्देशन संस्थान आदि नामों से जाना जाता है।

- ii. **राज्य सेवायोजन निदेशालय State Directorate of Employment** -प्रत्येक राज्य का अपना एक सेवायोजन निदेशालय होता है जहाँ पर रोजगार से सम्बन्धित न केवल सूचनायें एकत्र की जाती हैं अपितु यह निदेशालय राज्य के लोगों को रोजगार के अवसर भी उपलब्ध कराता है। यह निदेशालय रोजगार कार्यालयों के माध्यम से व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करता है। राज्य के नागरिकों को व्यावसायिक अवसरों की सूचना देता है विभिन्न नौकरियों एवं व्यवसायों के लिए वर्ग विशेष के अभ्यर्थियों को निःशुल्क प्रशिक्षण प्रदान करता है। राज्य में व्यावसायिक निर्देशन कार्यक्रम का विकास करता है, भिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित सूचनाओं के लिए साहित्य का प्रकाशन एवं वितरण करता है तथा राज्य में व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने वाले व्यक्तियों को समय-समय पर उनकी आवश्यकता के अनुसार प्रशिक्षण प्रदान करता है तथा उन्हें साहित्य भी उपलब्ध कराता है। यद्यपि भारतवर्ष में निर्देशन के अनेक अभिकरण अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग प्रकार से कार्यरत हैं। समय तथा स्थान के अभाव के कारण यहाँ पर सबकी चर्चा करना सम्भव नहीं है इसलिय प्रमुख रूप से कार्य करने वाली दो प्रमुख अभिकरणों की चर्चा यहाँ हम कर चुके हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ राज्यों में विश्वस्तरीय शिक्षा एवं व्यवसाय प्राप्त कराने के लिए सरकारी अभिकरण निर्देशन का कार्य करते हैं। ये अभिकरण विदेशों में विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश, विदेशी पाठ्यक्रमों की सूचना, विदेशों में व्यवसाय के अवसर आदि की जानकारी प्रदान करने के लिए निर्देशन का कार्य करते हैं।

इसी प्रकार कुछ राज्यों में विशिष्ट प्रकार की सेवाओं को प्रदान करने के लिए, निर्देशन केन्द्र कुछ राज्यों में मनोवैज्ञानिक निर्देशन प्रदान करने के लिए मनोविज्ञान केन्द्र तथा कुछ राज्यों में कृषि हेतु निर्देशन प्रदान करने के लिए कृषि निर्देशन की व्यवस्था की गयी है।

### राज्य स्तर पर निर्देशन के गैर सरकारी अभिकरण Non Government Agencies of Guidance at State Level

- i. **राज्य शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन संघ State Bureau of Educational and Vocational Guidance** - अखिल भारतीय शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन संघ की तर्ज पर राज्यों में भी शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन का कार्य किया जाता है। यह निजी संस्था NCERT, SCERT आदि की ही तरह शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने के साथ-साथ निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन भी करती है।

**अन्य अभिकरण Other Agencies**

रोटरी क्लब, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, दिव्य जीवन संघ आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय गैर सरकारी संगठन अलग-अलग राज्यों में अपने स्तर पर विभिन्न प्रकार के निर्देशन का कार्य अवसरानुकूल स्वतन्त्र रूप से, परस्पर मिलकर अथवा सरकारी अभिकरणों के साथ मिलकर सम्पादित करती हैं।

**पत्र-पत्रिकायें**

प्रत्येक राज्य में राज्य सरकार द्वारा तथा निजी प्रकाशकों द्वारा नियतकालीन तथा अनियतकालीन, पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित की जाती हैं जिनमें शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन से सम्बन्धित अनेक सूचनायें, रोजगार के अवसरों से सम्बन्धित निर्देशनात्मक सूचनायें तथा विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश से सम्बन्धित निर्देशनात्मक सूचनायें सम्मिलित होती हैं। राज्य स्तर पर प्रकाशित होने वाले विभिन्न समाचार पत्र तथा टीवी चैनल भी निर्देशन से सम्बन्धित सामग्री अपने नियत अंकों में तथा समय-समय पर अपने विशेष अंक प्रकाशित एवं प्रसारित करके निर्देशन प्रदान करते रहते हैं।

**4.5.3 स्थानीय स्तर पर निर्देशन के अभिकरण Agencies of Guidance At Local Level**

पूर्वोक्त वर्णित विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी अभिकरण मण्डल एवं जिला स्तर पर भी निर्देशन से सम्बन्धित अपनी गतिविधियों को संचालित करते हैं अनेक स्थानीय संगठन निर्देशन के इस पुनीत कार्य में अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं।

उच्च शिक्षा में विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों द्वारा तथा माध्यमिक शिक्षा में जिला विद्यालय निरीक्षक एवं विद्यालयों द्वारा समय-समय पर औपचारिक एवं अनौपचारिक रूप से निर्देशन का कार्य किया जाता है।

साधन सम्पन्न विश्वविद्यालय, महाविद्यालय एवं विद्यालय अपने स्तर पर निर्देशन सेवायें प्रदान करने के लिए निर्देशन अध्यापक की नियुक्ति, निर्देशन सम्बन्धी साहित्य का प्रकाशन तथा साक्षात्कार आदि के द्वारा निर्देशन सेवायें प्रदान करते हैं। समय-समय पर सरकारी गैर सरकारी अभिकरणों की मदद करते रहते हैं।

**उपसंहार**

भारत में विभिन्न स्तरों पर निर्देशन के विभिन्न अभिकरणों का अध्ययन करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भारतवर्ष में हमारी शैक्षिक, व्यावसायिक, मनोवैज्ञानिक एवं निजी आवश्यकताओं की पूर्ती करने के लिए निर्देशन के अनेक अभिकरण उपलब्ध हैं। ये समस्त अभिकरण पूरी तत्परता के साथ मानव विकास में सहायता करने को उद्यत हैं। किन्तु यहाँ हम यह भी जान लें कि जिस प्रकार से हमारे समक्ष बहुत मनोरम दृश्य उपस्थित होने पर भी नेत्र बन्द कर लेने से हम उसे देखने में सक्षम नहीं होते और जब तक हम नेत्र नहीं खोलते तब तक वह मनोरम दृश्य हमारे

लिए कोई अस्तित्व नहीं रखता उसी प्रकार राष्ट्रीय स्तर से स्थानीय स्तर पर सरकारी, गैर सरकारी तथा अन्य अनेक अभिकरणों के सक्रिय होते हुए भी यदि हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इन अभिकरणों के पास नहीं जाते तब इन अभिकरणों का हमारे लिए कोई अस्तित्व नहीं।

आइये निर्देशन के इन अभिकरणों का संज्ञान हो जाने के पश्चात हम स्वयं भी इन अभिकरणों का प्रयोग करे तथा अपने आस-पास उपस्थित प्रत्येक उस व्यक्ति की भी सहायता करें जिसे निर्देशन की आवश्यकता है। ऐसा करके हम मानव संसाधन के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करेंगे।

---

#### 4.7 सारांश

निर्देशन जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है यह प्रक्रिया नितान्त निजी स्तर से लेकर संगठित रूप से सामूहिक स्तर तक सम्पादित की जा सकती है। शेष विश्व की तरह भारतवर्ष में भी निर्देशन के अनेक अभिकरण कार्यरत हैं। निर्देशन के ये अभिकरण भारतीय नागरिकों को राष्ट्रीय स्तर, राज्य स्तर तथा स्थानीय स्तर पर शैक्षिक, व्यावसायिक, मनोवैज्ञानिक एवं निजी निर्देशन प्रदान करने का कार्य करते हैं। निर्देशन के इन अभिकरणों को हम पूर्वोक्त सभी स्तरों पर सरकारी, गैर सरकारी, अन्य अभिकरण तथा पत्र-पत्रिकाओं के रूप में विभाजित कर सकते हैं। निर्देशन के उपरोक्त समस्त अभिकरण उपरोक्त प्रकार का निर्देशन प्रदान करने के साथ-साथ निर्देशन सम्बन्धी साहित्य का प्रकाशन, आंकड़ों तथा सूचनाओं का संकलन तथा निर्देशन कार्य के लिए प्रशिक्षण प्रदान करने का कार्य भी करते हैं। निर्देशन के उपरोक्त अभिकरण अकेले, अन्य अभिकरणों के साथ मिलकर, अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर निर्देशन का कार्य करते हैं। तकनीकी एवं सामाजिक जटिलताओं के इस युग में पग-पग पर निर्देशन की आवश्यकता होती है अतः हमारे लिए निर्देशन के इन अभिकरणों के बारे में जानना तथा उनका उपयोग करना बहुत जरूरी है।

---

#### 4.8 संदर्भ ग्रंथ

1. Agrawal Rashmi, (Education Vocational Guidance and counseling) Shipra Publications, Delhi- 11092 (2006)
2. Suri S.P., T.S. Sodhi, (Guidance and counseling), Bawa Publication Patiala (1997)
3. Sharma R.A., (Career information in career guidance) Surya Publication Meerut (2004)
4. Sharma R.A (Guidance and counseling) Vinay Rakheia c/o R. Lall book Depot Meerut (2010)
5. सिंह रामपाल राधावल्लभ उपाध्याय, (शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन) विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
6. जायसवाल सीताराम (शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श), अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा (2009)

---

**4.9 निबंधात्मक प्रश्न**

---

1. प्राचीन भारत में औपचारिक रूप से निर्देशन के अभिकरण की आवश्यकता क्यों नहीं थी ?
2. भारत में व्यावसायिक निर्देशन का पहला अभिकरण कब और कहाँ स्थापित हुआ ?
3. आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में किस ब्यूरो की स्थापना हुई तथा इसके क्या कार्य थे ?
4. माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन कब हुआ?
5. केन्द्रीय शिक्षा तथा व्यावसायिक ब्यूरो की स्थापना कब हुई।
6. कोठारी कमीशन का गठन कब हुआ?
7. निम्नांकित के पूरे नाम बताइये - NCERT, SCERT
8. राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर निर्देशन के कौन-कौन से अभिकरण हैं?
9. भारतीय परिवेश में निर्देशन के अभिकरणों की उपयोगिता एवं कार्यप्रणाली पर एक लघु निबन्ध लिखिए।

---

**इकाई-5 विशिष्ट बालकों की समस्याएँ एवं आवश्यकताएं, विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों की सहायता में शिक्षक की भूमिका, प्रतिभाशाली एवं सृजनात्मक बालकों का निर्देशन**

---

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 विशिष्ट बालकों की समस्याएँ एवं आवश्यकताएं
- 5.4 विशेष आवश्यकता वाले बालकों की सहायता में शिक्षक की भूमिका
- 5.5 प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालकों का मार्गदर्शन
- 5.6 सारांश
- 5.7 शब्दावली
- 5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 5.9 संदर्भ ग्रन्थ
- 5.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

---

### 5.1 प्रस्तावना

निर्देशन एक प्रकार की मार्गदर्शन प्रक्रिया है। निर्देशन की सहायता से विद्यार्थियों को अपने शैक्षिक तथा व्यावसायिक प्रक्रिया में सहायता प्राप्त होती है। अतः हम कह सकते हैं कि निर्देशन एक महत्वपूर्ण तथा आवश्यकता की दृष्टि से विद्यार्थियों के लिए अति उपयोगी है। निर्देशन की सहायता से अध्यापक भी अपने विद्यार्थियों की मदद प्रत्येक क्षेत्र में कर सकते हैं। व्यक्तिगत विभिन्नता की दृष्टि से देखा जाए तो प्रत्येक बालक की कुछ विशेषता होती है। प्रत्येक बालक का अपनी अभिरूचि, अभिवृत्ति होती है। अतः हम कह सकते हैं कि प्रत्येक बालक में कुछ न कुछ विशिष्टता होती है। हम देखते हैं कि सभी बालक अलग-अलग अधिगम योग्यताओं वाले होते हैं। इन बालकों में कुछ तेजी से सीखते हैं तथा कुछ धीरे-धीरे सीखते हैं। कुछ बालकों को सीखने में समस्याएं आती हैं तथा बच्चे आसानी से सीख लेते हैं। अध्ययन-अध्यापन में प्रत्येक अध्यापक को प्रतिदिन इन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक अध्यापक को निर्देशन प्रक्रिया का भली प्रकार ज्ञान होना आवश्यक होता है। अध्यापक के लिए प्रत्येक बालक एक जैसा है तथा उन्हें

सीखने और कार्य करने में सहायता की आवश्यकता होती है। निर्देशन विषय का ज्ञान ही एक शिक्षक को इन विशिष्ट बालकों की समस्याओं एवं आवश्यकताओं से परिचित कराता है। इस इकाई में विशिष्ट बालकों की समस्याओं तथा आवश्यकताओं और अध्यापक के नाते इन समस्याओं वाले विद्यार्थियों का निर्देशन कैसे कर सकते हैं, के बारे में बताने का प्रयास किया गया है।

## 5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

1. विशेष समस्याओं वाले बच्चों की समस्याओं से अवगत हो पायेंगे।
2. विशेष समस्याओं वाले बच्चों हेतु निर्देशन की भूमिका को बता पायेंगे।
3. विशिष्ट बालकों की सहायता हेतु अध्यापक की भूमिका को स्पष्ट कर पायेंगे।
4. प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालकों का मार्गदर्शन किस प्रकार किया जाए इस पर चर्चा कर सकेंगे।
5. सृजनात्मक एवं प्रतिभाशाली बालकों की विशेषता को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
6. प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालकों में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
7. विशेष बालकों के लिए किस प्रकार की शिक्षा एवं व्यावसायिक चुनौतियाँ होती है इसका वर्णन कर सकेंगे।

## 5.3 विशिष्ट बालकों की समस्याएँ एवं आवश्यकताएँ

विशिष्ट बालक से आशय उत्तम या अत्याधिक प्रतिभा सम्पन्न छात्र से नहीं है। विशिष्ट बालक सामान्य से उच्च एवं निम्न दोनों ही श्रेणियों के हो सकते हैं। विशिष्ट बालक मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक गुणों में सामान्य बालकों से भिन्न होता है। ऐसे बालकों के लिए कुछ अतिरिक्त अनुदेशन तथा मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है तथा जिसकी सहायता से ऐसी दशा में उनका सामर्थ्य का सामान्य बालकों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है -

विशिष्ट बालकों के लक्षण, गुण, स्वरूप सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं। एक विशिष्ट बालक वह है जो सामान्य शिक्षा कक्ष तथा सामान्य शिक्षा कार्यक्रमों से पूर्णतया लाभान्वित नहीं हो सकता क्योंकि उसके विकास की सामर्थ्य अधिक होती है।

एक विशिष्ट बालक शारीरिक मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक तथा शैक्षणिक उपलब्धियों जैसी सभी धाराओं में सम्मिलित होता है।

विशिष्ट बालक की अधिकतम सामर्थ्य के विकास के लिये उसे स्कूल की कार्यप्रणाली तथा उसके साथ किये जाने वाले व्यवहार में परिवर्तन की आवश्यकता होती है।

एक विशिष्ट बालक शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक सामाजिक आधार पर सामान्य बालक से बिल्कुल हट के होता है। सामान्य बालक की अपेक्षा उसका विकास तीव्र गति से होता है।

प्रत्येक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनेक बालक आते हैं। इनके अलावा कुछ ऐसे बालक भी आते हैं, जिनकी अपनी कुछ शारीरिक और मानसिक विशेषताएं होती हैं। इनमें कुछ प्रतिभाशाली कुछ मन्दबुद्धि, कुछ पिछड़े हुए और कुछ शारीरिक दोषों वाले होते हैं। इनको विशिष्ट बालकों की संज्ञा दी जाती है जो निम्न प्रकार के हैं -

- (1) प्रतिभाशाली बालक (2) सृजनात्मक बालक (3) पिछड़े बालक (4) मन्द बुद्धि बालक
- (5) विकलांग बालक (6) जटिल अथवा समस्यात्मक (7) श्रवण बाधित बालक
- (8) अधिगम असमर्थी बालक (9) अस्थि बाधित बालक (10) बहुविकारों से पीड़ित बालक
- (11) दृष्टि बाधित बालक (12) समाज में असुविधात्मक बालक (13) विशिष्ट स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायुक्त बालक (14) वाणी बाधित बालक (15) संवेगात्मक रूप से विकसित बालक
- (16) अपराधी बालक

### विशिष्ट बालको की समस्याएँ

अधिकांश बच्चों को कभी-न-कभी व्यवहारगत समस्याएँ होती हैं। व्यवहारगत समस्याएँ बालक की अंतर्दशाओं या प्रायः ध्यान में न आने वाले बाह्य दबावों या दूसरों द्वारा नहीं समझे जाने वाली बातों से उत्पन्न होती हैं। व्यवहारगत समस्याएँ पलायन से लेकर उत्तेजित होने विरोध शत्रुता प्रकट करने एवं अत्यन्त आक्रामक रूप अपना लेने के रूप में प्रकट होती हैं। कक्षा में विद्यार्थी व्यवहारगत समस्याओं का सामना अपने ढंग से करने का प्रयास करते हैं। जो कभी-कभी दूसरों के लिए दुःखदायी हो जाता है।

जिस प्रकार मानसिक रूप में बालक धीरे-धीरे सीखते हैं। उसी प्रकार अन्य विशिष्ट बालक व्यवहारगत समस्याओं के कारण अपने विकास और अधिगम में गंभीर बाधा महसूस कर सकते हैं। अध्यापकों व माता पिता को अपने बच्चों की इस प्रकार की समस्याओं से निपटने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसी समस्याएँ प्रायः अधिगम प्रक्रिया में बाधा डालती हैं। अतः एक अध्यापक के लिए अपने विद्यार्थियों की प्रत्यक्ष दिखाई पड़ने वाली व्यवहारगत समस्याओं के कारणों को समझना जरूरी है, अन्यथा वह ऐसे विद्यार्थियों के साथ ऐसे तरीके से व्यवहार कर सकता है जिसके परिणाम गंभीर हो सकते हैं। व्यवहारगत समस्याओं से ग्रस्त विद्यार्थी अपने अध्यापकों के लिए प्रायः अत्यधिक कुंठित करने वाली समस्याएँ या लाभदायक चुनौतियाँ खड़ी कर देते हैं। इस प्रकार की विद्यार्थियों की शारीरिक आवश्यकताओं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं एवं शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति भली प्रकार समय पर होना चाहिए। विशिष्ट बालकों की समस्याएँ दो अवस्थाओं में होती हैं।

- □ विशिष्ट बच्चों की समस्याएँ

- □विशिष्ट किशोरों की समस्याएं

### विशिष्ट बच्चों की समस्याएं

बच्चों द्वारा अनुभव की जाने वाली कुछ समस्याएं निम्न होती हैं जैसे अत्यधिक शर्मीलापन, डरावनापन, आक्रामक व्यवहार, ध्यान आकर्षित करना, अति फुर्तीलापन, अत्यधिक निर्भरता, दिवास्वप्न देखना, पड़े रहना, धोखा देना और चोरी करना तथा शारीरिक विकलांग रूप से बालक के सामाजिक समायोजन में उत्पन्न कठिनाईयाँ उपहास के डर से सामान्य बच्चों के साथ खेल-कूद में सम्मिलित न होना, एकाकीपन आदि है। इन समस्याओं में से कई समस्याएं अध्यापक, माता-पिता द्वारा 'पुरस्कार' का प्रयोग करके, जैसे - प्रशंसा, खिलाना तथा खिलौन का प्रयोग करके हल की जा सकती है। माता-पिता और अध्यापकों को इस बात के लिए कि वे ऐसी समस्याओं वाले बालकों को इन पुरस्कारों को प्राप्त करने के लिए उपयुक्त व्यवहार में लगाने हेतु प्रोत्साहित करें प्रशिक्षित किया जा सकता है तथा विकलांग बच्चों के समस्याओं को जन्म देने वाली सामाजिक स्थितियों को परिवर्तित करना तथा लोगों को विकलांग बच्चों के प्रति अपने व्यवहार में परिमार्जन तथा साथ ही साथ विचारों में परिवर्तन हेतु समझ पैदा करनी चाहिए। प्रत्येक मनुष्य की कुछ मानवीय आवश्यकताएँ होती है। जो इस प्रकार है-

- शारीरिक आवश्यकताएँ
- सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ
- प्यार और अपनत्व
- आत्म सम्मान की आकांक्षा
- आत्मसिद्धी

अतः इस प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति होने पर विशिष्ट बालकों के समायोजन में किसी प्रकार की समस्या उत्पन्न नहीं होगी।

### विशिष्ट किशोरों की समस्याएँ

किशोरावस्था की मुख्य पहचान है, प्रायः स्वतंत्रता के लिए भरपूर प्रयास करना और वयस्क सत्ता से छुटकारा पाने हेतु बगावत करना। माता-पिता, अभिभावकों तथा विद्यालयीन अधिकारियों से खटपट, नशीले पदार्थों का सेवन, कर्तव्य पलायन, चोरी और लैंगिक दुराचार किशोरों की सामान्य समस्याएँ है। ऐसे अनिच्छुक किशोर अपनी समस्याओं के लिए दूसरों को दोष दे सकते हैं और उनमें अपने अपने व्यवहार को बदलने में अभिप्रेरणा की कमी पाई जाती है।

### विशिष्ट बालकों की आवश्यकताएँ

सामान्यतः देखा जाये तो विद्यार्थियों को ऐसी कई शारीरिक, मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक आवश्यकताएँ हैं जो उनकी वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक हैं। ये आवश्यकताएँ निम्नलिखित हैं-

#### शारीरिक आवश्यकता

- उचित भोजन व कपड़े
- दर्द व बीमारी से बचाव
- खेलने के लिए समय

#### मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ

- व्यक्ति के रूप में स्वीकरण
- संवेगात्मक संतुष्टि
- सतत् पुनः विश्वास
- स्नेह
- भावात्मक अनुक्रियाओं को नियंत्रित करने में सहायता
- दूसरे व्यक्तियों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए इसे सीखने के लिये सहायता प्रदान करना।

#### शैक्षिक आवश्यकताएँ

- ऐसी शिक्षा जो डर पर आधारित न हो
- अध्ययन में सहायता
- विद्यालय में समझपूर्ण और गरमजोशी भरा वातावरण
- उपलब्धि की भावना
- जीवन की चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए शिक्षा
- कुछ न कुछ नया सीखने के लिए प्रोत्साहन ये सभी आवश्यकताएँ परस्पर संबंधित हैं। ये सभी आवश्यकताएँ एक-दूसरी को प्रभावित करती हैं और बढ़ रहे बालक पर अपनी छाप छोड़ती हैं।
- पिछड़े हुए एवं प्रतिभाशाली बालकों के उत्थान हेतु विशेष सुविधाओं तथा साधनों की आवश्यकता है।  
प्रतिभाशाली बालकों को सामाजिक तथा वैयक्तिक आवश्यकताओं को ग्रहण करने के लिये अतिरिक्त सुविधाओं तथा साधनों की आवश्यकता होती है। अतः ऐसी सुविधायें

प्रतिभाशाली बालकों को उनकी कार्य करने की क्षमता से अवगत कराती है, तथा शारीरिक रूप से बाधित बालकों में उनके दोषों को कम करने का प्रयास करती है।

विद्यालय में विशिष्ट कक्षायें बाधित बालकों के लिये आवश्यक है क्योंकि उनकी शिक्षा के लिये विशिष्ट विधियों तथा प्रविधियों की आवश्यकता होती है।

सामान्यतः विलक्षण बालक अन्य सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक संवदेन शील होते हैं। उनकी सोचने की क्षमता अधिक तथा तीव्र होती है। वे कार्य के प्रति सावधान होते हैं, इसलिये उनके शिक्षण में विशेष विधियों व प्रविधियों की आवश्यकता होती है।

प्रतिभाशाली बालकों का बुद्धि स्तर सामान्य बालकों की अपेक्षा उँचा होता है। इसलिये प्रतिभाशाली बालकों की सामान्य बालकों के साथ समायोजित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

विशिष्ट बालकों का महत्व सामान्य कक्षा में आने वाली कठिनाईयों का समाधान खोजने द्वारा समझा जा सकता है। सामान्य कक्षा में अपंग तथा सामान्य अन्य विभिन्न श्रेणी के बालक होते हैं। वे शारीरिक रूप से बाधित और साधारण या प्रतिभाशाली बालकों के लिये अध्यापकों को ऐसी विधियाँ अपनानी पड़ती हैं जिससे उपरोक्त विभिन्न बालकों को शिक्षा देते समय कक्षा में अध्यापक को कुछ परेशानियों का सामना न करना पड़े। क्योंकि विद्यार्थियों को शिक्षक द्वारा दिया जाने वाला अनुदेशन समझने में समस्या आती है। कुछ विद्यार्थी अनुदेशन की सार्थकता के माप को कम समझते हैं ऐसी स्थिति में विशिष्ट कक्षाओं की आवश्यकता को गम्भीरता से समझा जाता है।

प्रयोगात्मक आँकड़े प्रकट करते हैं कि सामान्य शिक्षण संस्थाओं में प्रतिभाशाली बालकों के साथ सामाजिक कुप्रबन्ध उग्र रूप में पाया जाता है ऐसी परिस्थितियों में उनका व्यक्तिगत व्यवहार स्वीकार करने योग्य नहीं होता है क्योंकि वे स्वयं को उद्धण्डता के कार्यों में शामिल कर लेते हैं।

लगभग 5 प्रतिशत शारीरिक रूप से बाधित बालक विशिष्ट शिक्षा केन्द्रों में शिक्षा ग्रहण करते हैं। तथा उन्हें विभिन्न कार्य क्षेत्रों में शिक्षा दी जाती है। लेकिन अधिकांश ऐसी शिक्षण संस्थाएँ महानगरों य नगरों में स्थिति हैं। ऐसी शिक्षण संस्थाओं में ग्रामीण क्षेत्र के बालक शिक्षा ग्रहण करने नहीं जा पाते हैं। अतः इन क्षेत्रों में शिक्षा केन्द्रों के अति आवश्यकता है। इस प्रकार आप जान गए होंगे कि विशिष्ट बालकों की क्या-2 समस्याएं एवं क्या-क्या आवश्यकताएं होती हैं। साथ ही साथ आप यह भी समझ गए होंगे कि इन बालकों की आवश्यकताओं एवं समस्याओं को क्यों और किस प्रकार ध्यान में रखना चाहिए।

### अभ्यास प्रश्न

1. विशिष्ट बालक कितने प्रकार के होते हैं?
2. सृजनात्मक बालक किसे कहते हैं?
3. विशिष्ट बालक की कोई दो समस्याएँ बताइए?

#### 5.4 विशेष आवश्यकता वाले बालकों की सहायता में शिक्षक की भूमिका

विशिष्ट शिक्षा तथा सामान्य शिक्षा के उद्देश्य समान होते हैं-जैसे बालकों को उपयुक्त शिक्षा द्वारा मानवीय संसाधनों का उत्थान, देश का विकास, समाज का पुर्नगठन नागरिक विकास, व्यवसायिक कार्यकुशलता आदि प्रदान करना इन उद्देश्यों के अतिरिक्त विशेष शिक्षक की और महत्वपूर्ण जिम्मेदारियां होती हैं। जैसे-

- शारीरिक दोष युक्त बालकों की विशेष आवश्यकताओं का पूर्ण पहचान तथा निर्धारण करना।
- शारीरिक दोष की दशा में उससे पहले बालक कितनी गम्भीर स्थिति को प्राप्त हो उनके राकथाम के लिये पहले से ही उपाय करना। बालकों के सीखने की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए कार्य करने की नवीन विधियों द्वारा बालकों को शिक्षा देना।
- शारीरिक रूप से बाधित बालकों की शिक्षण समस्याओं की जानकारी देना तथा सुधार हेतु सामूहिक संगठन तैयार करना।
- शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1986-92) में स्वयं एवं जीवन यापन के आव्यूहों का क्रम बद्धता से निर्धारण करना।
- शारीरिक बाधित बालकों के माता-पिताओं को निपुणता तथा कार्यकुशलताओं के बारे में समझाना तथा बालकों की उत्पन्न कमियों के बारे में सुरक्षा तथा रोकथाम के उपाय करना।
- शारीरिक रूप से बाधित बालकों का पुर्नवास कराना।
- विशिष्ट बालकों के शैक्षिक चयन में अध्यापक के मार्गदर्शन का महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक अध्यापक विशिष्ट बालक के अभिरूचि तथा अभिक्षमता के आधार पर उसके शैक्षिक क्षेत्र में विषय चयन में सहायता प्रदान करता है।
- विशिष्ट बालकों के व्यवसायिक चयन में शिक्षक के मार्गदर्शन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षक बालकों की रूचि अनुसार तथा उपयोगी व्यवसायिक क्षेत्रों की जानकारी विशिष्ट बालकों को देते हैं। जिसकी सहायता से वो अपने लिये उपयोगी व्यवसाय की चयन करते हैं।

इस प्रकार आप समझ गए होंगे कि एक शिक्षक के रूप में विशेष आवश्यकता वाले बालकों की किस प्रकार मदद की जा सकती है।

#### अभ्यास प्रश्न

4. विशिष्ट बालक की सहायता एक अध्यापक किन-किन क्षेत्रों में करता है ?

5. विशेष आवश्यकता वाले बालक की सहायता करने में एक शिक्षक की कोई दो मुख्य भूमिका बताइए?
6. एक शिक्षक के व्यक्तित्व में कौन-कौन से गुण मुख्यतः विशिष्ट बालकों को अपनी ओर आकर्षित करता है ?

### 5.5 प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालक का मार्गदर्शन

प्रतिभाशाली बच्चे वे होते हैं जिनकी मानसिक अवस्था वास्तविक अवस्था से अच्छी होती है। साधारण बच्चों की अपेक्षा ये बच्चे कम समय में किसी भी काम को सीखते हैं या करते हैं। प्रतिभाशाली बालक शारीरिक गठन, सामाजिक समायोजन, व्यक्तित्व के गुणों, विद्यालय उपलब्धि एवं खेलों की सूचनाओं और रुचियों की बहुरूपता में बालकों से श्रेष्ठ होते हैं किसी भी राष्ट्र की उन्नति इन प्रतिभावान बालकों पर ही निर्भर होती है। इसलिए प्रतिभावान बालक वे हैं जिनकी बुद्धि-लब्धि उच्च है अर्थात् 140 से उपर होती है। वे सभी कार्यों को शीघ्र ही पूरा करा लेते हैं। यह समाज के सभी कार्यों में रुचि भी लेते हैं। उनके कार्य समाज की भलाई के लिए होते हैं।

इसके साथ ही साथ कभी कभी अध्यापक कक्षा में बालको के सम्पर्क में आते हैं जो कार्य को नया रूप देकर नई विधि से पूरा करने की योग्यता रखते हैं। ऐसे बालको के द्वारा आवश्यक रूप से अपनाई गई विधियों का प्रारूप बालकों के मस्तिष्क की नई खोज होती है, जो अध्यापक जानता भी नहीं है। ऐसे बालक सृजनात्मक कार्य करने में अपनी बुद्धि का भरपूर प्रयोग करते हैं तथा इनमें आत्मविश्वास अधिक होता है ऐसे बालकों के रचनात्मक कार्यों में स्कूली परिस्थितियों तथा सामान्य कार्यकलाप नियम आदि बांधा पहुँचाते हैं। ऐसे बालकों का व्यवहार कुछ अलग होता है। ऐसे बालक अपने कार्य में रुचि लेते हैं तथा साहसी होते हैं। ऐसे बालकों में आत्म-निर्भरता है। अध्यापकों को चाहिए कि इसप्रकार के बालकों के साथ अपने व्यवहार तथा कार्य प्रणाली में परिवर्तन करें तथा बालकों के रचनात्मक कार्यों को प्रोन्नत करने की दिशा में नये प्रयास करें। इसप्रकार हम सृजनात्मक बालकों को निम्नप्रकार से परिभाषित कर सकते हैं। जो बालक किसी नई वस्तु को उत्पन्न करने, बनाने या अभिव्यक्त करने की योग्यता या क्षमता रखते हैं उन्हें सृजनात्मक या रचनात्मक बालक कहते हैं।

### प्रतिभाशाली बालक का मार्गदर्शन

प्रतिभाशाली बालक अपने आयु से ज्यादा बुद्धिमान होते हैं। अतः इस प्रकार के बालक के मार्गदर्शन हेतु माता-पिता एवं इनके शिक्षक को अत्यधिक ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। प्रतिभाशाली बालक का बुद्धिस्तर सामान्य बालकों से ऊँचा होने के कारण कठिनाई का सामना करना पड़ता है। प्रतिभाशाली बालक सामान्य बालकों की अपेक्षा शीघ्र ही अपना कार्य समाप्त कर

लेता है। अतः शिक्षक प्रतिभाशाली बालक के पाठ्यक्रम निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। तथा मार्गदर्शन कर उपर्युक्त पाठ्यक्रम का निर्माण करते हैं। विशिष्ट कक्षायें बालकों में अधिक सीमा तक शिक्षण मार्गदर्शक के रूप में अग्रसर होने का अवसर प्रदान करता है। प्रतिभावान बालकों की यदि विशेष प्रकार की शिक्षा का प्रबन्ध न होता तो उनकी बुद्धि-लब्धि में गिरावट आने का भय रहता है। प्रत्येक कक्षा एवं स्कूल में प्रतिभावान बालक होते हैं। लेकिन इनका चयन करना आसान कार्य नहीं है। अतः सर्वप्रथम शिक्षक को बुद्धि परीक्षण, पिछली कक्षाओं में सफलता, माता-पिता के विचार, रूचि परीक्षण तथा अन्य शिक्षकों के मत से इन बालकों का चयन करना आवश्यक होता है। तत्पश्चात् इनका मार्गदर्शन करना चाहिए। प्रतिभावान बालकों के शैक्षिक पृष्ठभूमि को मजबूत बनाने हेतु शिक्षक एक मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है। तथा स्कूल में अच्छे पुस्तकालय, वाचनालय एवं प्रयोगशाला का सुविधा उपलब्ध कराता है इससे समायोजन के लिए अच्छा एवं अनुकूल वातावरण मिल जाता है। इन बालकों को उत्तरदायित्व का कार्य सौंपा जाता है। जिससे इनके अन्दर नेतृत्व का गुण विकसित हो सके। प्रतिभाशाली बालकों के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्यक्रम समृद्ध करने की सलाह शिक्षक देता है। क्योंकि ये बालक पाठ्यक्रम को समझने में बहुत कम समय लेते हैं, फलस्वरूप बचा हुआ समय किसी और कार्य में व्यस्त करके उपयोग करने की कोशिश करते हैं। शिक्षक इन बालकों के लिए विशेष प्रकार की शिक्षण विधियों का प्रयोग करता है। जिसकी सहायता से इन बालकों की मौखिक योग्यता, मानसिक योग्यता, रचनात्मक एवं प्रयोगात्मक कार्यों पर अधिक बल दिया जाता है। साथ ही साथ प्रतिभावान बालकों हेतु व्यक्तिगत शिक्षण विधि हेतु सुझाव दिया जाता है। शैक्षिक क्षेत्र में भाषण-प्रवचन आदि के प्रबन्ध में प्रतिभावान बालक अपनी योग्यताओं को सबके सामने व्यक्त करता है। जिससे उसके विकास में बढ़ोत्तरी होती है। शैक्षिक पृष्ठभूमि मजबूत होने के पश्चात् इन बालकों के रूचि अनुसार शिक्षक व्यवसायिक क्षेत्र के चयन में इन बालकों की सहायता करता है। शिक्षक एक मार्गदर्शक के रूप में इन बालकों की उपलब्धि तथा वर्तमान समय की मांग के अनुसार व्यवसाय चयन करने के लिए प्रेरित करते हैं। जिससे कम समय में ये बालक ज्यादा उन्नति कर सकें।

### सृजनात्मक बालक का मार्गदर्शन

जो बालक किसी नवीन स्थिति का निर्माण करने व जीवन में अभिनव व्यवहार करने की योग्यता रखते हैं उन्हें सामान्य बालकों से पृथक सृजनात्मक व रचनात्मक बालक कहते हैं। ऐसे बालक सृजनात्मक कार्य करने में अपनी बृद्धि का भरपूर प्रयोग करते हैं तथा इनमें आत्मविश्वास अधिक होता है। शैक्षिक दृष्टि से सृजनात्मक बालकों की पहचान करना अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण होता है। अतः एक शिक्षक बालकों में सृजनात्मकता के उचित स्वं वांछित विकास हेतु मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है। बालकों के माता-पिता और अभिभावकों को कर्तव्य है कि वे उनके लिए समुचित वातावरण की व्यवस्था करें ताकि सृजनात्मकता उचित रूप से विकसित हो सके। बालकों में सृजनात्मकता के उचित विकास के लिये आवश्यक है कि उनमें सदैव धनात्मक सामाजिक

अभिवृत्तियां विकसित हो वरना उनका साथियों, संरक्षकों एवं शिक्षकों से सम्बन्ध बिगड़ जाता है। बालकों को ज्ञान अर्जित करने के जितने अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। उतना ही अधिक बालकों का सृजनात्मक विकास होने की सम्भावना रहती है। इन बालकों का विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण, सामाजिक सुगमता तथा सफलता के अनुभव सृजनात्मक के विकास में सहायक होते हैं। एक शिक्षक मार्गदर्शक के रूप में बालकों को जिज्ञासा व्यक्त करने का अवसर देता है तथा उनका उचित समाधान भी कर सकते हैं आप जान गए होंगे कि शिक्षक मार्गदर्शक के रूप में उपयुक्त कारकों की सहायता से बालक को निरन्तर सृजनशील बनाए रखकर उनके भविष्य को सभ्य सुसंस्कृत व निर्माणक बनाया जा सकता है। शिक्षक इन बालकों के मजबूत शैक्षिक पृष्ठभूमि हेतु सृजनात्मक शिक्षण, विभिन्न प्रकार के बालकों में प्रोत्साहित करने वाले पाठ्यक्रम पर आधारित शिक्षण प्रदान करने का कार्य करता है। बालकों में सृजनात्मकता एक स्वाभाविक गुण है। बालकों में सृजनात्मकता एक स्वाभाविक गुण है। यह लगभग प्रत्येक बालक में पायी जाती है। किन्तु वातावरण व रहतन-सहन का इस प्रभाव अवश्य पड़ता है। क्योंकि विज्ञान और तकनीक से लेकर समाज के प्रत्येक कार्य क्षेत्र में सृजनात्मकता की आवश्यकता होती है इसी के अनुसार रचनात्मक बालकों का वर्गीकरण किया गया है जो इस प्रकार है। वैज्ञानिक सृजनात्मकता, तकनीकी सृजनात्मकता, साहित्यिक सृजनात्मकता, सौन्दर्ययात्मक सृजनात्मकता, शैक्षिक सृजनात्मकता, संगीतिक सृजनात्मकता, कलात्मक सृजनात्मकता, औद्योगिक सृजनात्मकता इतने प्रकार की सृजनात्मकता बालकों में पायी जाती हैं जो वह अपने विचारों एवं कार्यों में प्रदर्शित करता है और इन्हीं आधारों पर उनकी रचनात्मकता देखी जा सकती है।

अतः शिक्षक, मार्गदर्शक के रूप में उपरोक्त उनके रुचि के अनुसार सृजनात्मकता के आधार पर बालक विशेष की अलग-अलग व्यवसायिक क्षेत्र चयन करने का सुझाव प्रदान करता है। जिसकी सहायता से बालक कम समय में अच्छी उन्नति कर सकता है।

आप समझ गये होंगे कि किस प्रकार एक शिक्षण सृजनात्मक बालक के शैक्षिक तथा व्यवसायिक क्षेत्र के चयन में मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है। आप प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालक के कैरियर हेतु मार्गदर्शक के महत्व से भलिभाँति परिचित हो गये होंगे।

### अभ्यास प्रश्न

7. मार्गदर्शक के कोई दो महत्वपूर्ण कार्य बताइए ?
8. प्रतिभाशाली बालक का मार्गदर्शन किस प्रकार किया जाना चाहिए ?
9. सृजनात्मक बालक का मार्गदर्शन किस प्रकार किया जाना चाहिए ?
10. प्रतिभाशाली तथा सृजनात्मक बालकों में कोई दो अन्तर स्पष्ट कीजिए ?

### 5.6 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत विशिष्ट बालकों को किन-किन समस्याओं से जूझना पड़ता है तथा इन समस्याओं के सामाधान हेतु इन बालकों की क्या-क्या आवश्यकताएं होती हैं इस विषय में समझाया गया है। साथ ही साथ प्रस्तुत इकाई में इन विशेष आवश्यकता वाले बालकों की सहायता शिक्षक किस प्रकार करता है इसका वर्णन किया गया है अर्थात् शिक्षक किस प्रकार एक मार्गदर्शक बनकर विशेष बालकों के शैक्षिक तथा व्यावसायिक पृष्ठभूमि को उन्नत बनाने हेतु सुझाव अथवा सहायता प्रदान करता है। विशेष बालकों के अन्तर्गत आने वाले प्रतिभाशाली एवं सृजनात्मक बालकों का मार्गदर्शन शिक्षक किस प्रकार करता है, इसका वर्णन किया गया है। प्रस्तुत इकाई में विशेष बालक की अवधारणा से परिचित कराया गया है। इस इकाई में विशेष बालक, उनकी समस्याएं, आवश्यकताएं, उनकी सहायता में शिक्षक की भूमिका सृजनात्मक एवं प्रतिभाशाली बालकों पर केन्द्रित करके महत्वपूर्ण चर्चा की गई है।

### 5.7 शब्दावली

1. **विशिष्ट बालक-** विशिष्ट बालक मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक गुणों में सामान्य बालक से भिन्न होता है। उसकी भिन्नता कुछ ऐसी सीमा तक होती है कि उसे स्कूल के सामान्य कार्यों में विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में परिवर्तन की आवश्यकता होती है। ऐसे बालकों के लिए कुछ अतिरिक्त अनुदेशन भी चाहिए ऐसी दशा में उनका सामर्थ्य का विकास सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक हो सकता है। (क्रिक, 1962)
2. **प्रतिभाशाली बालक-** प्रतिभाशाली बालक जिनकी बुद्धिलब्धि (आई.क्यू.) 140 से ऊपर होती है तथा ये बच्चे कम समय में किसी भी काम को सीखते हैं या करते हैं।
3. **सृजनात्मक बालक** – ऐसे बालक जो किसी नवीन वस्तु का निर्माण करने व जीवन में अभिनव व्यवहार करने की योग्यता रखते हैं उन्हें सामान्य बालकों से पृथक सृजनात्मक बालक कहते हैं।
4. **श्रवणबाधित बालक** - श्रवण बाधित बालक ऐसे बालक हैं जिनकी सुनने की क्षमता नष्ट हो जाती है तथा बोलने और भाषा में परेशानी का सामना करते हैं।
5. **दृष्टिबाधित बालक-** दृष्टिबाधित बालक वे बालक होते हैं जो ठीक प्रकार से देख पाने में असमर्थ होते हैं।

### 5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. विशिष्ट बालकों के अन्तर्गत मुख्यतः सोलह प्रकार के बालक सम्मिलित होते हैं।

2. जो बालक किसी नवीन वस्तु का निर्माण करने व जीवन में अभिनव व्यवहार करने की योग्यता रखते हैं इन्हें सृजनात्मक बालक कहते हैं।
3. विशिष्ट बालकों को सर्वप्रथम सामाजिक समायोजन तथा शैक्षणिक समायोजन की समस्या होती है।
4. विशिष्ट बालक की सहायता शिक्षक व्यक्तिगत, शैक्षणिक तथा व्यवसायिक क्षेत्र में करता है।
5. विशेष आवश्यकता वाले बालक की सहायता शिक्षक, मार्गदर्शक तथा अभिभावक के रूप में करता है।
6. एक शिक्षक के अन्दर मृदुभाषिता, परिस्थितियों को समझने वाला समझदार तथा सही सुझाव देने का गुण आकर्षित करता है।
7. मार्गदर्शक बालक के प्रत्येक क्षेत्र में मार्गदर्शन करता है किन्तु शैक्षिक व व्यवसायिक क्षेत्र में मार्गदर्शन करना महत्वपूर्ण कार्य है।
8. प्रतिभाशाली बालक की बुद्धि लब्धि उसकी उम्र से ज्यादा होता है। अतः उसके पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य क्रियाविधियों में व्यस्त रखकर प्रशिक्षित करना चाहिए।
9. सृजनात्मक बालक में उसके रुचि अनुसार नवीन कार्यों में लगाना चाहिए तथा उसको ऐसा वातावरण देना चाहिए जिसमें उसकी सृजन करने की क्षमता में वृद्धि हो।
10. प्रतिभाशाली बालकों की बुद्धि लब्धि औसत से ज्यादा होता है। अपितु सृजनात्मक बालक औसत बुद्धि लब्धि के हो सकते हैं।  
प्रतिभाशाली बालक सृजनात्मक हो सकते हैं किन्तु सृजनात्मक बालक प्रतिभाशाली नहीं हो सकते हैं।

### 5.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. ओबेराय, डॉ० सुरेश चन्द्र (2006), शैक्षिक तथा व्यवसायिक निर्देशन एवं परामर्श, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ,
2. मंगल, डॉ० एस० के० एवं श्रीमती श्रुभा (2003), मार्गदर्शन एवं परामर्श, आर्य बुक डिपो, मेरठ
3. गुप्ता, एस.पी. (2008), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
4. सिंह, ए. के. (2010), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन पब्लिशर्स, पटना
5. जायसवाल, एस. (2008), शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
6. Bhatnagar, A & Gupta, N (1999). Guidance and Counselling: A theoretical Approach (Ed), New Delhi: Vikash Publishing House.
7. Das, B.N. (2010). Career Guidance and Counselling. Agra: Vinod Pustak Mandir

8. Kochhar, S.K, (1980) Guidance and Councelling, New Delhi: Sterling Publishers.
9. Mathur, S.S.(2012).Fundamentals of Guidance and Counselling.Agra: Vinod Pustak Mandir
10. NCERT(2008).Introduction to Guidance,Module-1, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
11. NCERT(2008).Career Information in Guidance,Module-5 and 12, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
12. Pandey, K.P.(2009).Educationaland Vocational Guidance in India. Varanasi: Vishvidyalaya Prakashan.
13. Sharma, N.R. (2012). Educationaland Vocational Guidance. Agra: Vinod Pustak Mandir

---

### 5.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

---

#### Books:-

1. Agarwal, J.C, (1985), Educational Vocational Guidance and Counseling, Doaba House, New Delhi.
2. Agrawal, R (2006). Educational, Vocational Guidance and Counselling, New Delhi, Sipra Publication.
3. Bhatnagar, A & Gupta, N (1999).Guidance and Counselling: A theoretical Approach(Ed), New Delhi, Vikash Publishing House.
4. Kapunan, R.R. (2004). Fundamentals of Guidance and Counselling, Rex Printing Company, Inc., Quezon City.
5. Kinra, A.K. (2008). Guidance and Counselling, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd. New Delhi.
6. Jones, A.J.(19510.Principles of Guidance and Pupil Personnel work,New York,MiGraw Hill.
7. Mendoza, E. (2003), Guidance and Counselling Today. Rex Book Store (RBSI), Manila.
8. Nanda, S.K and Sharma S, (1992) Fundamentals of Guidance, Chandigarh.

#### Websites & E-links:-

1. [www.books.google.co.in](http://www.books.google.co.in)
2. [www.education.go.ug/guidance](http://www.education.go.ug/guidance)
3. <http://encyclopedia2.thefreedictionary.com>
4. [www.careersteer.com](http://www.careersteer.com)
5. [www.lotsofessays.com](http://www.lotsofessays.com)
6. [www.careerstrides.com](http://www.careerstrides.com)
7. [www.wikipedia.org/wiki](http://www.wikipedia.org/wiki)

---

### 5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

---

1. विशिष्ट बालक से आप क्या समझते हैं ? उनकी समस्याएँ एवं आवश्यकताएँ बताइए?
2. विशिष्ट बालकों की सहायता में शिक्षक की क्या भूमिका है? तथा शिक्षक की भूमिका एक मार्गदर्शक के रूप में भी बताइए ?
3. विशेष बालकों के अर्न्तगत कौन-कौन से बालक आते हैं ? सभी प्रकार के बालकों का विवरण दिजिए ?
4. सृजनात्मक तथा प्रतिभाशाली बालक से आप क्या समझते हैं ? उनमें अन्तर स्पष्ट कीजिये?

## इकाई 6 समूह निर्देशन- अर्थ, प्रत्यय, परिभाषा, सिद्धान्त, समूह निर्देशन प्रक्रिया एवं तकनीकि

- 6.1 उद्देश्य
- 6.2 समूह निर्देशन- अर्थ, परिभाषा
- 6.3 समूह निर्देशन का उद्देश्य एवं महत्व
- 6.4 समूह निर्देशन प्रक्रिया
- 6.5 समूह निर्देशन की समस्याएं एवं लाभ
- 6.6 समूह निर्देशन के सिद्धान्त
- 6.7 समूह निर्देशन के आवश्यक तत्व
- 6.8 समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन
- 6.9 समूह निर्देशन की प्रविधि (तकनीकि)
- 6.10 सारांश
- 6.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 6.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
- 6.13 निबंधात्मक प्रश्न

### 6.1 प्रस्तावना

वर्तमान बदलते परिदृश्य में मानव के विकास के साथ-साथ विद्यार्थी जीवन के प्रत्येक स्तर एवं प्रत्येक पक्ष पर निर्देशन की आवश्यकता महसूस होती है। निर्देशन एक व्यवसायिक प्रक्रिया के साथ-साथ सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से सम्पन्न की जाने वाली प्रक्रिया है। यह व्यक्ति विशेष को नहीं बल्कि किसी भी व्यक्ति, बालक को किसी समय और उम्र में दी जा सकती है। कोठारी आयोग (1964-66) ने स्पष्ट रूप से निर्देशन को शिक्षा का अंग कहा एवं इसको प्राथमिक स्तर से लेकर माध्यमिक स्तर तक के शिक्षकों को प्रशिक्षित करने की बात कही और वित्तीय सुविधाओं को देखते हुए आगामी वर्षों में प्रत्येक माध्यमिक विद्यालयों में अतिथि परामर्श कर्ताओं द्वारा शिक्षकों को निर्देशन के कार्यों के बारे में परिचय कराया जाए इसके अतिरिक्त प्रत्येक जिला स्तर के किसी विद्यालय पर निर्देशन कार्यक्रमों का आयोजन किए जाने की बात कही। विश्व के बदलते परिदृश्य में बालक के मस्तिष्क का बदलना स्वभाविक है जैसे विश्वास, अभिवृत्ति मूल्यों में परिवर्तन स्वाभाविक है, और उसे समझने की आवश्यकता होती है इस प्ररिप्रेक्ष्य में निर्देशन की भी आवश्यकता महसूस होती है बदलते परिदृश्यों के कारण निर्देशन की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

विकास का पक्ष चाहे वो शैक्षिक व्यवसायिक, व्यक्तिगत, समाजिक, धार्मिक पक्षों के साथ-साथ विद्यालय के वातावरण में परिवर्तन होने पर निर्देशन की आवश्यकता होती है। विद्यार्थियों की विभिन्न प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती हैं आदि के कारण भी निर्देशन की आवश्यकता महसूस होती है।

अपने व्यापक रूप में निर्देशन में विभिन्न प्रकार के शैक्षिक आयोजन के द्वारा व्यक्ति को उसकी खामियों एवं अभिवृत्तियों से अवगत कराना, समायोजन करना ताकि वास्तविक परिदृश्य में वह खुद को समायोजित कर सके। व्यक्तिगत दृष्टिगत के साथ-साथ सामूहिक दृष्टिकोण से निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है। अगर हम प्रकार की बात करें तो निर्देशन व्यक्तिगत एवं सामूहिक दो प्रकार से होता है।

## 6.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप -

1. समूह निर्देशन का अर्थ जान पाएंगे।
2. समूह निर्देशन की परिभाषित करा सकेंगे।
3. समूह निर्देशन के सिद्धान्त की व्याख्या कर सकेंगे।
4. समूह निर्देशन की प्रक्रिया को अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
5. समूह निर्देशन की तकनीक का विवरण कर सकेंगे।
6. समूह निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्व को बता सकेंगे।
7. व्यवहारिक रूप से समूह निर्देशन की विभिन्न प्रकार की समस्या को समझ सकेंगे।

## 6.3 समूह निर्देशन - अर्थ एवं परिभाषा

समूह निर्देशन, निर्देशन कार्यक्रम का ही एक भाग है। निर्देशन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यक्तिगत रूप से किसी व्यक्ति को खुद निर्देशित करना, खुद का ज्ञान, करना एवं खुद का समान्यकरण करना होता है। जिसका कुछ भाग सामूहिक संरचना में ही प्राप्त किया जा सकता है। समूह निर्देशन सामूहिक जीवन परिदृश्य में किसी निर्देशनकर्ता द्वारा एक समय पर विभिन्न विद्यार्थियों के समूहों को निर्देशित किया जाता है।

शैक्षिक तथा व्यवसायिक योजनाओं के चयन, क्रियान्वयन, एवं आयोजन तथा विकास से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों में सामूहिक वर्तालाप अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

“समूह निर्देशन से तात्पर्य ऐसे निर्देशन से है जिसमें एक से अधिक व्यक्तियों का समूह, समूह के प्रत्येक व्यक्तियों की समस्याओं के समाधान के प्ररिप्रेक्ष्य में निर्देशित होते हैं/विचार करते हैं”

समूह निर्देशन, निर्देशन का एक रूप है। जिसमें निर्देशनकर्ता एक से अधिक व्यक्ति जो एक ही आयु समूह एवं समस्या के होते हैं, को निर्देशित करता है समूह निर्देशन कहलाता है। सामान्यतः निर्देशन

की प्रारम्भिक अवस्था में जब एक से अधिक व्यक्तियों के समूह को किसी एक ही विषय पर निर्देशन दिया जाए तो उसे समूह निर्देशन कहा जाता है।

शैक्षिक जनसंख्या के बढ़ते दबाव को देखते हुए सामूहिक निर्देशन, निर्देशन के क्षेत्र में उभरता हुआ एक महत्वपूर्ण निर्देशन है। जिसके द्वारा मितव्यतिता रूप से अधिक से अधिक विद्यार्थियों को सामूहिक रूपों से आत्मनिर्देशन, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक रूप में प्रदान किया जाता है। निसन्देह सामूहिक निर्देशन व्यक्तिगत निर्देशन से महत्वपूर्ण है।

जब शैक्षिक व्यवसायिक तथा व्यक्तिगत निर्देशन के लिए एक या एक से अधिक व्यक्तियों को किसी परिस्थित विशेष में समूह के रूप में निर्धारित किया जाता है तो उसे समूह निर्देशन की संज्ञा दी जाती है। यह सामूहिक क्रियाओं द्वारा निर्देशन की प्रक्रिया कही जाती है।

### समूह निर्देशन की परिभाषा

**रॉवर हापोक** के अनुसार "सामूहिक निर्देशन वह कोई भी सामूहिक क्रिया हो जो कुछ निर्देशन कार्यक्रम को सुविधा देने या सुधार करने के लिए सम्पन्न की जाती है"।

**जेल वार्टस** ने कहा है कि:- सामूहिक निर्देशन को साधारणतया इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि यह सामूहिक अनुभवों का व्यक्ति के उत्तम विकास में सहायता देने एवं इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु चेतना पूर्ण प्रयोग है।

**ए.जे. जोन्स** (1951) निर्देशन किसी भी समूह का वह उधम या क्रिया है जिसका प्राथमिक उद्देश्य समूह के प्रत्येक व्यक्ति की सहायता करना ताकि वो अपनी समस्या का समाधान कर सके एवं प्रभावपूर्ण समायोजन कर सके। इसके अन्तर्गत समूह सूचना दी जाती है जो व्यक्तिगत सूचना के विपरीत होती है। परन्तु यह सूचना व्यक्ति विशेष के लिए हो सकती है।

समूह परीक्षण व्यक्तिगत परीक्षण है ना कि किसी समूह का परीक्षण है। समूह निर्देशन केवल न्यायोचित ही नहीं बल्कि अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

**क्रो. एण्ड क्रो.** समूह निर्देशन समूह परिस्थितियों में प्रयोग किया जाने वाले विचार है। जिसमें निर्देशन सेवा को विद्यालय समूह, या विद्यार्थियों के समूह पर किया जाता है।

**लीस्टर डाउनिंग** ने सामूहिक निर्देशन के सम्बन्ध में लिखा है- सामूहिक निर्देशन, निर्देशन सेवा का वह अंग है जो एक कुशल परामर्शदाता के निर्देशन में नवयुवक को अन्यो के साथ विचार विनिमय एवं अनुभवों में आदान-प्रदान करता है जिनमें अन्तराभूति विकसित होती है। आत्मबोध की सुविधा मिलती है। परिपक्वता में वृद्धि होती है, कार्य करने के लिए तर्कसंगत निर्णय लिये जाते हैं। इसमें ऐसा वातावरण मिलता है जिसमें मनोचिकित्सा लाभ प्राप्त किए जाते हैं और सामाजिक कुशलता का विकास होता है। सामूहिक निर्देशन का अन्तिम लक्ष्य व्यक्तिगत विकास ही है उन्होंने यहां तक कहा कि सामूहिक निर्देशन संगठित निर्देशन कार्यक्रम का ही एक अंग जिसमें क्रियाएं सम्मिलित की जाती

है संगठित निर्देशन कार्यक्रम अनेक छात्रों का परस्पर मिलन होता है। इसमें सूचनाएं प्राप्त करते हैं, विचारों का आदान-प्रदान होता है, भविष्य की योजना बनाते हैं और निर्णय लेते हैं।

सार रूप में यह कहा जाता सकता है कि सामूहिक निर्देशन समूह वास्तव में व्यक्तियों के एकत्रितकरण को निर्देशित करता है जिसमें व्यक्ति आपसी प्रत्यक्षीकरण के आधार पर व्यक्तिगत विकास करते हैं। समूह निर्देशन जैसी क्रियाओं का अपने अन्दर समाहित करता है जो किसी समूह परिस्थित में की जाएं तथा व्यक्तिगत रूप से सामूहिक परिस्थित में व्यक्ति को निर्देशन किया जाए समूह किसी भी प्रकार का हो सकता है परन्तु निर्देशन का उद्देश्य समूह के प्रत्येक सदस्यों के लिए सामान्य होगा।

#### 6.4 सामूहिक निर्देशन के उद्देश्य एवं महत्त्व

समूह निर्देशन क्रियाओं के सफल संचालन के लिए यह आवश्यक है कि क्रियाओं के आयोजन के लिए ध्यानपूर्वक योजना तैयार की जाए जिसमें प्राथमिक रूप से समूह के प्रत्येक व्यक्ति को समूह निर्देशन के उद्देश्यों से अवगत कराया जाए तथा उद्देश्यों का निर्धारण किया जाए। सामान्यतः उद्देश्यों में समस्या या विद्यालय की अलग-अलग पृष्ठभूमि के कारण अन्तर होता है इसलिए उद्देश्यों में भिन्नता आ जाती है। समूह निर्देशन के कुछ प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं-

1. विद्यार्थियों को ऐसी सूचना प्रदान करना जिससे विद्यार्थी नये विद्यालय से परिचित हो सके।
2. विद्यार्थी विद्यालय के पाठ्यक्रम क्रियाएं, नियमों एवं विद्यालय के संस्कारों से परिचित हो सके।
3. ऐसी सूचनाएं व सामग्री उपलब्ध कराना ताकि छात्र खुद व्यक्तिगत परामर्श के लिए आ सके।
4. छात्रों को सामूहिक क्रियाओं में प्रभावपूर्ण भागीदारी करने में सहायता प्रदान करना।
5. छात्रों को ऐसे अवसर प्रदान करना ताकि समूह में प्राप्त साक्ष्यों एवं प्राप्त आलोचनाओं का खुद मूल्यांकन कर सके।
6. छात्रों को खुद समूह के सदस्य के रूप में विकसित करने के लिए सहायता करना।
7. शिक्षकों को ऐसा व्यवहार प्रदान करना जिसमें शिक्षक व्यक्तिगत परामर्श के लिए बहुत बड़ी मात्रा में सूचना एकत्रित कर सके।
8. ऐसे व्यक्तियों के लिए सामूहिक चिकित्सा प्रदान करना जो बाहरी वातावरण में समायोजन स्थापित न कर सके।
9. वस्तुनिष्ठ आधार पर व्यक्तिगत सहायता प्रदान करना जबकि समस्या का स्वरूप सामूहिक हो।
10. छात्रों को ऐसे अवसर प्रदान करना ताकि वे अपने व्यवहारों को समूह के मूल्यों के अनुकूल कर सके।
11. एक जैसी समस्याओं की पहचान में सहायता करना।
12. समायोजन से सम्बन्धित समस्याओं के लिए लाभदायी सूचनाएं प्रदान करना।
13. व्यक्तिगत परामर्श की संरचना तैयार करना

14. लोगों की सामान्य समस्याओं की पहचान तथा उसका विश्लेषण कर समस्या से सम्बन्धित सार्थक उपायों को ढूँढने में सहायता करना।
15. सूचनाओं को एकत्रित करना ताकि व्यक्ति अपनी समस्या से सम्बन्धित उन समस्याओं में से समाधान ढूँढ सके।
16. ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन करना जिसमें व्यक्ति एक समूह में हो तथा एक दूसरे से अन्तः क्रिया करके उसमें विचारों एवं अनुभवों से लाभ प्राप्त कर सके।
17. ऐसे वातावरण का निर्माण करना जो व्यक्तियों को अपने विचार व्यक्त करने के अवसर प्रदान कर सके।
18. व्यक्तियों, छात्रों में आत्मविश्वास सामाजिक कुशलता में वृद्धि करने के उद्देश्य से सामूहिक क्रियाओं का आयोजन करना।
- 19.

इसके अतिरिक्त आर्थर ई. ट्रेक्सलर ने सामूहिक निर्देशन के चार उद्देश्य बताए हैं-

1. **अभिविन्यास** - छात्रों को समाज के बदलते परिदृश्य एवं नवीन परिस्थित एवं अनुभवों के ज्ञान कराने से है।
2. **सीखने के अनुभवों की व्यवस्था करना**- सामूहिक निर्देशन के द्वारा कुछ ऐसे अनुभव छात्रों को प्रदान किये जाते हैं जिससे उनकी अधिगम क्षमता में वृद्धि अच्छी आदतों का विकास नवीन परिस्थितियों को समझने की क्षमता विकसित हो।
3. **स्वयं निर्देशन के विचारों की उत्पत्ति**- सामूहिक निर्देशन की प्रक्रिया के दौरान व्यक्ति निजी रूप से अपनी समस्याओं पर विचार करने लगता है जिससे उसके अन्दर स्वयं निर्देशन होने का दृष्टिकोण विकसित होने लगता है।
4. **समायोजन**- सामूहिक निर्देशन का एक उद्देश्य व्यक्ति में समायोजन से सम्बन्धित समस्याओं को हल करना शामिल किया जाता है।

### समूह निर्देशन का महत्व

1. राबर्ट एच. नाप ने समूह निर्देशन के महत्व को बताते हुए कहा है कि यदि सार्थक अभिवृद्धि एवं अनुभव बड़ी संख्या में बच्चों को प्रदान किया जाए तो बच्चों को किसी समूह विशेष में रखना पड़ेगा और बहुत कम समय में विद्यार्थियों के एक बड़े समूह को सूचना प्रदान कर दी जायेगी।
2. परामर्श दाता अपने विद्यार्थियों की सामान्य पृष्ठभूमि से सम्बन्धित जानकारी व उनकी समस्याओं को प्राप्त कर ले तो वो इस जानकारी से विद्यार्थियों के बहुत बड़े समूह पर सामान्यीकरण कर सकता है।
3. समूह निर्देशन विद्यार्थियों के अभिवृत्ति सुधार व व्यवहार में परिवर्तन लाने में सहायक होता है।

4. इसके द्वारा विद्यालय में नामांकित नये छात्रों को विद्यालय के कार्यक्रम, विद्यालय का इतिहास, परम्परा, नियमों एवं शैक्षणिक, सामाजिक तथा विद्यालय की पाठ्य सहगामी क्रियाओं से अवगत कराया जा सकता है।
5. समूह निर्देशन विभिन्न प्रकार की नेतृत्वपूर्ण प्रशिक्षण देने में भी सहायक है।
6. बालकों के व्यक्तित्व के कुछ पक्ष ऐसे होते हैं। जिसको निरीक्षण या जांच समूह में लगाया जा सकता है। शिक्षक चाहे तो समूह निर्देशन की क्रियाओं का प्रयोग कर उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं का पता लगा सकता है।
7. व्यक्तिगत परामर्श के लिए समूह निर्देशन की प्रविधियों का प्रयोग करके पर्याप्त मात्रा में परामर्श दिया जा सकता है।
8. एक शिक्षक या परामर्श दाता समूह उपागम द्वारा अपने अधिकतम समय को बचा सकता है तथा व्यक्तिगत रूप से समस्या ग्रसित बालक पर अधिक ध्यान दे सकता है।
9. समूह निर्देशन विद्यार्थियों को अपनी समस्याओं व चिन्ताओं को व्यक्त करने तथा दबी हुई भावनाओं को सामूहिक परिस्थिति में स्वतन्त्र रूप से चर्चा करने में भी सहयोगी होता है।

### 6.5 समूह निर्देशन प्रक्रिया

समूह निर्देशन प्रक्रिया का आयोजन करने के लिए निर्देशनकर्ता ऐसे निर्देशन लेने वाले व्यक्तियों/छात्र का चुनाव करता है, जो सामान्यतः शैक्षिक, आयु एवं भौगोलिक परिदृश्य में भिन्न-भिन्न होते हैं परन्तु निर्देशन से सम्बन्धित समस्या सामान्य अथवा एक जैसी होती है। निर्देशनकर्ता समस्त सदस्यों की विभिन्न आवश्यकताओं का विभिन्न उपकरणों द्वारा आकलन करते हुए समूह निर्देशन के लिए स्थान समय एवं समूह के आधार को निर्धारण करना तथा दिए जाने वाले निर्देशन विषय पर समूह के समस्त सदस्यों को अवगत कराता है तथा निर्देशन परिप्रेक्ष्य के सन्दर्भ में परिणामों का आकलन करता है।

### 6.6 समूह निर्देशन की समस्याएं एवं लाभ

समूह निर्देशन की निम्न समस्याएं हैं -

1. गृह व विद्यालय के समायोजन से समस्या।
2. शैक्षिक योजना से सम्बन्धित समस्या।
3. रोजगार से सम्बन्धित समस्या
4. आर्थिक एवं व्यवसायिक समस्या
5. पारिवारिक समस्या आकलन करता है।

### समूह निर्देशन के लाभ

समूह निर्देशन की विभिन्न क्रियाओं का आयोजन एवं उपागमों के अध्ययन के उपरान्त निम्न लाभ प्राप्त होते हैं-

समूह निर्देशन के निम्नलिखित लाभ हैं-

1. समूह निर्देशनकर्ता कुशलता के साथ तथा अत्यन्त कम समय में विद्यार्थियों को सूचना प्रदान करने व उनकी समस्याओं को पहचानने तथा विभिन्न कठिन समस्याओं से सम्बन्धित प्रति उत्तरों को ढूँढने में सफल होता है।
2. समूह निर्देशन शिक्षक अथवा परामर्श दाता को सामूहिक परिस्थिति में बालक के सामाजिक दृष्टिकोण एवं व्यवहारों को अध्ययन करने के लिए अवसर उपलब्ध कराता है।
3. विद्यार्थियों की एक जैसी समस्याओं को किसी समूह विशेष के सामने चर्चा करने व समस्या से सम्बन्धित उत्तर ढूँढने में मदद करता है।
4. समूह निर्देशन में समस्त विद्यार्थियों के समक्ष सुझाव रखे जाते हैं तथा समस्त विद्यार्थी उसे आसानी से स्वीकार करते हैं तथा अपने विचारों को रखते हैं।
5. समूह निर्देशन प्रक्रिया के दौरान सामान्य छात्र अन्य छात्रों से विभिन्न प्रकार के ज्ञान प्राप्त करते हैं।
6. समूह निर्देशन में एक जैसी समस्या पर सामूहिक उत्तर प्राप्त होते हैं।
7. समूह निर्देशन व्यक्तिगत परामर्श के लिए तैयार करता है।
8. समूह निर्देशन के द्वारा शिक्षक छात्रों की बहुत बड़ी संख्या से सम्पर्क बना सकता है।
9. निर्देशन का यह प्रकार मितव्ययी एवं सार्थक है।
10. विद्यार्थियों से सम्पर्क बनाने में सहायक है।
11. विद्यार्थियों को एक जैसी समस्या पर चर्चा करने के लिए अवसर प्रदान करता है।
12. यह विद्यार्थियों के अभिवृत्ति एवं व्यवहार में सुधार लाता है।
13. यह विद्यार्थियों में जागरूकता लाता है ताकि वे अपनी आवश्यकता को पहचान सकें।
14. समूह निर्देशन में आपसी अन्तक्रिया के परिणाम स्वरूप समूह के प्रत्येक सदस्य एक दूसरे से कुछ न कुछ सीखते रहते हैं।
15. समूह निर्देशन के द्वारा निर्देशनकर्ता साथ-साथ विद्यार्थी दोनों को ही समय के साथ प्रयास एवं धन की बचत होती है।

## 6.7 समूह निर्देशन के सिद्धांत

### विषय का सार्थक होना

सबसे पहले जिस विषय अथवा प्रकरण पर निर्देशन दिया जाना है उस पर यह विचार करना आवश्यक होता है कि जिस समूह के लिए निर्देशन कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है वह विषय समूह के सदस्यों की समस्याओं के अनुकूल है या नहीं। उदाहरण के लिए-समूह का नेतृत्व करने वाला या सलाहकर्ता ने यह निर्णय लिया कि नवीन छात्रों के साथ 'शिष्टता' विषय पर चर्चा की

जायेगी परन्तु यह विषय सभी के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण नहीं होगा और परिणाम भी अप्रत्याशित अथवा अभिप्रेरित करने वाला नहीं होगा तथा समूह के सदस्य भी विषय में रूचि नहीं लेंगे। तब निर्देशनकर्ता पुनः विषय को चर्चा के लिए प्रस्तुत करेगा, तो यह पायेगा की सामान्य शिष्टता विषय पर चर्चा में समूह के कुछ सदस्य हैं जो रूचि लेते हैं और कुछ सदस्य रूचि नहीं लेते हैं।

इस प्रकार समूह निर्देशन की क्रिया तुरन्त असफल हो जायेगी। अतः निर्देशनकर्ता को ऐसे विषय का चुनाव करना चाहिए जिसको समूह के सदस्य आसानी से स्वीकार कर सकें।

### सक्रिय सहभागिता आवश्यक है

छात्रों द्वारा प्रभावपूर्ण समूह निर्देशन के लिए सक्रिय सहभागिता आवश्यक है। इसमें यह आवश्यक होता है कि निर्देशनकर्ता की प्रतिक्रियाओं का प्रति उत्तर छात्रों द्वारा दिया जाए। जिसको प्राप्त करना निर्देशनकर्ता के लिए एक कठिन कार्य है। समूह निर्देशन का द्वितीय सिद्धान्त सक्रिय सहभागिता, शिक्षकों के अनुसार निश्चित रूप से कठिन सिद्धान्त है। जिसका सफल होना समूह कार्य के लिए आवश्यक है। यदि समूह के सभी सदस्यों के साथ अन्तःक्रिया प्रतीत न हो तो वास्तविक निर्देशन की प्रक्रिया प्रतीत नहीं होती है। हमें जो ज्ञान प्राप्त है इसी के अनुसार हम रहते हैं ना कि हमने क्या सुना, या क्या चर्चा किया, दोनों ही महत्वपूर्ण नहीं है। किसी कार्य में सहभागिता की महत्ता इस प्रकार समझी जा सकती है कि जब विद्यार्थी परिषद सम्मेलन का आयोजन किया जाता है तब उस समय विद्यार्थियों की जो प्रतिक्रियायें होती हैं वो निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

### प्रयोजन की तैयारी

निर्देशन कर्ता या आयोजन कर्ता के खुद के लिए यह आवश्यक होता है कि वह इस प्रकार तैयारी करे व योजना बनाये ताकि वह छात्रों में रूचि जागृत कर सके, तथा निर्देशन सामग्री का निर्माण कर सके। विद्यार्थियों का प्रयास आवश्यक है। समूह निर्देशन की क्रिया विद्यार्थियों के प्रयास के अभाव में न तो सार्थक हो सकती है और न ही उसका उनको कोई लाभ या सहायता प्राप्त हो सकती है। अतः समूह के निर्देशन कर्ता को समूह के सदस्यों के समक्ष विषय पर चर्चा करना आवश्यक है।

समूहकार्य और व्यक्तिगत परामर्श संपुरक के रूप में

व्यक्तिगत परामर्श के लिए आवश्यक नहीं है कि समूह कार्य का आयोजन किया जाए क्योंकि दोनों का अपना महत्वपूर्ण योगदान समूह निर्देशन में होता है।

इसके अतिरिक्त आर. ए. शर्मा ने समूह निर्देशन के छः सिद्धान्तों का बताया है-

1. समूह निर्देशन का प्रयोग परामर्श के अनुपूरक के रूप में होना चाहिए न कि प्रतिस्थापन के रूप में।
2. जैसे भी सम्भव हो परामर्श दाता को समूह के समस्त सदस्यों को इस प्रकार प्रोत्साहित करना चाहिए की प्रत्येक सदस्या व्यक्तिगत परामर्श के लिए अभिप्रेरित हो सके।
3. विभिन्न पक्षों में समूह के सदस्यों का चुनाव इस प्रकार करना चाहिए ताकि समजातीय समूह का निर्माण हो सके।
4. विद्यार्थियों के परिचय के लिए परियोजना का संचालन आवश्यक है।
5. समूह निर्देशन के लिए नियुक्त व्यक्ति को समूह निर्देशन की तकनीकियों से पूर्णतः परिचित होना चाहिए।
6. समूह निर्देशन का प्रयोग पूरक निर्देशन के रूप में करना चाहिए ताकि परामर्श प्रतिस्थापन के रूप में स्वीकार किया जा सके।

जैसा सम्भव हो निर्देशनकर्ता को यह चाहिए की समूह के प्रत्येक सदस्यों को व्यक्तिगत निर्देशन के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। विजक रूप में समूह निर्देशन की परियोजना से विद्यार्थियों को अवगत करना चाहिए। समूह निर्देशन देने वाला व्यक्ति समूह निर्देशन की प्रक्रिया से पूर्णतः परिचित होना चाहिए।

### 6.8 समूह निर्देशन के आवश्यक तत्व

1. परामर्श दाता का विद्यार्थियों के साथ उचित सम्बन्ध होना चाहिए।
2. परामर्श दाता विद्यार्थियों को स्वीकार करने वाला होना चाहिए।
3. परामर्शदाता समूह के विचारों ध्यानपूर्वक सुनने वाला होना चाहिए।
4. परामर्श दाता का दृष्टिकोण समस्या के प्रति सकारात्मक होना ।
5. प्रभावपूर्ण समापन प्रक्रिया।

### 6.9 समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन

आधुनिक समूह निर्देशन कार्यक्रम में इस बात पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है कि समूह के प्रत्येक सदस्य अपने व्यक्तिगत स्तर पर व्यक्तिगत व सामाजिक सम्बन्धों के लिए महत्वपूर्ण है। तथा वे अपनी रूचि अभिक्षमता, योग्यता अनुभव, आवश्यकता के अनुकूल सीखने के लिए सक्षम है। जिसके कारण समूह निर्देशन की क्रियाओं के आयोजन के लिए एक प्रारूप विकसित करना मुश्किल है। तथा क्रियाओं का आयोजन विद्यालय की परिस्थिति, संगठन नामांकन की संख्या, वित्तीय स्थिति प्रतिछात्रों पर कार्य की स्थिति व शिक्षक प्रशासक भी समूह निर्देशन आदि कारकों पर निर्भर करती है व समूह निर्देशन के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक सफल कार्यक्रम तब

कहा जायेगा जब प्रारम्भ से लेकर अन्तः तक की क्रियाओं का सफल आयोजन हो सके। मूल रूप से समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन शैक्षिक स्तरों के विभिन्न प्रकार व विभिन्न समूह के अनुसार किया जाता है।

स्तरानुसार समूह निर्देशन क्रियाओं का आयोजन इस प्रकार है-

1. प्राथमिक स्तर पर समूह निर्देशन क्रियाओं का आयोजन।
2. माध्यमिक स्तर पर समूह निर्देशन क्रियाओं का आयोजन।
3. विभिन्न समूहों के आधार पर निर्देशन क्रियाओं का आयोजन।
4. वैकल्पिक रूप से समूह का निर्माण एवं निर्देशन क्रियाओं का आयोजन।

### प्राथमिक स्तर पर सामूहिक निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन

प्राथमिक स्तर पर सामूहिक निर्देशन की क्रियाओं के आयोजन के मुख्यतः दो उद्देश्य होते हैं-

1. प्राथमिक स्तर पर विद्यालय का यह प्रमुख कार्य है कि वह प्रत्येक छात्र से सम्बन्धित उसकी समस्त सूचनाओं को एकत्रित करे ताकि केवल वह स्वयं ही नहीं बल्कि सम्बन्धित विद्यालय के शिक्षक, परामर्श दाता साथ ही साथ माध्यमिक स्तर के परामर्श दाता भी इससे लाभ प्राप्त कर सकें।
2. प्राथमिक विद्यालयों का यह द्वितीय महत्वपूर्ण दायित्व है कि वह विद्यार्थियों को अधिकतम व्यक्तिगत व सामाजिक समायोजन प्राप्त करने के लिए वतावरण उपलब्ध करा सकें।

प्राथमिक स्तर पर निर्देशन क्रियाओं का आयोजन करने के लिए ध्यान देने वाली सावधानियां

1. विद्यालय में छात्रों को नामकन से पूर्व एवं बाद में अनुस्थापन कार्यक्रम का आयोजन करना चाहिए। जिसमें विद्यालय में किसी प्रकार की क्रियाओं का आयोजन किया जाना, विद्यालय का वार्षिक कार्यक्रम क्या है इत्यादि बातों का उल्लेख होता है।
2. मुख्य रूप से विद्यालय के परामर्श दाता के असफल होने में सूचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। क्योंकि किसी भी व्यक्ति के बारे में यदि प्राप्त सूचनाएं अपर्याप्त है तो उचित निर्देशन नहीं हो सकता इसलिए क्रियाओं के आयोजन से पहले विद्यालय में उपस्थित समस्त दस्तावेज, जो संचयी हो को सुरक्षित एवं संजोकर रखना चाहिए।
3. विद्यालय में एक निर्देशन एवं परामर्श प्रकोष्ठ की स्थापना की जानी चाहिए जो शिक्षकों को विद्यार्थियों से सम्बन्धित समस्त दस्तावेजों को उपलब्ध करा सके और जांच सूची अथवा चेक लिस्ट का निर्माण भी करे।
4. छात्रों की व्यक्तिगत दस्तावेज में उनकी मानसिक विकास एवं अभिवृद्धि का मापन, लम्बाई व वजन आदि विकासात्मक विशेषताओं का भी अभिलेख रखना चाहिए।

**माध्यमिक स्तर पर निर्देशन क्रियाओं का आयोजन**

माध्यमिक स्तर पर अधिकतम सामूहिक निर्देशन क्रियाओं का आयोजन कक्षा में ही विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से शिक्षकों द्वारा कराया जाता है। यदि शिक्षकों द्वारा अनुस्थापन कार्यक्रम का आयोजन सफलतापूर्वक किया गया हो तो माध्यमिक स्तर में शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों के आत्मप्रत्येक के विकास तथा उनके सकारात्मक पक्ष व नकारात्मक पक्ष को पहचानने में अपना योगदान दे सकते हैं। सामान्यतः माध्यमिक स्तर पर निर्देशन क्रियाओं के आयोजन का कार्य प्राथमिक स्तर से ही आरम्भ हो जाता है। जिसमें विद्यालय प्रबन्ध का यह दायित्व होता है कि वो छात्रों के विकासात्मक अभिलेखों व सूचनाओं को संग्रहित करे तथा विद्यार्थियों को अवगत कराये जिससे विद्यार्थी अपना व्यक्तित्व एवं सामाजिक समायोजन अच्छी प्रकार कर सकें।

- इसके अन्तर्गत विद्यालयों में निर्देशन प्रकोष्ठ की स्थापना की जाती है जिसका मुख्य कार्य शिक्षकों, विद्यार्थियों पाठ्यक्रम, सहपाठ्यक्रम, पाठ्य- सहगामी क्रियाएं, तथा सामान्य निर्देशन कार्यक्रम के बीच एक आदर्श लोकतान्त्रिक सम्बन्ध स्थापित करना।
- इसके अन्तर्गत निर्देशन इकाई को संस्थागत पाठ्यक्रम में रखा जाना चाहिए तथा निर्देशन से सम्बन्धित विभिन्न विषय वस्तु को पाठ्यक्रम में शामिल करना चाहिए।
- सामान्य निर्देशन पाठ्यक्रम को छात्र केन्द्रित, व्यापक और लोचपूर्ण बनाना चाहिए।
- छात्रों को समुदाय व समूह आधारित कार्यक्रमों में सहभागिता बढ़ाने पर बल देना चाहिए।
- छात्रों को अच्छे सार्वजनिक सम्बन्धों के लिए अवसर उपलब्ध कराना चाहिए।

समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन मूल रूप से निम्न बिन्दुओं को शामिल करता है-

1. आवश्यकताओं का आंकलन करना- किसी समूह की सामान्य समस्याओं को जानने के लिए उस समूह से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं का आंकलन जरूरी होता है। जिसकी विभिन्न प्रकार के परीक्षण उपकरणों द्वारा जैसे प्रश्नावली, साक्षात्कार, निरीक्षण, का प्रशासन कर आवश्यकताओं का आंकलन किया जा सकता है।
2. समूह निर्देशन का स्थान समय, एवं समूह के आकार का निर्धारण- समूह निर्देशन के लिए यह आवश्यक होता है। समूह की क्रियाओं के आधार का आकार निश्चित किया जाए तथा निर्देशन के लिए उचित समय एवं स्थान पर भी चर्चा की जाए।
3. सदस्यों का चुनाव एवं विशिष्टकरण- समूह निर्देशन के लिए सहगामी सदस्यों का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण होता है और सदस्यों को अपने दायित्व एवं कार्यों से परिचित भी होना आवश्यक होता है।
4. सदस्यों का अभिविन्यास- समूह के लक्ष्य का सभी सदस्यों का पता होना तथा उद्देश्यों का मापनीय दृष्टिकोण से स्पष्ट होना भी आवश्यक है।

5. क्रियाओं का नियोजन एवं प्राप्त किए गये परिणामों का मूल्यांकन- यदि क्रियाओं का आयोजन उद्देश्यों के अनुरूप करना है तो उसका नियोजन लक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में आवश्यक है।

निष्कर्ष

समूह निर्देशन क्रियाओं को शत प्रतिशत सफल बनाने के लिए विद्यालय व समुदाय से सम्पर्क आवश्यक है क्योंकि बालक का विकास एवं उसकी अभिवृत्तियों का निर्माण विद्यालय एवं विद्यालय के बाहर भी होता है। या यूँ कहें कि बालक का विकास सम्पूर्ण वातावरण की आपसी अन्तःक्रियाओं का परिणाम होता है। और वातावरण में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। छात्रों के व्यक्तिगत व्यवहार, निर्देशन कार्यक्रम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

समूह निर्देशन क्रियाएं निदानात्मकता की अपेक्षा निरोधक होती हैं। जो किसी न किसी रूप में निर्देशन कार्यक्रम को प्रभावित करती हैं। समूह निर्देशन यह प्रयास करता है कि युवाओं को इस प्रकार तैयार किया जाए कि आने वाली समस्या का समाधान कर सके। इसके लिए विभिन्न प्रकार की सूचनाएं उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि केवल समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन कर निर्देशन के सम्पूर्ण कार्यक्रम को सफल नहीं बनाया जा सकता।

### 6.10 निर्देशन की प्रविधि या तकनीकी

समूह निर्देशन कर्ता द्वारा समूह निर्देशन के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकी का प्रयोग किया जाता है। यह प्रविधि समूह की प्रकृति के आधार पर परिवर्तित होती रहती है। उचित प्रविधि का चुनाव करने के लिए शिक्षक के छात्रों की रुचि से परिचित होना चाहिए तथा उस प्रविधि में विद्यार्थियों की रुचि भी होनी चाहिए। कुछ महत्वपूर्ण एवं प्रभाव पूर्ण समूह निर्देशन की क्रियाओं का वर्णन इस प्रकार है-

प्रविधियों के प्रयोग से पहले निम्न क्रियाओं का आयोजन आवश्यक है-

#### 1. प्रथम समूह की बैठक

कौशल युक्त समूह निर्देशन कर्ता समूह के लिए प्राथमिक बैठक को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते हैं, तथा उनका कहना है कि समूह निर्देशन कर्ता को अत्यन्त शीघ्र समूह की प्रथम बैठक करानी चाहिए जो निश्चित योजना के अन्तर्गत हो तथा इस योग्य हो कि विद्यार्थी की रुचि का पता लगा सके तथा समूह निर्देशन के लिए सदस्य ऐच्छिक रूप से शामिल हो सके सदस्यों की प्रथम बैठक सम्पर्क स्थापित करने के लिए भी उचित मानी जाती है।

#### 2. समूह नेतृत्वकर्ता की प्रक्रिया

अनुभवी समूह परामर्श कर्ता समूह की प्रक्रियाओं का हमेशा अभ्यास करते रहते हैं ताकि उचित समय पर समूह का नेतृत्व किया जा सके। यह एक महत्वपूर्ण कार्य होता है कि समूह

के युवा सदस्यों को समूह के अनुकूल नियन्त्रित किया जा सके इसके लिए समूह निर्देशन अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

प्रो. फिटज ने समूह निर्देशन आयोजन कर्ता व संगठनों की समूह निर्देशन प्रक्रिया के दौरान होने वाली त्रुटि को ध्यान में रखते हुए निम्न सुझाव दिये-

- समूह के सदस्यों पर अत्यधिक मानसिक दबाव न दें।
- संक्षिप्त सुरक्षा प्रदान करना आवश्यक।
- अत्यधिक एवं न्यूनतम समूह व्यवहार के मानको का निर्धारण करना
- अत्यधिक संगठनात्मक
- समूह संगठन का निर्माण
- शोध समिति का गठन जिसके द्वारा उपयोगी सूचनाओं को एकत्रित किया जा सके।
- प्राप्त सुझावों को लागू करना।
- समूह के कार्यशील सदस्यों का निर्माण
- समितियों का गठन
- समितियों का प्रभावपूर्ण उपयोग
- चर्चा करने वाले सदस्यों का प्रशिक्षण
- चर्चा के लिए विषय का चुनाव अग्रिम होना चाहिए ताकि चर्चा की नेतृत्व करने वाला पूर्णत तैयार हो।
- अत्यधिक बातचीत को स्वीकार नहीं करना चाहिए।
- यदि सम्भव हो तो समस्त सदस्यों की सहभागिता सुनिश्चित होनी चाहिए।
- जिस बिन्दु पर चर्चा हो रही है उस पर समूह की परख होना आवश्यक है।
- समूह के विचारों को आगे की तरफ ले जाना चाहिए।
- संक्षिप्त कथन प्रस्तुत होना चाहिए न कि भाषण।
- हवा में की जाने वाली चर्चा नहीं होनी चाहिए।
- विचारों में भिन्नता की पहचान होनी चाहिए।
- बैठक समाप्ति से पहले चर्चाओं का सामान्यीकरण किया जाना चाहिए।
- समूह चर्चा के लिए तैयारी होनी चाहिए।
- समूह में सदस्यों को प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

- मुद्रित सामग्री के प्रयोग में कुशलता होनी चाहिए।

समूह निर्देशन की प्रविधि के रूप में विभिन्न प्रकार के तकनीकों का प्रयोग किया गया है-

- सभा का आयोजन
- कैरियर सम्मेलन
- श्रव्य-दृश्य सामग्री
- सामूहिक क्रियाएं
- निर्देशन की नैदानिक विधि
- समूह प्रतिवेदन
- समूह विचार विमर्श
- समस्या समाधान
- व्याख्या समाधान
- औपचारिक विचार विमर्श
- व्याख्यान
- प्रश्नावली
- सम्मेलन
- नाटक का आयोजन
- व्यवसायिक सूचनाएं
- चिकित्सीय परामर्श

### 1.सभा का आयोजन

सार्थक रूप से समूह निर्देशन के लिए सभाओं का आयोजन को प्रविधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। जिसके लिए निम्न क्रियाओं का आयोजन करना पड़ता है-

सभा के उद्देश्य- सभा के उद्देश्यों को समझे बिना, परामर्श दाता सभा के आयोजन का प्रभावपूर्ण प्रयोग, निर्देशन कार्यक्रम के लिए नहीं कर सकता। सामान्यतः निम्न उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में सभा का आयोजन किया जाता है-

- छात्र या व्यक्ति समूह के दूसरे सदस्यों की क्रियाओं में रूचि ले सके।
- अच्छी आदतों के विकास के लिए।
- अच्छे नेतृत्व कर्ता के विकास के लिए।
- सार्वजनिक रूप से बौद्धिक विचारों के विकास के लिए।
- एक साथ पाठ्य सहगामी क्रियाओं से सम्बन्धित सूचना प्रदान करने के लिए।

- vi. विद्यालय के समस्त कार्यों में रुचि पैदा करने के लिए
- vii. समूह निर्देशन के अन्तर्गत महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा के लिए।
- viii. नाटक के रूप में विद्यालय के संस्कारों एवं विचारों को प्रकाश में लाने के लिए।
- ix. विद्यालय में समस्याओं के समाधान के लिए।
- x. कक्षा में प्रोत्साहन देने के लिए।

सावधानी के साथ सभा के आयोजन की आवश्यकता

यदि शिक्षक या परामर्श दाता विद्यालय में विभिन्न प्रकार की सभाओं का आयोजन सफलतापूर्वक करना चाहता है तो उसे निम्नलिखित रूप से आयोजन से पूर्व योजना बनानी होगी जिसमें निम्न बातों का ध्यान रखना होगा-

1. सभा का आयोजन पूर्व निर्धारित समय के अनुसार होना चाहिए।
2. प्रत्येक सदस्यों को यह पता होना चाहिए की सभा का आयोजन किस लिए किया जा रहा है।
3. कार्यक्रम समयानुसार तैयार होना चाहिए।
4. कार्यक्रम शैक्षिक रूप से सार्थक होना चाहिए।
5. कार्यक्रम में कोई अवरोध नहीं होना चाहिए।
6. सभी स्तर की सामग्री उचित स्थान पर होना चाहिए।

समूह निर्देशन की प्रविधि एक शिक्षक से दूसरे शिक्षक के लिए भिन्न होती रहती है तथा उस शिक्षक के भी प्रविधियों में अन्तर होता है। जब वो विभिन्न समूहों को निर्दिष्ट करता है।

समूह निर्देशन तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक निर्देशनकर्ता शिक्षक प्रभावपूर्ण तरीके से समूह में सहभागिता न करे। सार्थक सहभागिता असम्भव है। अगर समूह में सदस्य की कोई अपनी भूमिका नहीं है। समूह निर्देशन कर्ता को समूह चर्चा, सभाओं का आयोजन, सामाजिक क्रियाओं के लिए इससे सम्बन्धित कौशलों में प्रशिक्षित होना आवश्यक है।

## 2. कैरियर सम्मेलन

कैरियर सम्मेलन प्रविधि परामर्श दाता द्वारा किसी समूह को सूचना देने की महत्वपूर्ण प्रविधि के रूप में प्रयोग की जाती है। इस प्रकार के सम्मेलनों में अत्यधिक मात्रा में सफल व्यक्तियों द्वारा विभिन्न प्रकार के व्यवस्थाओं की व्याख्या, व प्रश्नों का जवाब दिया जाता है।

इस प्रकार के सम्मेलनों की अवधि न्यूनतम एक दिन या इससे अधिक होती है। परामर्श दाता द्वारा विद्यालय के शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों से सहायता प्राप्त कर इस सम्मेलन के आयोजन के लिए तैयारी करता है।

सम्मेलन का आयोजन

सम्मेलन के आयोजन में परामर्श के लिए रखे गये विषय अथवा समस्या के अनुकूल विषय विशेषज्ञ वक्ता का चुनाव किया जाता है। जिसके द्वारा विद्यार्थियों के किसी भी प्रकार के विषय से सम्बन्धित सन्देह को स्पष्ट शब्दों में दूर करने व समझाने का प्रयास करता है जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य के बिल्कुल अनुकूल हो इसके अतिरिक्त व्यवसाय आधारित फिल्मों, प्रदर्शनियाँ का आयोजन भी बीच-बीच में होता रहता है।

सम्मेलन के आयोजन में ध्यान रखने वाली सावधानियां

सम्मेलन में समय का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। विषय की महत्ता के अनुकूल समय का आवंटन आवश्यक है। इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए।

- चर्चा के लिए विषय के चुनाव में भी विशेष ध्यान रखना होता है। इसमें इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि जिस कार्य के लिए अथवा जिस विषय पर सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है उस विषय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, कार्यों के प्रकार सम्मेलन के लिए आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता, इत्यादि पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
- यदि आवश्यक हो तो आयोजनकर्ताओं के लिए विशेष प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।
- आवश्यक तानुसार पेशेवर व्यक्तियों, कर्मचारियों को आमन्त्रित करना चाहिए।
- सूचना के लिए विभिन्न माध्यमों के प्रयोग की कुशलता पर भी ध्यान देना आवश्यक होता है।

कैरियर सम्मेलन से लाभ

- इस प्रकार के सम्मेलन से विद्यालय समुदाय शिक्षक विद्यार्थी सबके मध्य प्रत्यक्ष अन्तःक्रिया होती जिससे सभी लाभान्वित होते हैं। तथा समस्या व उसके निदानों से अवगत होते हैं।
- विद्यार्थियों को विभिन्न व्यवसायिक समस्याओं पर विशेष ज्ञान की राय जानने व सुनने का अवसर मिलता है।
- अभिभावक अपने बच्चों के भविष्य के लिए उचित परामर्श लेने के लिए जागरूक हो जाते हैं।
- विद्यार्थियों के अन्तर्गत अभिप्रेरणा का भाव जागृत होता है।
- विभिन्न प्रकार के निर्देशन के लिए गठित अभिकरण अपने उद्देश्यों एवं दायित्वों के प्रति जागरूक होते हैं।

### 3. श्रव्य-दृश्य सामग्री

निर्देशन की इस प्रविधि के अन्तर्गत छात्रों को सूचना प्रदान करने के लिए चलचित्र, फिल्म स्ट्रिप, फोटोग्राफ, टेप, रिकार्डर और पोस्टर का प्रयोग कर उन्हें शैक्षिक एवं व्यावसायिक सूचनाएं प्रदान की जा सकती है। सम्मेलनों द्वारा यह सुझाव प्राप्त होता है कि शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के लिए श्रव्यदृश्य सामग्री का प्रदर्शन किया जा सकता है जिससे छात्रों में इन सामग्री को देखकर दर्शाये गए चित्रों पर विशेष ध्यान करने, विचार करने की भावना जागृत होती है। जिससे छात्र खुद निर्देशित हो सकते हैं।

श्रव्यदृश्य सामग्री के लाभ

- श्रव्य-दृश्य सामग्री के द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में वास्तविक सूचनाएं प्रदान की जा सकती है।
- अन्य प्रक्रियाओं की अपेक्षा यह प्रविधि सूचना प्रदान करने के लिए सरल मानी जाती है।
- चलचित्रों के द्वारा छात्रों के विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों को एकत्रित कर सक्रिय सूचना प्रदान की जाती है।
- इसके द्वारा छात्रों के समय की बचत एवं उनकी रूचि में वृद्धि की जाती है।
- छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास होता है।

### 4. सामूहिक क्रियाएं

शैक्षिक एवं व्यावसायिक सम्मेलनों द्वारा सामूहिक निर्देशन के लिए निम्न क्रियाओं के आयोजन का सुझाव दिया गया जिसका उद्देश्य भी सामूहिक निर्देशन देना होता है।

जैसे संगीत समूह, आर्ट क्लब, व्यवसाय, बाह्य खेल, वैज्ञानिक समाज, विद्यालय के प्रकाशन आदि क्रियाओं का आयोजन कर निर्देशन की प्रविधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

### 5. निर्देशन की नैदानिक विधि

इस विधि के अंतर्गत निर्देशन की प्रक्रिया को अत्यंत व्यापक रूप से लिया जाता है जिसमें विभिन्न प्रकार के आंकड़ों की सविस्तार व्याख्या के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

इस विधि में साथी समूह के दोस्तों, अभिभावक व शिक्षकों के विचारों को महत्व देते हुए आलोचनात्मक तर्क दिए जाते हैं। प्राप्त आंकड़ों के छटनीकरण की प्रक्रिया में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। जिससे आंकड़ों को अधिकतम सार्थक एवं वैध ठहराया जा सके इसके व्याख्या के लिए सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है।

नैदानिक निर्देशन विधि के महत्वपूर्ण चरण

- i. आंकड़ों का संग्रह- आंकड़ों का संग्रह के अन्तर्गत निम्न बातों के संग्रह पर विशेष ध्यान दिया जाता है। व्यक्ति में अभिक्षमता, अभिवृद्धि, व्यक्तित्व के शील गुण इत्यादि।
- ii. आंकड़ों का विप्लेषण - विप्लेषण के लिए ऐसे आंकड़ों का चुनाव किया जाता है जो समस्या के समझने व व्याख्या करने के लिए सहयोगी हो
- iii. आंकड़ों का संश्लेषण- आंकड़ों का इस प्रकार संयोजन किया जाता है कि आंकड़ों की प्रकृति के आधार पर व्यक्ति की समस्या का पता लगाया जा सके।
- iv. निदान- आंकड़ों की प्रकृति व व्यक्ति की शैक्षिक एवं व्यवसायिक संरचना द्वारा व्यक्ति की समस्याओं का निदान किया जाता है।
- v. सलाह- इसके अन्तर्गत परामर्श लेने वाले को अभिप्रेरित तथा समस्या के परिप्रेक्ष्य में उचित सलाह दी जाती है।
- vi. जांच करना- दिये गये उपचारों की जांच की जाती है।
- vii. मूल्यांकन- यह परामर्श का अन्तिम चरण होता है, जो जांच से सम्बन्धित होता है।

## 6.समूह विचार विमर्श

ऐसी प्रविधि में किसी समस्या के परिप्रेक्ष्य में सदस्यों द्वारा आपस में विचार विमर्श करके उचित समाधान ढुंढने का प्रयास किया जाता है। जैसे माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को विभिन्न करियर के विषय में जानकारी होती है। किसी विषय पर समूह विचार विमर्श का आयोजन किया जा सकता है जिसमें समूह के सदस्य बिना किसी झिझक एवं डर के विषय पर चर्चा कर सके।

## 7.समस्या समाधान

व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के साथ-साथ सामान्य समस्या का समाधान करने के लिए समस्या समाधान विधि का प्रयोग निम्न चरणों में किया जा सकता है-

- समस्या की उत्पत्ति, समस्या की व्याख्या पर प्रकाश।
- सार्थक तथ्यों के आधार पर समस्या समाधान के लिए कार्यविधि करना।
- एकत्रित आंकड़ों के सन्दर्भ में समस्या का विश्लेषण करना।
- सम्भावित उत्तरों की सूची तैयार करना एवं उनका मूल्यांकन करना।
- समूह में उत्तरों की स्वकारिता की स्थिति जानना।

## 8.अभिनय

छोटे समूह में अभिनय का प्रयोग निर्देशन की तकनीकी के रूप में किया जा सकता अभिनय प्रविधि एक विधि होती है। जिसके माध्यम से वास्तविक जीवन में अभिनय कर किसी विचार में परिवर्तन

लाया जा सकता है। इसके लिए समूह के सभी सदस्यों का अभिनय एवं समस्या से अवगत होना आवश्यक है इसके बाद अभिनय का आंबटन एवं सदस्यों को तैयार करना तथा निष्कर्ष एवं पृष्ठपोषण का आयोजन करना।

### 9. समूह प्रतिवेदन

समूह प्रतिवेदन को समूह निर्देशन की प्रविधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए किसी बड़े समूह के सदस्यों को दो छोटे-छोटे सदस्यों के समूहों में बांटकर प्रत्येक समूह के सदस्यों को मदद करते हुए प्रतिवेदन समस्या से सम्बन्धित उत्तर तैयार करने को कहा जाए उसके बाद प्राप्त प्रतिवेदन को किसी बड़े समूह के निर्देशन के लिए प्रयोग किया जाए।

### 10. औपचारिक विचार विमर्श

औपचारिक विचार विमर्श निर्देशन के क्षेत्र में योग्य प्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा समूह की समस्या पर किया जा सकता है। यह विमर्श वांछित उद्देश्यों पर केन्द्रित होता है जिसके द्वारा समूह के समस्त व्यक्तियों पर लाभ पहुंचता है।

यह समूह निर्देशन की एक अन्य तकनीकी है जिसमें निश्चित विषय पर रोचक रूप से निर्देशन दिया जा सकता है जैसे साक्षात्कार में कैसे प्रवेश किया जाए? परीक्षा की तैयारी कैसे की जाए? आदि बातों के लिए छात्रों को निर्देशन दिया जा सकता है।

### अभ्यास प्रश्न

1. समूह निर्देशन क्या है?
2. \_\_\_\_\_ के अनुसार समूह निर्देशन समूह परिस्थितियों में प्रयोग किया जाने वाले विचार है। जिसमें निर्देशन सेवा को विद्यालय समूह, या विद्यार्थियों के समूह पर किया जाता है।
3. \_\_\_\_\_ ने समूह निर्देशन के महत्व को बताते हुए कहा है कि यदि सार्थक अभिवृद्धि एवं अनुभव बड़ी संख्या में बच्चों को प्रदान किया जाए तो बच्चों को किसी समूह विशेष में रखना पड़ेगा और बहुत कम समय में विद्यार्थियों के एक बड़े समूह को सूचना प्रदान कर दी जायेगी।
4. समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन मूल रूप से किन बिन्दुओं को शामिल करता है?
5. समूह निर्देशन क्रियाएं \_\_\_\_\_ की अपेक्षा \_\_\_\_\_ होती है।
6. समूह निर्देशन की प्रविधि के रूप में किन्हीं पाँच प्रकार की तकनीकों के नाम लिखिए।
7. समूह प्रतिवेदन को \_\_\_\_\_ की प्रविधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

### 6.11 सारांश

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि सामूहिक निर्देशन, निर्देशन का एक अंग एवं भाग जिसमें एक आवश्यकता के विभिन्न व्यक्तियों का चयन कर एक समूह का निर्धारण किया जाता है तथा विषय विशेषज्ञ को बुलाकर सामान्य समस्या पर विचार विमर्श किया जाता है। समूह के सभी सदस्यों की समस्याएं एक समान होती हैं जिस पर वे आपस में अन्तः किया करते हैं और स्वनिर्देशित होते हो समूह निर्देशन कहलाता है। मूल रूप से समूह निर्देशन के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के आंकड़ों का संग्रह करने वाली विधियों को प्रयोग कर आंकड़ों का संग्रह किया जाता है। तथा प्रविधि के रूप में समूह निर्देशन, वृत्तिका अनौपचारिक विचार विमर्श, नाटक, समस्या समाधान आदि विधि का प्रयोग समूह निर्देशन के लिए किया जाता है।

### 6.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. समूह निर्देशन, निर्देशन का एक रूप है। जिसमें निर्देशनकर्ता एक से अधिक व्यक्ति जो एक ही आयु समूह एवं समस्या के होते हैं, को निर्देशित करता है समूह निर्देशन कहलाता है।
2. क्रो. एण्ड क्रो
3. राबर्ट एचनाप .
4. समूह निर्देशन की क्रियाओं का आयोजन मूल रूप से निम्न बिन्दुओं को शामिल करता है-
  - i. आवश्यकताओं का आंकलन करना
  - ii. समूह निर्देशन का स्थान समय, एवं समूह के आकार का निर्धारण
  - iii. सदस्यों का चुनाव एवं विशिष्टकरण
  - iv. सदस्यों का अभिविन्यास
  - v. क्रियाओं का नियोजन एवं प्राप्त किए गये परिणामों का मूल्यांकन
5. निदानात्मकता, निरोधक
6. समूह निर्देशन की प्रविधि के रूप में किन्हीं पाँच प्रकार की तकनीकों के नाम हैं-
  - i. सभा का आयोजन
  - ii. कैरियर सम्मेलन
  - iii. श्रव्यदृश्य सामग्री
  - iv. सामूहिक क्रियाएं
  - v. निर्देशन की नैदानिक विधि
7. समूह निर्देशन

---

**6.13 सन्दर्भ ग्रंथ**

---

1. शर्मा आर ए. एवं चतुर्वेदी शिखा (2008) निर्देशन एवं परामर्श के मूल तत्व आर लाल बुक डिपो मेरठ।
2. जयसवाल सिताराम (2010) शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
3. अग्रवाल जे. सी. (1991) शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन एवं परामर्श सेवा डांबा हाऊस नई दिल्ली।
4. भटनागर आर. पी. शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श।
5. सिंह राज (1994) शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन।
6. कोचर एस के (1901) भारतीय शिक्षा में निर्देशन।

---

**6.14 निबंधात्मक प्रश्न**

---

1. समूह निर्देशन से आप क्या समझते हैं। समूह निर्देशन की विभिन्न प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
2. समूह निर्देशन की क्रियों का आयोजन कैसे किया जाता है?
3. समूह निर्देशन के कोई पांच उद्देश्य लिखो।
4. समूह निर्देशन के विभिन्न सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

## इकाई 7 – परामर्श की प्रक्रिया : अवधारणा , परामर्श के सिद्धान्त , परामर्श उपागम : निर्देशीय , अनिर्देशीय एवं समन्वित

- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 उद्देश्य
- 7.3 परामर्श की प्रक्रिया की अवधारणा
- 7.4 परामर्श की प्रक्रिया के मुख्य अंग
- 7.5 परामर्श की प्रक्रिया के मूलभूत-सिद्धान्त
- 7.6 परामर्श प्रक्रिया के पद
- 7.7 परामर्शप्रार्थी और परामर्शदाता में सम्बन्ध
- 7.8 परामर्श के सिद्धान्त
- 7.9 परामर्श के विभिन्न दृष्टिकोण या विचारधाराएँ
  - 7.9.1 निर्देशीय या परामर्शदाता-केन्द्रित या नियोजक परामर्श
  - 7.9.2 अनिर्देशीय परामर्श या प्रार्थी-केन्द्रित या अनुमत परामर्श
  - 7.9.3 समन्वित या संकलक या समाहारक परामर्श
- 7.10 सारांश
- 7.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ
- 7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

### 7.1 प्रस्तावना

परामर्श का महत्वपूर्ण बिन्दु है जब परामर्श प्रार्थी को अपने महत्व एवं जीवनगत धारणाओं के प्रति विश्वास होने लगता है और इस विश्वास उत्पन्न करने में परामर्श को सहायक होना चाहिए। परामर्श की प्रक्रिया के दो प्रमुख अंग परामर्शदाता और परामर्शप्रार्थी है। परामर्श के लक्ष्यों की प्राप्ति परामर्शप्रार्थी एवम् परामर्शदाता के सम्बन्धों पर निर्भर करती है। परामर्श में विचारों का आदान-प्रदान एक महत्वपूर्ण तत्व है। परामर्शदाता में इतनी योग्यता होनी चाहिए कि वह परामर्शप्रार्थी के मनोभावों को पूर्णरूपेण समझ सके। परामर्शप्रार्थी एवं परामर्श में सामरस तथा मिलने के स्थान का शान्तिपूर्ण होना परामर्श की सफलता के लिए आवश्यक है। परामर्शदाता को अपने कार्य के प्रति निष्ठावान होना चाहिए। किसी तिथि या प्रणाली के अनुगमन में बँधना उसके लिए आवश्यक नहीं है। कहने का

तात्पर्य है कि परामर्श के प्रक्रिया में परामर्शदाता को अनेक अनुभवों से गुजरना पड़ता है। इन अनुभवों से लाभ उठाने के लिए परामर्श के सत्र की पूर्व तैयारी वांछनीय है तथा परामर्शदाता को परामर्श की प्रक्रिया व परामर्श से सम्बन्धित सिद्धान्तों व विचारधाराओं का ज्ञान होना अति आवश्यक है।

## 7.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. परामर्श की प्रक्रिया से सम्बन्धित अवधारणा से अवगत हो सकेंगे।
2. परामर्श की प्रक्रिया के मुख्य अंगों, पदों व सिद्धान्तों की व्याख्या करा सकेंगे।
3. परामर्शदाता और परामर्शप्रार्थी के सम्बन्धों का वर्णन कर सकेंगे।
4. परामर्श के मुख्य सिद्धान्तों की व्याख्या करा सकेंगे।
5. निर्देशात्मक, अनिर्देशात्मक व समन्वित परामर्श के मध्य अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

## 7.3 परामर्श की प्रक्रिया की अवधारणा (Concept of Counselling Process)

परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत परामर्शप्रार्थी एक व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति अर्थात् परामर्शदाता के साथ विशिष्ट उद्देश्य को संस्थापित करने के लिए कार्य करता है तथा ऐसे व्यवहारों को सीखता है जिनका अर्जन इन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। इस प्रक्रिया को सम्पन्न करने से पूर्व इसकी प्रक्रिया के प्रमुख अंगों का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। कोई भी प्रक्रिया किसी न किसी दिशा में एक अथवा अनेक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये ही सम्पन्न की जाती है। अतः लक्ष्य अथवा उद्देश्य किसी प्रक्रिया का मुख्य बिन्दु माना जाता है। इस लक्ष्य को अपने समक्ष रखकर ही प्रयासकर्ता विशिष्ट कार्य का सम्पादन करता है। परामर्श का प्रमुख लक्ष्य विद्यार्थी, अथवा अन्य किसी सेवार्थी में आत्मबोध एवं सामंजस्य की योग्यता का विकास करना है। इस योग्यता के विकसित होने पर वह स्वयं ही अपनी समस्या का समाधान करने योग्य बना जाता है। इस प्रकार लक्ष्य किसी प्रक्रिया की व्यावहारिक क्रियान्वित का प्राथमिक आधार है। इसके अतिरिक्त जिसके लिये प्रयास किया जा रहा है अर्थात् परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी भी परामर्श की प्रक्रिया के प्रमुख आधार बिन्दु होते हैं। इसलिये यह कहा जाता है कि परामर्श एक त्रिधुवीय प्रक्रिया है। जिसके तीन प्रमुख अंग हैं। लक्ष्य, परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी। परामर्श की सफलता के लिए उसमें निम्न चार आधारभूत मान्यताओं का होना आवश्यक है।

1. परामर्शदाता का अनुभवी होना- परामर्शदाता के प्रभावशाली ढंग से कार्य करने के लिए उसका प्रशिक्षित, अनुभवी एवं कार्य के प्रति रुझान रखने वाला होना आवश्यक है।

2. इच्छा जानना- परामर्श के लिए यह स्वीकार करना आवश्यक है कि छात्र परामर्श की प्रक्रिया में भाग लेने का इच्छुक है।
3. आवश्यकता की पूर्ति- परामर्श के द्वारा व्यक्ति की तात्कालिक एवं भविष्य-सम्बन्धी दोनों ही प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए।
4. उचित वातावरण- परामर्श की सफलता के लिए उचित वातावरण की उपस्थिति आवश्यक है।

---

#### 7.4 परामर्श की प्रक्रिया के मुख्य अंग (Main Parts of the Counselling Process)

---

परामर्श की प्रक्रिया के तीन मुख्य अंग हैं-

- i. परामर्श का लक्ष्य
- ii. परामर्शप्रार्थी
- iii. परामर्शदाता

परामर्श की प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण घटक लक्ष्य निर्धारण है। इन लक्ष्यों को परामर्शदाता वातावरण एवं समाज के अनुरूप ही निर्धारित किया जाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी के सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक परिवेश में जो मूल्य एवं आदर्श प्रचलित होंगे, उनके अनुसार ही परामर्श के लक्ष्यों का निर्धारण होगा। लक्ष्यों के निर्धारण में व्यक्ति की आवश्यकताओं एवं रुचियों को उसके परिवेश के सन्दर्भ में देखना होता है। एक प्रकार से परामर्श का लक्ष्य परामर्शप्रार्थी को मूल्यों के पुनरान्वेषण में सहायता देना है।

---

#### 7.5 परामर्श की प्रक्रिया के मूलभूत-सिद्धान्त (Fundamental Principles of Counselling Process)

---

मैकडैनियल और शैफ्टल के अनुसार परामर्श प्रक्रिया निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित है-

1. स्वीकृति का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक प्रार्थी को एक व्यक्तित्व के रूप में समझा जाए और उसके साथ वैसा ही व्यवहार किया जाए। व्यक्ति के अधिकारों को परामर्शदाता पूर्ण सम्मान प्रदान करें।
2. लोकतन्त्रीय आदर्शों के साथ निरन्तरता का सिद्धान्त- सभी सिद्धान्त लोकतन्त्रीय आदर्शों के साथ जुड़े हुए हैं। लोकतांत्रिक आदर्श व्यक्ति को स्वीकार करने की माँग करते हैं और दूसरे के अधिकारों का उपयुक्त सम्मान चाहते हैं। परामर्श की प्रक्रिया व्यक्ति के सम्मान के आदर्श पर आधारित है। यह व्यक्तिगत विभिन्नताओं को मानने वाली प्रक्रिया है।
3. व्यक्ति के साथ विचार करने का सिद्धान्त- परामर्श व्यक्ति के साथ सोचने पर बल देता है। 'किसके लिये सोचना' और 'क्यों सोचना'- इन दोनों बातों में भेद करना आवश्यक है। यह परामर्शदाता की भूमिका है कि वह प्रार्थी के आसपास की सभी शक्तियों के बारे में सोचे,

प्रार्थी की चिन्तन प्रक्रिया में शामिल हो और उसकी समस्या के सम्बन्ध में प्रार्थी के साथ मिलजुल कर कार्य करे।

4. सीखने का सिद्धान्त - परामर्श की सभी विचारधाराएँ परामर्श प्रक्रिया में सीखने के तत्वों की विद्यमानता को मानते हैं।
5. व्यक्ति के सम्मान का सिद्धान्त- परामर्श ऐसा सम्बन्ध है, जिसमें कुछ आशा बँधती है तथा वातावरण व्यक्ति के अनुकूल होने लगता है। सभी विचारधाराएँ परामर्श के सापेक्ष सम्बन्ध को स्वीकार करती हैं।

---

### 7.6 परामर्श प्रक्रिया के पद ( Steps in Counselling Process )

---

परामर्श प्रक्रिया के विलियमसन और डरले ने निम्नलिखित 6 पदों की चर्चा की है-

1. विश्लेषण ( Analysis ) - यह वह प्रक्रिया है जिससे तथ्यों का संकलन किया जाता है ताकि परामर्शप्रार्थी का अध्ययन किया जा सके।
2. संश्लेषण (Synthesis) - इस पद में एकत्रित की गई जानकारी को संगठित किया जाता है।
3. निदान (Diagnosis) - इस पद में समस्या के कारणों के बारे में निष्कर्ष निकाला जाता है।
4. पूर्व अनुमान ( Prognosis) - निदान के उपयोग के बारे में कथन देने को पूर्व-अनुमान कहते हैं
5. परामर्श (Counselling) - परामर्शदाता और प्रार्थी द्वारा समायोजन के लिये उठाये गये कदमों को इस पद में रखा गया है।
6. अनुवर्तन (Follow-up) - परामर्शदाता की सेवाओं की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने या नई समस्याओं के हल में परामर्शप्रार्थी की सहायता करने के प्रयास इस पद में शामिल रहते हैं।

रोजर्स (Rozers) ने भी विभिन्न पदों का निम्नलिखित पदों में संक्षिप्तिकरण किया है-

1. व्यक्ति सहायता के लिये आता है तथा उसने एक अनुमानित कदम उठा लिया है।
2. सहायता-परिस्थिति को प्रायः परिभाषित किया जाता है। प्रार्थी को इस ख्याल से परिचित कराया जाता है कि परामर्शदाता के पास उत्तर नहीं होते हैं। प्रार्थी को स्वयं ही अपने उत्तर ढूँढने होते हैं। परामर्श का समय आना है यदि वह चाहे।
3. परामर्शदाता स्वतंत्र अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करता है। यह स्वतंत्र अभिव्यक्ति समस्या के संदर्भ में होती है। वह चिन्ता तथा अपराधी होने की भावना रोकता है। परामर्शदाता प्रार्थी को यह मानने का प्रयास नहीं करता कि वह गलती पर है या वह सही है। परामर्शदाता प्रार्थी

को वैसा ही स्वीकार करता है जैसा वह है। वह केवल स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करता है।

4. परामर्शदाता नकारात्मक भावनाओं को स्वीकार करता है, उन्हें पहचानता और स्पष्ट करता है। परामर्शदाता को प्रार्थी की भावनाओं का उत्तर देना चाहिए।
5. जब व्यक्ति की नकारात्मक भावनाओं की पूर्ण अभिव्यक्ति हो चुकी होती है उसके पश्चात् अनुमानित सकारात्मक अभिव्यक्ति हो।
6. परामर्शदाता सकारात्मक भावनाओं को पहचानता है और उन्हें स्वीकार करता है।
7. इससे स्वयं का बोध और अन्तःदृष्टि होती है।
8. सम्भावित निर्णयों और सम्भावित कार्य-दिशा का स्पष्टीकरण।
9. व्यक्ति द्वारा महत्वपूर्ण सकारात्मक क्रियाओं का प्रारम्भ।
10. आगे फिर अन्तःदृष्टि तथा अधिक उपयुक्त बोध का विकास।
11. विकसित स्वतंत्रता की भावना तथा सहायता की घटती हुई आवश्यकता।

ये प्रक्रियायें आवश्यक नहीं कि इसी क्रम में हों। ये पद प्रार्थी-केन्द्रित हैं।

### 7.7 परामर्शप्रार्थी और परामर्शदाता में सम्बन्ध (Client-Counsellor Relationship)

परामर्श की प्रक्रिया में पारस्परिक सम्पर्क मुख्य साधन माना जाता है। अतः पारस्परिक सम्पर्क की सार्थकता हेतु परामर्शप्रार्थी व परामर्शदाता दोनों को एक-दूसरे को जानना एवं समझना आवश्यक है। दोनों को ही एक-दूसरे का आदर भी करना चाहिए। यदि परामर्शप्रार्थी एवं परामर्शदाता के मध्य समुचित सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाते हैं तो परामर्श की प्रक्रिया सफल नहीं हो सकती है।

परामर्श का महत्वपूर्ण तत्व है - परस्पर विचारों का आदान-प्रदान। यदि विचारों के आदान-प्रदान में कोई विघ्न आता है तो परामर्श अपूर्ण ही रहता है। समुचित परामर्शप्रार्थी-परामर्शदाता सम्बन्धों विकसित करने हेतु कतिपय तकनीकों का विकास किया गया है विलियमसन ने परामर्श प्रविधियों या तकनीकों को निम्नलिखित पांच शीर्षकों के अन्तर्गत वर्णित किया है-

1. **मधुर सम्बन्ध स्थापित करना (Establishing Rapport)** - जब पहली बार प्रार्थी परामर्शदाता के पास आता है तो परामर्शदाता का सबसे पहला कार्य होता है कि उसका स्वागत किया जाए। उसे आरामदेह स्थिति में लाकर प्रार्थी को विश्वास में लेना चाहिए। मधुर सम्बन्ध स्थापित करने का मुख्य आधार होता है-परामर्शदाता की योग्यता की ख्याति, व्यक्तिगतता का सम्मान तथा साक्षात्कार से पहले विश्वास और विद्यार्थी के साथ सम्बन्धों को विकसित करना।

2. **स्वयं-बोध उत्पन्न करना (Cultivating Self-understanding)** - परामर्शार्थी को स्वयं की योग्यताओं और उत्तरदायित्वों के प्रयोग से पहले ही हो जानी चाहिए। इसके लिये परामर्शदाता को परीक्षण-संचालन और परीक्षण अंकों की व्याख्या का अनुभव होना आवश्यक है। परीक्षण-अंक निदान और पूर्व अनुमान का परामर्श प्रक्रिया में ठोस आधार प्रदान करते हैं।
3. **क्रिया के लिये कार्यक्रम का नियोजन और सुझाव (Advising and Planning a programme of Action)**- परामर्शदाता प्रार्थी के लक्ष्यों, उसकी अभिवृत्तियों या दृष्टिकोणों आदि से प्रारम्भ करता है तथा अनुकूल और प्रतिकूल आंकड़ों या तथ्यों की ओर संकेत करता है। वह साक्षियों या प्रमाणों को तौलता है और वह इस तथ्य को समझता है कि प्रार्थी को कोई विशेष सुझाव क्यों दे रहा है। विलियमसन का मानना है कि परामर्शदाता को अपने दृष्टिकोण का कथन निश्चितता से करना चाहिए। उसे अनिर्णायक की तरह नहीं देखना चाहिए।
4. **व्याख्यात्मक विधि (Explanatory Method)**- व्याख्यात्मक विधि परामर्श में सबसे अधिक वांछित विधि है। इसमें परामर्शदाता ध्यानपूर्वक लेकिन धीरे-धीरे निदानात्मक आंकड़ों को समझता है और उन सम्भावित स्थितियों की ओर संकेत करता है जिनमें प्रार्थी की शक्तियों और क्षमताओं का प्रयोग किया जाता सकता है। इसमें आंकड़ों के उपयोग को सविस्तार और ध्यानपूर्वक तर्क सहित समझाया जाता है। इसके पश्चात् प्रार्थी के निर्णय या रुचि को जानकर साक्षात्कार इस निर्णय को लाकर करने के लिए प्रत्यक्ष सहायता प्रदान कर सकता है। इस सहायता में उपचारात्मक कार्य और शैक्षिक या शिक्षण नियोजन का कार्य सम्मिलित होते हैं।
5. **अन्य कार्यकर्ताओं का सहयोग ( Referral to other personnel Workers)**- कोई भी परामर्शदाता सभी प्रकार के प्रार्थियों की समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता। उसे अपनी सीमाओं को पहचानना चाहिए तथा उसे विशिष्टीकृत सहायता के स्रोतों का ज्ञान होना चाहिए। उसे प्रार्थियों को अन्य उपयुक्त स्रोतों की सहायता प्राप्त करने की सलाह देनी चाहिए।

इन उपरोक्त प्रविधियों के अतिरिक्त परामर्श की अन्य प्रविधियां भी हैं जो निम्नलिखित है-

1. **मौन-धारण (Silence)** - कभी-कभी कई परिस्थितियों में मौन रहकर किसी की बात को सुनना बोलने से अधिक प्रभावशाली होता है। जब प्रार्थी अपनी समस्या का वर्णन कर रहा होता है तब परामर्शदाता मौन धारण कर लेता है। इससे प्रार्थी को यह विश्वास हो जाता है कि परामर्शदाता प्रार्थी की बात को बड़े गौर से सुन रहा है तथा उस पर गम्भीरता से विचार कर रहा है।

2. **स्वीकृति (Acceptance)**- परामर्शदाता प्रार्थी की बात को अस्थाई स्वीकृति दे। कई बार परामर्शदाता कुछ शब्द इस प्रकार से कह देता है कि उनसे यह मालूम पड़ जाता है कि प्रार्थी जो कुछ कह रहा है उसे वह स्पष्टतः समझ रहा है। परन्तु इन शब्दों को परामर्शदाता इस तरह कहता है जिससे प्रार्थी के बोलने के धारा प्रवाह में कोई रूकावट नहीं आती। उदाहरणार्थ- 'ठीक है', 'बहुत अच्छा', 'हूँ' इत्यादि कई अवसरों पर परामर्शदाता अपनी स्वीकृति प्रदान करने के लिये कोई शब्द नहीं कहता केवल स्वीकारात्मक ढंग से सिर ही हिला देता है।
3. **स्पष्टीकरण (Clarification)**- कई अवसरों पर परामर्शदाता को चाहिए कि वह प्रार्थी की बातों का या उस दिये गये वर्णन का स्पष्टीकरण करें। परामर्शदाता का यह कर्तव्य है कि वह प्रार्थी को इस बात से परिचित करा दे कि वह उसे समझ रहा है तथा स्वीकार है। परन्तु कभी-कभी परामर्शदाता को यह आवश्यक हो जाता है कि वह प्रार्थी के वर्णन का स्पष्टीकरण करते समय प्रार्थी को किसी प्रकार की जोर-जबरदस्ती का आभास न हो।
4. **पुनर्कथन (Restatement)**- स्वीकृति एवं पुनरावृत्ति दोनों से ही प्रार्थी को यह बोध होता है कि परामर्शदाता उनकी बात को समझ रहा है तथा स्वीकार करता है। पुनरावृत्ति के द्वारा परामर्शदाता उसी बात को दोहराता है जिसे प्रार्थी ने वर्णित किया है परन्तु परामर्शदाता पुनर्कथन के समय किसी प्रकार का संशोधन या स्पष्टीकरण प्रार्थी के मापन में नहीं करता है।
5. **मान्यता (Approval)** - अपनी समस्या के बारे में प्रार्थी विभिन्न प्रकार के विचार व्यक्त करता है। परामर्शदाता इन विचारों में से कुछ को मान्यता प्रदान कर देता है तथा कुछ को नहीं। जिन विचारों को मान्यता प्रदान कर दी जाती है वे प्रार्थी को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। प्रार्थी परामर्शदाता के ज्ञान एवं व्यक्तित्व से प्रभावित होता है। यदि परामर्शदाता बीच-बीच में प्रार्थी के विचारों को मान्यता देता रहता है तो मान्यता प्रभावहीन हो जाती है। इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए।
6. **प्रश्न पूछना ( Asking Questions)** - प्रार्थी अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में अधिक विचार करने की प्रेरणा देने के लिये परामर्शदाता को कुछ प्रश्न पूछने चाहिए। ये प्रश्न प्रार्थी के वक्तव्य का अंश समाप्त होने के पश्चात् पूछे जाने चाहिए।
7. **हास्य रस ( Humour)** - परामर्श के दौरान प्रार्थी के तनाव दूर करने के लिये तथा वार्तालाप को रूचिकर बनाने के लिये हास्य-रस का प्रयोग करना भी एक आवश्यकता सी बन जाती है।
8. **सारांश स्पष्टीकरण (Summary Clarification)** - प्रार्थी के वक्तव्य का कुछ भाग लाभकारी नहीं भी हो सकता। इसके कारण समस्या स्वयं ही प्रार्थी को अस्पष्ट दिखाई देती है। ऐसी स्थिति में परामर्शदाता के लिये आवश्यक हो जाता है कि वह प्रार्थी के भाषण को संक्षिप्त करे तथा उसका संगठन करे जिससे परामर्शप्रार्थी समस्या को अधिक स्पष्ट रूप से

समझ सके। परामर्शदाता का प्रयास यही रहना चाहिए कि वह कभी भी अपनी ओर से विचार न जोड़े।

9. **विश्लेषण ( Analysis)** - प्रार्थी की समस्या के लिये परामर्शदाता सामधान प्रस्तुत करने की पहल कर सकता है। लेकिन परामर्शदाता प्रार्थी से उस हल पर अमल नहीं करवा सकता। परामर्शदाता प्रार्थी पर ही छोड़ देता है कि वह उस समाधान को स्वीकार करे या अस्वीकार करे या उसमें कुछ संशोधन करे। इस सम्बन्ध में प्रार्थी पर किसी प्रकार का दबाव नहीं डाला जाता।
10. **व्याख्या या विवेचना (Interpretation)** - परामर्शदाता को प्रार्थी के वक्तव्य की ही विवेचना या व्याख्या करने का अधिकार होना चाहिए। उसे अपनी तरफ से कुछ नहीं जोड़ना चाहिए। परामर्शदाता व्याख्या द्वारा प्रार्थी के वक्तव्य का परिणाम निकालता है। इन निष्कर्षों को निकालने में अकेला प्रार्थी असमर्थ होता है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि परामर्शदाता द्वारा निकाले गये निष्कर्ष अन्य परीक्षणों द्वारा निकाले गये निष्कर्षों से मेल खा सकते हैं और नहीं भी।
11. **परित्याग ( Regression)**- कई बार प्रार्थी जो कुछ सोचता या कहता है वह त्रुटिपूर्ण होता है। इस प्रकार त्रुटिपूर्ण विचारधाराओं को त्यागना चाहिए। इसका परित्याग करने के लिए परामर्शदाता को बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए ताकि प्रार्थी विद्रोही प्रवृत्ति का न हो जाये और इस परित्याग का प्रार्थी उल्टा अर्थ न निकाल ले।
12. **आश्वासन ( Assurance)**- परामर्श की सबसे महत्वपूर्ण तथा मनोवैज्ञानिक पक्ष से जुड़ी प्रविधि के रूप में आश्वासन प्रदान करने से प्रार्थी की समस्या हल होने की आशा बँध जाती है। आश्वासन द्वारा परामर्शदाता प्रार्थी के कथनों को स्वीकार भी करता है और स्वीकृति के साथ-साथ अनुमोदित या समर्थन प्रदान करता है।

---

### अभ्यास प्रश्न

---

1. परामर्श एक \_\_\_\_\_ प्रक्रिया है।
2. परामर्श के तीन प्रमुख अंग है, \_\_\_\_\_ परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी।
3. परामर्श प्रक्रिया के विलियमसन और डरले ने \_\_\_\_\_ पदों की चर्चा की है।
4. परामर्श की प्रक्रिया में \_\_\_\_\_ मुख्य साधन माना जाता है।
5. परामर्श का महत्वपूर्ण तत्व है \_\_\_\_\_।

## 7.8 परामर्श के सिद्धान्त ( Principles of Counselling)

सिद्धान्त की व्याख्या प्रायः किन्हीं दृष्टिगोचर घटनाओं के अन्तर्निहित नियमों अथवा दिखायी देने वाले सम्बन्धों के प्रतिपादनों के रूप में की जाती है जिनका एक निश्चित सीमा के अन्दर परीक्षण सम्भव है। परामर्श के क्षेत्र में सैद्धान्तिक ज्ञान का विशद भण्डार है। परामर्शकर्ता के लिये इन सैद्धान्तिक आधारों का परिचय आवश्यक है। अध्ययन की सुविधा हेतु, दृष्टिकोणों के आधार पर इन्हें चार मुख्य वर्गों में रखा जा सकता है-

1. प्रभाववर्ती सिद्धान्त ( Affectively Oriented Theory)
2. व्यवहारवादी सिद्धान्त (Behaviourally Oriented Theory )
3. बोधात्मक सिद्धान्त (Cognitively Oriented Theory)
4. व्यवस्थावादी प्रारूप सिद्धान्त (Systemetic Model Theory)

### प्रभाववर्ती सिद्धान्त ( Affectively Oriented Theory)

यह सिद्धान्त मूलतः अस्तित्वादी मानववादी दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है। इसमें परामर्शप्रार्थी को प्रभावपूर्ण ढंग से समझने पर विशेष बल दिया जाता है। केम्प (1971), राजर्स (1975), बारूथ तथा हूबर (1985) जैसे विद्वान इस सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक हैं। उनका मत है कि मानवीय अन्तः क्रिया ही प्रभाववर्ती परामर्शदाता के लिये ध्यान का केन्द्र है। मानवतावादी मनोविज्ञान की शेफर (1978) की प्रमुख मान्यताएँ ही इस सिद्धान्त का आधार है जिन्हें संक्षेप में निम्न रूप से व्यक्त किया जा सकता है-

- i. अनुभव की विलक्षणता- वैयक्तिक अनुभव की विलक्षणता तथा वैषयिक वास्तविकता अधिक महत्वपूर्ण है।
- ii. समग्रता- व्यक्ति को समग्र रूप से उसके वर्तमान अनुभवों के सन्दर्भों में ही जाना जा सकता है।
- iii. सीमाबद्धता- यद्यपि जैवकीय तथा पर्यावरणजनित कारक किन्हीं विशिष्ट रूपों में व्यक्ति को सीमाबद्ध कर सकते हैं फिर भी व्यक्ति को विकसित होने व अस्तित्व निर्माण की क्षमताएँ असीमित रहती हैं। जनतन्त्रीय वातावरण में विशेषतौर पर ऐसा होता है।
- iv. आत्म-परिभाषा- मनुष्यता को किसी पदार्थ या तत्व के रूप में सदैव के लिए एक सा परिभाषित नहीं किया जा सकता है। मनुष्यता तो सदैव ही आत्म-परिभाषण की प्रक्रिया में संलग्न रहती है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि प्रभाववर्ती सिद्धान्त की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं- प्रथम, उनकी अस्तित्वादी धारणा, द्वितीय व्यक्तिकेन्द्रित स्वरूप, तृतीय- समग्रतावादी दृष्टिकोण।

**व्यवहारवादी सिद्धान्त (Behaviourally Oriented Theory)**

प्रभाववर्ती सिद्धान्तों में जहाँ एक ओर बल इस बात पर दिया जाता है कि परामर्शप्रार्थी कैसा अनुभव करता है वहीं दूसरी ओर व्यवहारवादी सिद्धान्त परामर्शप्रार्थी के अवलोकनीय व्यवहारों पर बल देते हैं। दूसरे शब्दों में, व्यवहारवादी परामर्शप्रार्थी के अनुभवों की अपेक्षा उसके व्यवहारों को जानने व समझने में अधिक रूचि रखते हैं। व्यवहारवादी परामर्शदाता के लिए, भावनाओं या जागरूकता के स्तरों की अन्तर्दृष्टि पर्याप्त नहीं है। वह परिवर्तन के लिए क्रिया या व्यवहार को शब्दों की अपेक्षा अधिक सार्थक स्वीकार करता है। व्यवहारवादी समस्याग्रस्त व्यक्ति के लक्षणों पर अधिक ध्यान देते हैं ये समस्याएँ अधिकांशतः परामर्शप्रार्थी द्वारा अपने व्यवहार करने के ढंग या व्यवहार करने में असफल होने से सम्बन्धित होती है। इस प्रकार, व्यवहारवादी परामर्शदाता मुख्यतः क्रिया पर बल देते हैं।

ग्लेसर तथा जूनिन (1979) के अनुसार 'वास्तविकता-उपचार' पद्धति पर आधारित इस परामर्श को समझने की दृष्टि से निम्न मान्यताओं का ज्ञान होना आवश्यक है-

- i. दूसरों को जानना- प्रत्येक व्यक्ति में, दूसरे व्यक्तियों को अनुभव करने, स्नेह पाने व करने तथा अपना व दूसरे का महत्व समझने की मूलभूत मनोवैज्ञानिक आवश्यकता होती है।
- ii. सफलता-असफलता का बोध- व्यक्तियों में दूसरों से अपने को अलग अनुभव करने की भी आवश्यकता होती है। अन्य शब्दों में, यह सफल या असफल होने का आत्मबोध है।
- iii. अनुत्तरदायी व्यवहार का कारण- अनुत्तरदायी या गैर-जिम्मेदारपूर्ण व्यवहार तब उत्पन्न होता है जबकि या तो व्यक्ति ने उत्तरदायी रूप से अपनी आवश्यकता पूर्ति के बारे में सीखा नहीं होता है अथवा वे उत्तरदायी रूप से आवश्यकता पूर्ति की क्षमता खो चुके होते हैं।
- iv. समकालीन व्यवहार पर ध्यान- चूंकि कोई भी विगत व्यवहार या भूतकाल को परिवर्तित नहीं कर सकता अतः ध्यान समकालीन वर्तमान व्यवहार पर दिया जाना चाहिए।
- v. व्यवहार परिवर्तन- चूंकि व्यक्ति भावनाओं, संवेगों अथवा अभिवृत्तियों की अपेक्षा व्यवहार को अधिक आसानी से नियन्त्रित कर सकते हैं अतः परामर्श का मुख्य उद्देश्य व्यवहार -परिवर्तन ही होना चाहिए।
- vi. उत्तरदायी ढंग से जुड़ाव- चूंकि केन्द्र बिन्दु वर्तमान तथा अन्तर्वैयक्तिक प्रक्रिया परामर्श का लक्ष्य होती है, इसलिए परामर्शदाता का परामर्शप्रार्थी के साथ व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ढंग से जुड़ना चाहिए।
- vii. विकल्प उत्पन्न हेतु सहायता- परामर्शदाता का मूल कार्य, परामर्शप्रार्थी को परिवर्तन हेतु अनेक विकल्प उत्पन्न करने हेतु सहायता प्रदान करना है।
- viii. सम्बद्धता- प्रत्येक व्यक्ति सफल, उत्तरदायी तथा लोगों से सम्बद्ध होना चाहता है, यह वृद्धि बल सभी व्यक्तियों में पाया जाता है।

- ix. व्यवहार क्षमता- विशिष्ट अधिगम क्रियाओं के माध्यम से व्यक्ति में उत्तरदायी रूप से व्यवहार करने की क्षमताएँ निर्मित की जा सकती है।

इस प्रकार व्यवहारवादी सिद्धान्त परामर्श में मुख्य बल वर्तमान पर देते हैं अर्थात् अभी व्यक्ति क्या कर रहा है तथा उसके सफल होने के प्रयासों की दिशा क्या है? व्यक्ति में अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने की योजना बनाने की क्षमता जाग्रत कर, उसको उत्तरदायी व्यवहार चुनने में समर्थ बनाया जा सकता है।

### बोधात्मक सिद्धान्त (Cognitively Oriented Theory)

प्रभाववर्ती तथा व्यवहारवादी सिद्धान्तों से पृथक बोधात्मक सिद्धान्त में यह स्वीकार किया जाता है कि संज्ञान या बोध व्यक्ति के संवेगों व व्यवहारों के सबसे प्रबल निर्धारक है। व्यक्ति जो सोचता है उसी के अनुसार अनुभव व व्यवहार करता है। बोधात्मक सिद्धान्त की एक अन्य लोकप्रिय एवं प्रचलित विधा कार्य-सम्पादन विश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें व्यवहार की समझ इस मान्यता पर निर्भर करती है कि सभी व्यक्ति अपने पर विश्वास सीख सकते हैं, अपने लिए चिन्तन या विचार कर सकते हैं, अपने निर्णय ले सकते हैं तथा अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने में समर्थ है। इस सिद्धान्त की सामान्य परिकल्पनाओं को हेरिस ने निम्न चार रूपों में दर्शाया है-

- i. मैं ठीक हूँ, आप भी ठीक हैं - यह एक स्वस्थ मानसिक दशा है।
- ii. मैं ठीक नहीं हूँ, आप भी ठीक नहीं हैं- यह जीवन में निराशावादी दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्तियों की मनोदशा है।
- iii. मैं ठीक हूँ, आप ठीक नहीं हैं- यह उस व्यक्ति की मनोस्थिति है जो कि दूसरे को अपने दुखों का कारण स्वीकार करता है।
- iv. मैं ठीक नहीं हूँ आप ठीक हैं- यह लोगों की सामान्य मनोस्थिति है जबकि वे अन्यो की तुलना में अपने को शक्तिहीन अनुभव करते हैं।

परामर्शदाता इसके अन्तर्गत परामर्शप्रार्थी का, उसी नष्ट अहं दशा के पुनर्निर्माण हेतु प्रेरित करता है। समयानुकूल अहं दशा के उपयोग की प्रणाली अपनाने में सहायता करता है तथा उसे जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने व विकसित करने की क्षमता दृढ़ करने में सबलता प्रदान करने में सहायता देता है।

### व्यवस्थावादी प्रारूप सिद्धान्त (Systemetic Model Theory)

व्यवस्थावादी सिद्धान्त की प्रमुख विशेषता परामर्श का विभिन्न चरणों में संयोजित होना है। चरणों के अनुरूप इस सिद्धान्त में परामर्श की विभिन्न अवस्थाएँ स्वीकार की गयी है। सभी अवस्थाएँ एक-दूसरे से जुड़ी व अन्तः क्रियाशील मानी जाती हैं। यही व्यवस्था-प्रारूप मूलतः इस सिद्धान्त का आधार है व परामर्श की एक विशिष्ट प्रविधि का जनक है। संक्षेप में इन अवस्थाओं को इस प्रकार से जाना जा सकता है-

- i. प्रथम अवस्था- समस्या अन्वेषण (Problem Exploration)
- ii. द्वितीय अवस्था- द्विआयामी समस्या परिभाषा ( Two-Dimensional Problem Definition)
- iii. तृतीय अवस्था- विकल्पों का अभिज्ञान करना (Identification of Alternatives)
- iv. चतुर्थ अवस्था- आयोजना ( Planning)
- v. पंचम अवस्था- क्रिया-प्रतिबद्धता (Action Commitment)
- vi. षष्ठम अवस्था- मूल्यांकन एवं फीडबैक ( Assessment and Feedback)

इस सिद्धान्त की प्रमुख मान्यता यह है कि व्यक्ति जीवन में एकीकरण के उच्चतम स्तर की प्राप्ति हेतु सदैव संलग्न रहता है। इसलिए परामर्श की व्यवस्था व्यावहारिक होनी चाहिए जो कि एकीकरण की एक ऐसी व्यवस्था की कल्पना में सक्षम हो जिसके द्वारा समकालीन जगत तथा उद्विग्न होने वाले व्यक्ति, दोनों के ही विषय में इस लाभदायी अभिमत का निर्माण हो सके।

### अभ्यास प्रश्न

6. नप्रभाववर्ती सिद्धान्त मूलतः \_\_\_\_\_ दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है।
7. व्यवहारवादी सिद्धान्त परामर्शप्रार्थी के \_\_\_\_\_ व्यवहारों पर बल देते हैं।
8. बोधात्मक सिद्धान्त की एक अन्य प्रचलित विधा \_\_\_\_\_ विश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है।
9. व्यवस्थावादी सिद्धान्त की प्रमुख विशेषता परामर्श \_\_\_\_\_ में संयोजित होना है।

### 7.9 परामर्श के विभिन्न दृष्टिकोण या विचारधाराएँ ( Different School of Thoughts in Counselling)

परामर्श प्रक्रिया की प्रकृति को देखते हुए तथा परामर्शदाता की भूमिका को देखते हुए परामर्श की तीन प्रमुख विचारधाराएँ हैं जो कि निम्नलिखित हैं-

1. निर्देशीय या परामर्शदाता-केन्द्रित या नियोजक परामर्श
2. अनिर्देशीय या प्रार्थी केन्द्रित या अनुमत परामर्श
3. समन्वित परामर्श

### निर्देशीय या परामर्शदाता-केन्द्रित या नियोजक परामर्श ( Directive or Counsellor Centred or Prescriptive Counselling)

इस विचारधारा के मुख्य प्रवर्तक मिर्निसोटा विश्वविद्यालय के ई0जी0 विलियमसन हैं इस प्रकार इस विचारधारा के अन्तर्गत परामर्शदाता प्रार्थी की समस्या को हल करने का मुख्य उत्तरादायित्व अपने ऊपर लेता है। इस प्रक्रिया में परामर्शदाता समस्या की खोज और उसे परिभाषित करता है, निदान करता है तथा समस्या के उपचार के बारे में बताता है।

### निर्देशीय परामर्श की अवधारणाएँ (Basic Assumptions of Directive Counselling)

एन्ड्रीयूस और विली के अनुसार निर्देशीय परामर्श की मूलभूत अवधारणाएँ निम्नलिखित हो सकती हैं-

- सलाह देने की सक्षमता- परामर्शदाता के पास श्रेष्ठ प्रशिक्षण, अनुभव और सूचना होती है। वह समस्या के समाधान के बारे में सलाह देने के लिये अधिक सक्षम है।
- परामर्श एक बौद्धिक प्रक्रिया है- किसी प्रार्थी की कुसमायोजनता से उसकी बौद्धिक योग्यता पूर्णतया नष्ट नहीं होती। अतः परामर्श प्राथमिक रूप से बौद्धिक प्रक्रिया है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व के संवेगात्मक पक्षों की बजाय बौद्धिक पक्षों पर बल देता है।
- प्रार्थी की समस्या समाधान में अक्षमता- परामर्श की यह अवधारणा भी है कि प्रार्थी में सदा ही समस्या समाधान की क्षमता नहीं होती।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इसमें प्रत्यक्ष और व्याख्यात्मक विधियों की सलाह दी जाती है। इस प्रकार के परामर्श में व्यक्ति की अपेक्षा समस्या पर ध्यान हो और प्रार्थी सारी प्रक्रिया में सहयोग करे। प्रार्थी को परामर्शदाता के अधीन कार्य करना होता है न कि उसके साथ मिलकर।

### निर्देशीय परामर्श के सोपान ( Steps in Directive Counselling)

निर्देशीय परामर्श के निम्नलिखित छः सोपान दिए हैं-

- विश्लेषण (Analysis)** - विश्लेषण के अन्तर्गत परामर्श के बारे में सही जानकारी प्राप्त करने के लिए अनेक स्रोतों द्वारा आधार-सामग्री एकत्रित की जाती है।
- संश्लेषण ( Synthesis)**- द्वितीय सोपान में संकलित आधार सामग्रियों को क्रमबद्ध, व्यवस्थित एवं संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है। जिससे परामर्शप्रार्थी के गुणों, न्यूनताओं समायोजन एवं कुसमायोजन की स्थितियों का पता लगाया जा सके।
- निदान (Diagnosis)** - निदान के अन्तर्गत परामर्शप्रार्थी द्वारा अभिव्यक्ति समस्या के कारण तत्वों तथा उनकी प्रकृति के बारे में निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
- पूर्व अनुमान (Prognosis)** - इसमें परामर्शप्रार्थी की समस्या के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जाती है।

- v. **परामर्श या उपचार (Counselling or Treatment)** - पंचम सोपान में परामर्शदाता परामर्शप्रार्थी के समायोजन तथा पुनः समायोजन के बारे में वांछनीय प्रयास करता है।
- vi. **अनुवर्तन (Follow-Up)** - इसमें परामर्शप्रार्थी की नयी समस्याओं के पुनः घटित होने की सम्भावनाओं से निपटने में सहायता की जाती है और परामर्शप्रार्थी को प्रदान किए गए परामर्श की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जाता है।

### निर्देशीय परामर्श की विशेषताएँ (Characteristics of Directive Counselling)

- i. प्रक्रिया में परामर्शदाता मुख्य भूमिका निभाता है।
- ii. वह प्रार्थी को सलाह प्रदान करता है।
- iii. इस प्रक्रिया के केन्द्र-बिन्दु में व्यक्ति नहीं, बल्कि समस्या है।
- iv. प्रार्थी परामर्शदाता के अधीन कार्य करता है न कि साथ।
- v. इस परामर्श में , जिन विधियों का प्रयोग किया जाता है वे प्रत्यक्ष, प्रभावी और व्याख्यात्मक होती हैं।
- vi. परामर्श व्यक्ति के व्यक्तित्व के संवेगात्मक पक्ष की बजाय बौद्धिक पक्ष पर अधिक बल देता है।

### निर्देशीय परामर्श की सीमाएँ (Limitation of Directive Counselling)

- i. इस प्रक्रिया में प्रार्थी अधिक निर्भर होता है वह कुसमायोजन की नई समस्याओं का समाधान करने के भी अयोग्य होता है।
- ii. क्योंकि प्रार्थी परामर्शदाता से कभी भी स्वतन्त्र नहीं हो पाता, यह उत्तम और प्रभावी निर्देशन नहीं है।
- iii. जब तक व्यक्ति स्वयं के अनुभवों द्वारा कुछ दृष्टिकोणों या अभिवृत्तियों का विकास नहीं कर लेता तब तक वह स्वयं निर्णय नहीं ले सकता। इस प्रकार के अनुभव तथा दृष्टिकोणों के विकास का इस प्रकार के निर्देशन कार्यक्रम में सदा अभाव रहता है।
- iv. परामर्शदाता प्रार्थी को भविष्य में गलतियों को करने से बचाने में असमर्थ रहता है।
- v. परामर्शप्रार्थी के बारे में जानकारी का अभाव रहता है जिससे गलत परामर्श सम्भव है।

### अनिर्देशीय परामर्श या प्रार्थी-केन्द्रित या अनुमत परामर्श (Non-Directive or Client-Centered or Permissive Counselling)

निर्देशीय परामर्श के विपरीत अनिर्देशात्मक परामर्श परामर्शप्रार्थी-केन्द्रित होता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शप्रार्थी को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के आत्मोपलब्धि एवं आत्मसिद्धि तथा

आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख किया जाता है। इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने तथा इसे सर्वप्रचलित करने का श्रेय कार्ल आर रोजर्स (Carl R. Rogers) को जाता है।

### अनिर्देशीय परामर्श की मूलभूत अवधारणाएँ (Basic Assumptions in Non-Directive Counselling)

- i. व्यक्ति की मर्यादा में विश्वास (Belief in the dignity of man) - रोजर्स व्यक्ति की मान-मर्यादा में विश्वास रखता है। वह व्यक्ति को स्वयं निर्णय लेने में सक्षम मानता है तथा ऐसे करने के उसके अधिकार को स्वीकार करता है।
- ii. वास्तवीकरण की ओर प्रवृत्ति (Tendency toward Actualization)- रोजर्स ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति की वृद्धि और विकास की क्षमता व्यक्ति की वह आवश्यक विशेषता है जिस पर परामर्श ओर मनोचिकित्सा विधियाँ निर्भर करती हैं।
- iii. व्यक्ति विश्वास योग्य है (Man is Trustworthy) - रोजर्स व्यक्ति का मानना है कि व्यक्ति विश्वास योग्य है क्योंकि व्यक्ति कुछ शक्तियों के साथ पैदा होता है जिन पर नियंत्रण करना आवश्यक है यदि स्वस्थ व्यक्तित्व विकास होने देना है।
- iv. व्यक्ति अपनी बुद्धि से अधिक विवकेशील है (Man is wiser than his intellect)- व्यक्ति अपनी बुद्धि का उपयोग करते हुए विवकेशील होकर समस्याओं के सम्बन्ध में सही निर्णय ले सकता है।

### अनिर्देशीय परामर्श के सोपान (Steps in Non-Directive Counselling)

- i. **वार्तालाप (Conversation)** - प्रथम सोपान में परामर्शदाता तथा परामर्शप्रार्थी के बीच अनेक बैठकों में अनौपचारिक रूप से विभिन्न विषयों पर बातचीत होती है। अनेक बार ये दोनों किसी उद्देश्य के मिलते हैं लेकिन प्रथम सोपान का मुख्य उद्देश्य है- परस्पर सौहार्द की स्थापना करना है जिससे परामर्शप्रार्थी बिना किसी संकोच से अपनी बात को कहने हेतु मानसिक रूप से तैयार हो सके। परामर्शप्रार्थी द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि वह परामर्शप्रार्थी के साथ मित्र के समान सम्बन्ध स्थापित कर ले और उसके समक्ष ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दे कि मित्र-चिकित्सा की पद्धति को प्रयुक्त किया जा सके।
- ii. **जाँच-पड़ताल (Probing)**- परामर्शप्रार्थी की वैयक्तिक समस्या, परिस्थिति एवं सन्दर्भों के सम्बन्ध में सविस्तार जाँच-पड़ताल की व्यवस्था की जाती है। इसलिए परामर्शदाता विभिन्न परोक्ष प्रविधियों का प्रयोग करता है।

- iii. **संवेगात्मक अभिव्यक्ति (Emotional Release)** - परामर्शप्रार्थी की व्यवस्थाओं , भावनाओं तथा मानसिक तनावों को अभिव्यक्त करने हेतु उसे अवसर प्रदान करना ही इस सोपान का मुख्य उद्देश्य है।
- iv. **परोक्ष रूप से प्रदान किए गए सुझावों पर चर्चा (Discussion on Indirectly given Suggestion)**- इस सोपान में परामर्शप्रार्थी परामर्शदाता द्वारा दिए गए सुझावों को एक आलोचनात्मक दृष्टि से देखता है।
- v. **योजना का प्रतिपादन (Project Formulation)**- इसमें परामर्शदाता को स्वयं की समस्या का हल प्राप्त करने हेतु एक वास्तविक योजना का निर्माण करने का अवसर प्रदान किया जाता है। इस योजना के स्वरूप , प्रभाव इत्यादि के सम्बन्ध में दोनों विचार-विमर्श करते हैं।
- vi. **योजना का क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन (Project Implementation and Evaluation)**- षष्ठम् सोपान के अन्तर्गत परामर्शप्रार्थी द्वारा बनाई गई योजना को क्रियान्वित किया जाता है तथा उसकी प्रभावशीलता ज्ञात करने के लिए आत्म-मूल्यांकन की भी व्यवस्था भी इस सोपान में की जाती है।

### अनिर्देशीय परामर्श की प्रमुख विशेषताएँ (Main Characteristics of Non-Directive Counselling)

- i. यह प्रार्थी-केन्द्रित परामर्श है।
- ii. यह इस सिद्धान्त पर आधारित होता है कि व्यक्ति में इतनी क्षमता और शक्ति होती है जिससे कि उसकी वृद्धि और विकास हो सके ताकि वह व्यक्ति वास्तविकता में परिस्थितियों का सामना कर सके।
- iii. इस परामर्श विचारधारा में परामर्शदाता सबसे अधिक निष्क्रिय होता है।
- iv. व्यक्ति जैसा है वैसा ही स्वीकार किया जाता है और वह अपने किसी भी दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने में स्वतंत्र है।
- v. इसके द्वारा मनोवैज्ञानिक समायोजन में सुधार होता है।
- vi. इसके प्रयोग से मनोवैज्ञानिक तनाव कम होते हैं।
- vii. इस प्रकार के परामर्श में सुरक्षात्मकता में कमी आती है।
- viii. इस प्रकार के परामर्श में प्रार्थी स्वयं के चित्र में और स्वयं के बारे में वांछित या आदर्श चित्र में बहुत अधिक निकटता होती है।
- ix. प्रार्थी का व्यवहार संवेगात्मक रूप से अधिक परिपक्व माना जाता है।
- x. प्रार्थी-केन्द्रित परामर्श में परामर्शदाता का सामान्य लक्ष्य होता है- प्रार्थी के स्वयं के संगठन और कार्यशीलता में परिवर्तन लाना है।
- xi. इस परामर्श में सम्पूर्ण उत्तरदायित्व प्रार्थी या व्यक्ति पर ही रहता है।

**अनिर्देशीय परामर्श की सीमाएँ (Limitation of Non-Directive Counselling)**

- i. यह परामर्श मनोविश्लेषण की तरह गहरा नहीं होता।
- ii. प्रार्थी को अपने वर्तमान दृष्टिकोणों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति की आज्ञा होती है, लेकिन इसमें यह बताने का प्रयास नहीं किया जाता कि ये वर्तमान दृष्टिकोण क्यों होते हैं। इसमें भूतकाल के बारे में कोई खोज नहीं, कोई सुझाव नहीं, पुनः शिक्षा का कोई प्रयास नहीं होता।
- iii. परामर्शदाता को लचीलेपन की आज्ञा का अभाव भी इस परामर्श की एक कमी है।
- iv. प्रार्थी-केन्द्रित सिद्धान्त की मूलभूत कमी यह है कि इसमें इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता कि उद्दीपक स्थिति और वातावरण की प्रकृति व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करती है।
- v. प्रार्थी -केन्द्रित परामर्श सिद्धान्त के अन्तर्गत बहुत सी परामर्श-परिस्थितियाँ सफलतापूर्वक नहीं आती।
- vi. यह अधिक समय खर्च करने वाली प्रक्रिया है। एक बार शुरू करने के पश्चात् प्रार्थी अपना संवाद समाप्त ही नहीं करता। इससे कई अन्य व्यक्ति परामर्श लेने से वंचित रह जाते हैं।
- vii. प्रार्थी के साधनों, निर्णयों और बुद्धिमत्ता पर निर्भर नहीं रहा जा सकता।
- viii. कई बार परामर्शदाता की निष्क्रियता से प्रार्थी अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने में हिचकिचाहट अनुभव करता है।

**समन्वित या संकलक या समाहारक परामर्श (Eclectic Counselling)**

जो परामर्शदाता निर्देशीय अथवा अनिर्देशीय विचारधाराओं से सहमत नहीं है उन्होंने परामर्श के एक अन्य प्रारूप का विकास किया है जिसे संग्रही या समन्वित परामर्श कहा जाता है। संग्रही परामर्श में निर्देशीय एवं अनिर्देशीय दोनों प्रारूपों की अच्छी बातों को ग्रहण किया गया है। एक प्रकार से यह दोनों के बीच का परामर्श प्रारूप है जिसे मध्यमार्गीय कहा जा सकता है।

इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता न तो अधिक सक्रिय होता है और न ही अधिक निष्क्रिय है इस प्रकार के परामर्श के मुख्य प्रवर्तक एफ0 सी0 थोर्न हैं इस प्रकार के परामर्श में व्यक्ति की आवश्यकताओं और उसके व्यक्तित्व का अध्ययन परामर्शदाता द्वारा ही किया जाता है। इसके पश्चात् परामर्शदाता उन प्रविधियों का चयन करता है जो व्यक्ति के लिये अधिक उपयोगी या सहायक है।

इस प्रकार के परामर्श -प्रक्रिया में परामर्शदाता पहले निर्देशीय परामर्श विधि के अनुसार शुरू कर सकता है तथा कुछ समय बाद अनिर्देशीय परामर्श विधि का अनुसरण कर सकता है। या इसके विपरीत जैसी स्थिति चाहे। इस प्रकार समन्वित परामर्श में दोनों परामर्शदाता और प्रार्थी सक्रिय और सहयोगात्मक होते हैं। दोनों बारी-बारी से वार्तालाप करते हैं और संयुक्त रूप से समस्या का समाधान करते हैं।

इस प्रकार के परामर्श में जो प्रविधियां प्रयोग की जाती हैं- वे है पुनः विश्वास, सूचना प्रदान करना, केस-हिस्ट्री, परीक्षण आदि।

### समन्वित परामर्श के सोपान (Steps in Eclectic Counselling)

समन्वित परामर्श के सोपान निम्नलिखित हैं-

- i. प्रार्थी की आवश्यकताओं और व्यक्तित्व की विशेषताओं का अध्ययन (Study of the needs and personality characteristics of the client)- इस विचारधारा के अन्तर्गत परामर्शदाता पहले-पहल प्रार्थी की आवश्यकताओं के बारे में छानबीन करता है। इसी सोपान के अन्तर्गत वह व्यक्ति के व्यक्तित्व की विशेषताओं के बारे में जानकारी एकत्रित करता है।
- ii. प्रविधियों का चयन (Selection of Techniques)- इस सोपान के अन्तर्गत आवश्यकतानुसार प्रविधियों का चयन किया जाता है तथा उनका प्रयोग किया जाता है। इन प्रविधियों का प्रयोग व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुसार ही किया जाता है।
- iii. प्रविधियों का प्रयोग (Application of Techniques)& - चयन की गई प्रविधियों का प्रयोग विशिष्ट परिस्थितियों में ही किया जाता है। जिन प्रविधियों को चुना जाता है उनकी उपयोगिता प्रार्थी की परिस्थिति के अनुसार ही देखी जाती है।
- iv. प्रभावशीलता का मूल्यांकन (Evaluation of Effectiveness) - इस सोपान के अन्तर्गत प्रभावशीलता का मूल्यांकन विभिन्न विधियों से किया जाता है।
- v. परामर्श की तैयारी (Preparations for Counselling) - इस सोपान के अन्तर्गत पथ-पदर्शन के लिये आवश्यक तैयारी की जाती है।
- vi. प्रार्थी और अन्य व्यक्ति की राय प्राप्त करना (Seeking the opinion of the Client and other related people) - परामर्श सम्बन्धी कार्यक्रम एवं अन्य उद्देश्यों तथा विषयों के बारे में प्रार्थी तथा उससे सम्बन्धित अन्य व्यक्तियों से राय प्राप्त की जाती है।

### समन्वित परामर्श की विशेषताएँ (Characteristics of Eclectic Counselling)

थार्न (Thorne) के अनुसार समन्वित परामर्श की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- i. इसमें वस्तुनिष्ठ एवं समन्वयपरक विधियों का प्रयोग किया जाता है।
- ii. परामर्श के प्रारम्भ में प्रार्थी की सक्रियता वाली प्रविधियों का प्रयोग अधिक होता है और इसमें परामर्शदाता निष्क्रिय होता है।
- iii. इसमें कार्य-कुशलता एवं उपचार प्राप्त करने को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है।
- iv. इसके प्रयोग में अल्पव्यय के सिद्धान्त को ध्यान में रखा जाता है।

- v. इस प्रकार के परामर्श में समस्त विधियों और प्रविधियों के प्रयोग के लिये परामर्शदाता में व्यावसायिक कुशलता एवं दक्षता का होना अनिवार्य होता है।
- vi. प्रार्थी की आवश्यकता को ध्यान में रखकर ही यह निर्णय लिया जाता है कि कब निर्देशीय विधि का प्रयोग किया जाए और कब अनिर्देशीय विधि का।
- vii. प्रार्थी को अवसर उपलब्ध कराने पर बल दिया जाता है ताकि वह स्वयं समस्या का हल खोज सके।

### समन्वित परामर्श की सीमाएँ (Limitation of Eclectic Counselling)

- i. परामर्श का यह प्रकार अस्पष्ट और अवसरवादी है।
- ii. दोनों निर्देशीय और अनिर्देशीय परामर्शों को मिश्रित नहीं किया जा सकता।
- iii. इसमें यह प्रश्न उठता है कि प्रार्थी को कितनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाये। इसके बारे में कोई निश्चित नियम नहीं हो सकता।

### अभ्यास प्रश्न

10. परामर्श प्रक्रिया की \_\_\_\_\_ प्रमुख विचारधाराएँ हैं।
11. निर्देशीय परामर्श विचारधारा के मुख्य प्रवर्तक मिर्निसोटा विश्वविद्यालय के \_\_\_\_\_ हैं।
12. निर्देशीय परामर्श प्रक्रिया में \_\_\_\_\_ मुख्य भूमिका निभाता है।
13. अनिर्देशात्मक परामर्श \_\_\_\_\_ केन्द्रित होता है।
14. अनिर्देशीय सिद्धान्त को प्रतिपादित करने श्रेय \_\_\_\_\_ को जाता है।
15. अनिर्देशात्मक परामर्श विचारधारा में परामर्शदाता सबसे अधिक \_\_\_\_\_ होता है।
16. समन्वित परामर्श को \_\_\_\_\_ कहा जा सकता है।
17. समन्वित परामर्श मुख्य प्रवर्तक \_\_\_\_\_ हैं।
18. समन्वित परामर्श में \_\_\_\_\_ एवं समन्वयपरक विधियों का प्रयोग किया जाता है।

### 7.10 सारांश

परामर्श एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है। जिसके तीन प्रमुख अंग हैं। लक्ष्य, परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी। परामर्श की सफलता के लिए उसमें निम्न चार आधारभूत मान्यताओं का होना आवश्यक है- (1) इच्छा जानना (2) परामर्शदाता का अनुभवी होना (3) उचित वातावरण (4) आवश्यकता की पूर्ति-परामर्श की प्रक्रिया के तीन मुख्य अंग हैं-परामर्श का लक्ष्य, परामर्शप्रार्थी एवं परामर्शदाता। परामर्श

की प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण घटक लक्ष्य निर्धारण है। एक प्रकार से परामर्श का लक्ष्य परामर्शप्राथी को मूल्यों के पुनरान्वेषण में सहायता देना है। मैकडैनियल और शैफ्टल के अनुसार परामर्श प्रक्रिया निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित है- (1) स्वीकृति का सिद्धान्त (2) व्यक्ति के सम्मान का सिद्धान्त (3) व्यक्ति के साथ विचार करने का सिद्धान्त (4) लोकतन्त्रीय आदर्शों के साथ निरन्तरता का सिद्धान्त (5) सीखने का सिद्धान्त परामर्श प्रक्रिया के विलियमसन और डरले ने निम्नलिखित 6 पदों की चर्चा की है- (1) विश्लेषण (2) संश्लेषण (3) निदान (4) पूर्व अनुमान (5) परामर्श (6) अनुवर्तना परामर्श का महत्वपूर्ण तत्व है - परस्पर विचारों का आदान-प्रदान। यदि विचारों के आदान-प्रदान में कोई विघ्न आता है तो परामर्श अपूर्ण ही रहता है। समुचित परामर्शप्राथी-परामर्शदाता सम्बन्धों विकसित करने हेतु कतिपय तकनीकों का विकास किया गया है विलियमसन ने परामर्श प्रविधियों या तकनीकों को निम्नलिखित पांच शीर्षकों के अन्तर्गत वर्णित किया है- ;1 मधुर सम्बन्ध स्थापित करना ;2 स्वयं-बोध उत्पन्न करना ;3 क्रिया के लिये कार्यक्रम का नियोजन और सुझाव ;4 व्याख्यात्मक विधि ;5 अन्य कार्यकर्ताओं का सहयोग। इन उपरोक्त प्रविधियों के अतिरिक्त परामर्श की अन्य प्रविधियां भी हैं जो निम्नलिखित है- (1) मौन-धारण (2) स्वीकृति (3) स्पष्टीकरण (4) पुनर्कथन (5) मान्यता (6) प्रश्न पूछना (7) हास्य रस (8) सारांश स्पष्टीकरण (9) विश्लेषण (10) व्याख्या या विवेचना (11) परित्याग (12) आश्वासन।

परामर्शकर्ता के लिये सैद्धान्तिक आधारों का परिचय आवश्यक है। अध्ययन की सुविधा हेतु, दृष्टिकोणों के आधार पर इन्हें चार मुख्य वर्गों में रखा जा सकता है-

1. प्रभाववर्ती सिद्धान्त -यह सिद्धान्त मूलतः अस्तित्वादी मानववादी दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है। इसमें परामर्शप्राथी को प्रभावपूर्ण ढंग से समझने पर विशेष बल दिया जाता है। केम्प (1971), राजर्स (1975), बारूथ तथा हूबर (1985) जैसे विद्वान इस सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक हैं। उनका मत है कि मानवीय अन्तः क्रिया ही प्रभाववर्ती परामर्शदाता के लिये ध्यान का केन्द्र है। मानवतावादी मनोविज्ञान की शेफर (1978) की प्रमुख मान्यताएँ ही इस सिद्धान्त का आधार है।
2. व्यवहारवादी सिद्धान्त -प्रभाववर्ती सिद्धान्तों में जहाँ एक ओर बल इस बात पर दिया जाता है कि परामर्शप्राथी कैसा अनुभव करता है वहीं दूसरी ओर व्यवहारवादी सिद्धान्त परामर्शप्राथी के अवलोकनीय व्यवहारों पर बल देते हैं। दूसरे शब्दों में, व्यवहारवादी परामर्शप्राथी के अनुभवों की अपेक्षा उसके व्यवहारों को जानने व समझने में अधिक रूचि रखते हैं। व्यवहारवादी परामर्शदाता के लिए, भावनाओं या जागरूकता के स्तरों की अन्तर्दृष्टि पर्याप्त नहीं है। वह परिवर्तन के लिए क्रिया या व्यवहार को शब्दों की अपेक्षा अधिक सार्थक स्वीकार करता है। व्यवहारवादी समस्याग्रस्त व्यक्ति के लक्षणों पर अधिक ध्यान देते हैं ये समस्याएँ अधिकांशतः परामर्शप्राथी द्वारा अपने व्यवहार करने के ढंग या

व्यवहार करने में असफल होने से सम्बन्धित होती है। इस प्रकार, व्यवहारवादी परामर्शदाता मुख्यतः क्रिया पर बल देते हैं।

3. बोधात्मक सिद्धान्त-प्रभाववर्ती तथा व्यवहारवादी सिद्धान्तों से पृथक बोधात्मक सिद्धान्त में यह स्वीकार किया जाता है कि संज्ञान या बोध व्यक्ति के संवेगों व व्यवहारों के सबसे प्रबल निर्धारक है। व्यक्ति जो सोचता है उसी के अनुसार अनुभव व व्यवहार करता है। बोधात्मक सिद्धान्त की एक अन्य लोकप्रिय एवं प्रचलित विधा कार्य-सम्पादन विश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें व्यवहार की समझ इस मान्यता पर निर्भर करती है कि सभी व्यक्ति अपने पर विश्वास सीख सकते हैं, अपने लिए चिन्तन या विचार कर सकते हैं, अपने निर्णय ले सकते हैं तथा अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने में समर्थ है।
4. व्यवस्थावादी प्रारूप सिद्धान्त -इस सिद्धान्त की प्रमुख मान्यता यह है कि व्यक्ति जीवन में एकीकरण के उच्चतम स्तर की प्राप्ति हेतु सदैव संलग्न रहता है। इसलिए परामर्श की व्यवस्था व्यावहारिक होनी चाहिए जो कि एकीकरण की एक ऐसी व्यवस्था की कल्पना में सक्षम हो जिसके द्वारा समकालीन जगत तथा उद्विग्न होने वाले व्यक्ति, दोनों के ही विषय में इस लाभदायी अभिमत का निर्माण हो सके।

परामर्श प्रक्रिया की प्रकृति को देखते हुए तथा परामर्शदाता की भूमिका को देखते हुए परामर्श की तीन प्रमुख विचारधाराएँ हैं जो कि निम्नलिखित हैं-

1. निर्देशीय या परामर्शदाता-केन्द्रित या नियोजक परामर्श -इस विचारधारा के मुख्य प्रवर्तक मिर्निसोटा विश्वविद्यालय के ई0जी0 विलियमसन हैं इस प्रकार इस विचारधारा के अन्तर्गत परामर्शदाता प्रार्थी की समस्या को हल करने का मुख्य उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेता है। इस प्रक्रिया में परामर्शदाता समस्या की खोज और उसे परिभाषित करता है, निदान करता है तथा समस्या के उपचार के बारे में बताता है।
2. अनिर्देशीय परामर्श या प्रार्थी-केन्द्रित या अनुमत परामर्श -निर्देशात्मक परामर्श के विपरीत अनिर्देशात्मक परामर्श परामर्शप्रार्थी-केन्द्रित होता होता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शप्रार्थी को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के आत्मोपलब्धि एवं आत्मसिद्धि तथा आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख किया जाता है। इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने तथा इसे सर्वप्रचलित करने का श्रेय कार्ल आर रोजर्स (Carl R. Rogers) को जाता है।
3. समन्वित या संकलक या समाहारक परामर्श -जो परामर्शदाता निर्देशात्मक अथवा अनिर्देशात्मक विचारधाराओं से सहमत नहीं है उन्होंने परामर्श के एक अन्य प्रारूप का विकास किया है जिसे संग्रही या समन्वित परामर्श कहा जाता है। संग्रही परामर्श में निर्देशात्मक एवं अनिर्देशात्मक दोनों प्रारूपों की अच्छी बातों को ग्रहण किया गया है। एक प्रकार से यह दोनों के बीच का परामर्श प्रारूप है जिसे मध्यमार्गीय कहा जा सकता है।

---

**7.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

---

1. त्रिधुवी
2. समस्या
3. 6
4. पारस्परिक सम्पर्क
5. परस्पर विचारों का आदान-प्रदान
6. अस्तित्ववादी मानववादी
7. अवलोकनीय
8. कार्य-सम्पादन
9. विभिन्न चरणों
10. तीन
11. ई0जी0 विलियमसलन
12. परामर्शदाता
13. परामर्शप्रार्थी
14. कार्ल रोजर्स
15. निष्क्रिय
16. मध्यवर्गीय
17. एफ0 सी0 थोर्न
18. वस्तुनिष्ठ

---

**7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ**

---

1. डॉ0 आशा रावत- वृतिक निर्देशन तथा रोजगार सूचना, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ, 2012
2. एम0एल0 मित्तल- कैरियर निर्देशन एवं रोजगार सूचना, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2010
3. डॉ0 एस0सी0 ओबराय- शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन एवम् परामर्श, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2010
4. डॉ0 सीताराम जायसवाल- शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 2012
5. डॉ0 रामपाल सिंह; डॉ0 राधाबल्लभ उपाध्याय- शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन-विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, 2004
6. डॉ0 आर0 ए0 शर्मा- निर्देशन एवं परामर्श के मूल तत्व, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ, 2009

---

**7.13 निबन्धात्मक प्रश्न**

---

1. परामर्श की प्रक्रिया की अवधारणा और पदों का विवरण दें।
2. परामर्शदाता और परामर्शप्राथी के मध्य सम्बन्धों की चर्चा कीजिए।
3. परामर्श के सिद्धान्तों की व्याख्या करें।
4. परामर्श की प्रमुख विशेषतायें बताएँ। निर्देशात्मक परामर्श अनिर्देशात्मक परामर्श से किस प्रकार भिन्न है?
5. परामर्श के क्षेत्र में प्रचलित किन्हीं दो सिद्धान्तों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें-
  - i. निर्देशात्मक परामर्श
  - ii. अनिर्देशात्मक परामर्श
  - iii. समन्वित परामर्श

## इकाई 8 : समूह परामर्श बनाम व्यक्तिगत परामर्श , एक अच्छे परामर्श की विशेषताएँ, समायोजन हेतु परामर्श

- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 उद्देश्य
- 8.3 समूह परामर्श बनाम व्यक्तिगत परामर्श
  - 8.3.1 समूह परामर्श अर्थ, अवधारणाएँ, उद्देश्य, चरण, अवस्थाएँ
  - 8.3.2 समूह परामर्श के लाभ और सीमाएँ
  - 8.3.3 व्यक्तिगत परामर्श अर्थ, उद्देश्य, चरण
  - 8.3.4 व्यक्तिगत परामर्श के लाभ एवं सीमाएँ
  - 8.3.5 समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श का तुलनात्मक अध्ययन
- 8.4 एक अच्छे परामर्श की विशेषताएँ
  - 8.4.1 अच्छे परामर्श हेतु उपबोधक की भूमिका
  - 8.4.2 अच्छे परामर्श हेतु उपबोध्य की भूमिका
- 8.5 समायोजन के लिए परामर्श
  - 8.5.1 समायोजन का अर्थ
  - 8.5.2 समायोजन की आवश्यकता
  - 8.5.3 समायोजन के लिए परामर्श की भूमिका
- 8.6 सारांश
- 8.7 शब्दावली
- 8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 8.9 संदर्भ ग्रन्थ
- 8.10 निबंधात्मक प्रश्न

### 8.1 प्रस्तावना

आप अब तक परामर्श की अवधारणा को भली भाँति समझ चुके हैं। यह जान चुके हैं कि परामर्श की प्रक्रिया में उपबोधक द्वारा परामर्श सेवा प्रदान कर उपबोध्य में आत्मसमझ के विकास, अन्तःदृष्टि के विकास व समायोजन की क्षमता के विकास में सहायता किया जाता है।

अब आपको यह समझना है कि सहायता प्रदान करने की यह प्रक्रिया दो विधियों द्वारा सम्पन्न की जाती है। प्रथम विधि में, उपबोधक केवल एक व्यक्ति को सहायता प्रदान करने के लिए परामर्श कार्य सम्पन्न करता है, इसे व्यक्तिगत परामर्श कहते हैं व द्वितीय विधि में, उपबोधक परामर्श की क्रिया को समूह में सम्पन्न करता है जिसे समूह परामर्श कहते हैं। वास्तव में परामर्श की क्रिया को सदैव से व्यक्ति या उपबोधक केन्द्रित माना जाता रहा है। परन्तु बदलते समय व परिस्थितियों के अनुसार परामर्श में भी नवीन तरीकों का प्रयोग बढ़ा है इस क्रम में परामर्श के क्षेत्र में समूह परामर्श की अवधारणा का प्रयोग भी बढ़ चला है। अतः इस इकाई में आपको समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श को स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयास कराया जाएगा। पुनः आपको यह समझना भी आवश्यक है कि परामर्श के लक्ष्यों को तभी प्राप्त किया जा सकता है जब परामर्श अच्छे व प्रभावशाली ढंग से सम्पन्न हो। अतः इस इकाई में आपको एक अच्छे परामर्श की विशेषताओं से परिचित कराया जाएगा। इसके अतिरिक्त इस इकाई में समायोजन के लिए परामर्श की आवश्यकता को भी समझाने का प्रयास भी किया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समूह परामर्श एवं व्यक्तिगत परामर्श के महत्त्व को समझा सकेंगे। प्रभावशाली परामर्श के प्रमुख विशेषताओं को समझा सकेंगे व समायोजन के लिए परामर्श की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।

## 8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

1. समूह परामर्श की अवधारणाएँ, आवश्यकता एवं उद्देश्यों को व्यक्त कर सकेंगे।
2. व्यक्तिगत परामर्श की अवधारणा, आवश्यकता एवं उद्देश्यों को व्यक्त कर सकेंगे।
3. व्यक्तिगत परामर्श व समूह परामर्श की तुलना कर सकेंगे।
4. प्रभावी उपबोधक की विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे।
5. ऐसे मामलों की पहचान कर सकेंगे जहाँ व्यक्ति को समायोजन क्षमता के विकास हेतु परामर्श के माध्यम से सहायता की आवश्यकता है।

## 8.3 समूह परामर्श बनाम व्यक्तिगत परामर्श

हम पहले ही समझ चुके हैं कि परामर्श की प्रक्रिया दो प्रकार की विधियों के द्वारा सम्पन्न की जाती है जिन्हे हम क्रमशः समूह परामर्श एवं व्यक्तिगत परामर्श कहते हैं। अब हम समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श के संबंध में विस्तृत ज्ञान प्राप्त करने के लिए दोनों का क्रमशः अलग-अलग व बारीकी से अध्ययन करेंगे।

### 8.3.1 समूह परामर्श अर्थ, अवधारणाएँ, उद्देश्य, चरण, अवस्थाएँ

परामर्श के क्षेत्र में समूह परामर्श की अवधारणा नवीनतम है। वर्तमान समय में समाज के सभी सेवा क्षेत्रों में, जिसमें विद्यालय, महाविद्यालय, मानसिक स्वास्थ्य संस्थान और दूसरे मानव सेवा एजेंसीयां सम्मिलित हैं, समूह परामर्श की प्रक्रिया का उपयोग बढ़ता जा रहा है।

संबंधित अध्ययन के क्रम में आगे बढ़ने से पूर्व हम यह समझ लेने का प्रयास करेंगे कि समूह परामर्श की आवश्यकता क्यों महसूस की जा रही है। वास्तव में मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा वह अपनी समस्याओं का समाधान समूह की मदद से अधिक बेहतर ढंग से कर सकता है। मनुष्य सबसे अधिक प्रेम व जुड़ाव का भुखा होता है। मनुष्य की इस आवश्यकता की संतुष्टि समूह में होती है। व्यक्ति जब खुद की पहचान को खोने लगता है तब समूह व्यक्ति के चिंतन करने की प्रक्रिया को पुनर्व्यवस्थित करता है। समूह व्यक्ति के आत्म चेतना के विकास में सहायता करता है। इनके अतिरिक्त समूह परामर्श के बढ़ रहे उपयोग के पीछे एक सोंच यह भी है कि जैसे उपबोध जो व्यक्तिगत रूप से परामर्श में खुद को सहज नहीं पाते हैं उनके लिए समूह परामर्श विशेष रूप से लाभदायक है। समूह में बैठने से उपबोध की निजी पहचान छिप जाती है और वह इसी वजह से अधिक स्वाभाविक रूप से अनुक्रिया करता है। आर्थिक दृष्टिकोण से भी देखा जाए तो यह कम खर्चीली है, क्योंकि धन के रूप में संसाधनों और प्रशिक्षित कार्मिकों की सदैव कमी रहती है। इसलिए यदि एक ही समय में व्यक्तियों के पूरे समूह को परामर्श प्रदान किया जाए तो यह अत्यंत लाभदायक सिद्ध होगा। इनके अतिरिक्त एक तथ्य यह भी है कि समूह परामर्श कुछ विशेष अभिवृत्तियों, धारणाओं, भावनाओं, आवश्यकताओं आदि में बदलाव लाने में सहायक होती है। ऐसे व्यक्तियों के लिए समूह परामर्श बड़े स्तर पर लाभदायक है जो अंतःव्यक्ति अंतःक्रियाओं में शर्मीले या आक्रामक हैं, समूहों में उत्तेजित या असुविधा अनुभव करते हैं या सामाजिक अपेक्षाओं के प्रति अनिच्छुक हैं। समूह परामर्श से किशोरों को भी अधिक लाभ पहुँचता है जिनके लिए मित्र समूह का विशेष महत्त्व है। पुनः समूह परामर्श से समाज के कुछ विशेष वर्ग जैसे नशा करने वाले, उत्पीड़ित वर्ग या ऐसे कुछ अन्य वर्ग अधिक फायदा उठा सकते हैं।

### समूह परामर्श का अर्थ

समूह परामर्श में एक छोटे समूह के सदस्य सम्मिलित होते हैं जो अपने विशिष्ट लक्ष्यों को लेकर एकत्रित होते हैं, आपस में अपनी समस्याओं को बाँटते हैं, तदनुभूति पूर्ण व्यवहार का अदान-प्रदान करते हैं। एक दूसरे को सहारा देते हैं और अपने व्यवहार के परिवर्तन हेतु व अंतर्वैयक्तिक समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी कौशलों के विकास करने में सहायता प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार समूह परामर्श वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत व्यक्तियों का समूह उपबोधक के साथ मिलजूल कर वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक समस्याओं को दूर करने की कला सीखते हैं। इस प्रक्रिया

में कुछ उपबोध अपनी समस्याओं की मिलजुल कर खोजबीन करते हैं और उनका विश्लेषण भी करते हैं जिससे समस्याओं को वे बेहतर तरीके से समझ सकें; समस्याओं का सामना करना सीख सकें और उपलब्ध विकल्पों में से सही विकल्प का चयन कर सकें और अंतिम निर्णय भी ले सकें। समूह परामर्श उपबोधों को एक-दूसरे के निकट लाने में सहायता प्रदान करता है और उन्हें संवेगात्मक सहयोग प्रदान करता है, ताकि वे अपने-आप को और अन्य व्यक्तियों को समझ सकें। जैसे-जैसे समूह संबंध सुदृढ़ बनते हैं, समान निर्देश के अंतर्गत सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति पर आधारित भावना विकसित होती चली जाती है।

इस क्रम में **डिंकमायर एवं काल्डवेल** के विचार भी उल्लेखनीय हैं जो समूह परामर्श को छात्र के स्वाभाविक विकास की प्रक्रिया को तीव्र व प्रभावशाली बनाने का साधन मानते हैं। उनके अनुसार “यह प्रत्येक छात्र को ऐसी अन्तर्वैयक्तिक प्रक्रिया में सम्मिलित होने का अवसर देता है जिसके द्वारा वह अपने सम-समूह के साथ कार्य करते हुए, अपनी विकासात्मक समस्याओं से अधिक सामर्थ्य से समाधान हेतु तैयार होता है।”

### समूह परामर्श की अवधारणाएँ

समूह परामर्श कुछ विशेष अवधारणाओं पर आधारित है-

1. व्यक्तियों में समूह के सदस्यों में परस्पर विश्वास रखने और उनके विश्वास को प्राप्त करने की आवश्यक प्रतिभा क्षमता होनी चाहिए।
2. सदस्यों का एक-दूसरे के साथ सरोकार होना चाहिए।
3. प्रत्येक व्यक्ति में यह स्वाभाविक क्षमता होनी चाहिए कि वह आत्म परिवर्तन का उत्तरदायित्व ले सके।
4. समूह के सदस्यों में समूह गतिशीलता को समझने व ग्रहण करने की योग्यता होनी चाहिए।
5. सदस्यों में समस्या के स्व-समाधान करने की योग्यता का विकास होना चाहिए।
6. समूह परामर्श में कुछ नैतिक मूल्यों का भी विशेष रूप से धन रखा जाना चाहिए। जैसे-

समूह परामर्श में अधिक गोपनीय व अत्यंत व्यक्तिगत समस्याओं को नहीं रखा जाना चाहिए। समूह में केवल उन्हीं समस्याओं पर विचार विमर्श होना चाहिए जो प्रकृति में कम संवेदनशील व सामाजिक रूप में स्वीकृति योग्य हों।

समूह के सदस्यों में नैतिक जिम्मेवारियां होनी चाहिए जैसे सदस्यों के प्रति ईमानदारी व सम्मानपूर्ण भावना, नियमितता, समयबद्धता, विचारों की स्पष्टता, दूसरों को पृष्ठपोषण देना, गोपनीयता को बनाए रखना आदि।

समूह का कोई सदस्य बिना पूर्व सूचना दिए व समूह छोड़ने का वैध कारण दिए बिना समूह नहीं छोड़ सकता है।

**समूह परामर्श का उद्देश्य**

समूह परामर्श की प्रक्रिया के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं जिनकी प्राप्ति हेतु उपबोधक प्रयासरत रहते हैं। ये उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. व्यक्ति में सामूहिक निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
2. आत्म निर्देशन द्वारा सीखने के अवसर प्रदान करना।
3. व्यक्ति में आवश्यकताओं एवं समस्याओं को पहचानने की शक्ति का विकास करना।
4. व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों एवं उनकी समस्याओं को समझने हेतु तैयार करना।
5. व्यक्ति में सामाजिक कौशलों का विकास करना।
6. संसाधनों के मितव्ययी एवं कुशलता पूर्वक उपयोग करने की क्षमता को प्रोत्साहित करना।
7. व्यक्ति में सहयोग व सद्भाव की भावना का विकास करना।
8. एक समय में एक साथ अधिक-से-अधिक छात्रों को लाभ पहुँचाना।
9. विद्यार्थियों के अनैतिक व्यवहारों, दृष्टियों एवं प्रवृत्तियों में परिष्करण कर उन्हें वांछनीय मान्यताओं एवं मानकों की ओर अग्रसरित करना।
10. व्यक्ति को सामाजिक समायोजन हेतु सहायता प्रदान करना।
11. व्यक्ति को शैक्षिक व व्यावसायिक चयन संबंधी निर्णय लेने में सहायता प्रदान करना।
12. व्यक्ति में आत्मविश्वास, विचारों को अभिव्यक्त करने व श्रवण की कला का विकास करना।
13. वैयक्तिक व अंतर्वैयक्तिक समस्याओं को सामूहिक प्रयास से दूर करने की क्षमता का विकास करना।

**समूह परामर्श के चरण**

समूह परामर्श की क्रिया को क्रमिक चरणों में सम्पन्न करने पर यह अधिक उपयोगी व सफल साबित होती है। ये चरण निम्नलिखित हैं-

- समय व स्थान का निर्धारण
- सदस्यों को आपस में परिचित कराना
- उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का स्पष्टीकरण
- उपबोधक द्वारा वार्तालाप के शीर्षक की प्रस्तावना
- सदस्यों द्वारा अपने-अपने विचारों को रखना
- विचार-विमर्ष करना
- निष्कर्ष
- अगली सभा के संबंध में निर्णय

1. समय व स्थान का निर्धारण-इस चरण में उपबोधक परामर्श हेतु समय व स्थान का निर्धारण करता है और सभी सदस्यों को इसकी सूचना प्रदान करता है।
2. सदस्यों का परिचय- इस चरण में उपबोधक मुख्य रूप से दो कार्य करता है-
  - सभी सदस्यों का स्वागत करना
  - सभी सदस्यों का परिचय करवाना
  - उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का स्पष्टीकरण-
3. इस चरण में उपबोधक परामर्श के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के संबंध में सभी सदस्यों से स्पष्ट रूप से बातचीत करता है।
4. वार्त्तालाप के शीर्षक की प्रस्तावना-इस चरण में उपबोधक वार्त्तालाप के शीर्षक की प्रस्तावना देता है।
5. समूह सहभागिता- इस चरण में सदस्यगण अपने-अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। सभी सदस्यों के सक्रिय सहभागिता हेतु समूह का आकार अपेक्षाकृत छोटा होना चाहिए। लगभग छह से दस सदस्यों को ही किसी एक समूह में शामिल करना चाहिए। बड़े समूहों को नियंत्रित करना कठिन होता है।
6. विचार-विमर्श- इस चरण में समूह के सभी सदस्यों को अपनी-अपनी शंकाओं के निवारण हेतु संबंधित विषय पर वाद-विवाद कराया जाता है तथा यह अवसर प्रदान कराया जाता है कि वे अपने संदेहों को दूर करें।
7. निष्कर्ष-अंत में उपबोधक बातचीत का सारांशीकरण करता है एवं संभावित नतीजे पर पहुँचता है। यह निष्कर्ष अगले बातचीत (आवश्यकता महसूस किए जाने पर) के लिए आधार का काम करता है।
8. अगले सभा के संबंध में निर्णय- इस चरण में समूह परामर्श हेतु अगले मुलाकात के संबंध में निर्णय लिया जाता है तथा इसके लिए समय एवं स्थान का भी चयन कर लिया जाता है।

### समूह परामर्श की अवस्थाएँ

समूह परामर्श प्रक्रिया को विभिन्न अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। ये अवस्थाएँ हैं:

**निर्माण की अवस्था-** इस अवस्था में निम्नलिखित कार्य सम्पन्न किए जाते हैं-

- सूचना, विज्ञापन व पोस्टर आदि का प्रयोग कर व्यक्तियों को समूह के बारे में जागरूक बनाना व सदस्य बनने हेतु तैयार करना।
- उपबोधक द्वारा उपयुक्त समूह का चयन करना
- समूह के सदस्यों को एक दूसरे से परिचित करवाना

- समूह क्रियाशीलता के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का स्पष्टीकरण करना
- क्रियाशीलता हेतु समय सारणी की रूपरेखा तैयार करना व स्थान तय करना

**प्रारंभिक अन्वेषण अवस्था-** इस अवस्था में उपबोधक समूह के सदस्यों को जो अभी तक एक दूसरे से अपरिचित होते हैं, आपस में खुलकर घुलने-मिलने के लिए तैयार करने हेतु अनुकूल वातावरण का निर्माण करता है। उपबोधक अपनी भूमिका की व्याख्या के साथ-साथ समूह के सदस्यों की भूमिका का वर्णन करता है। सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण कर व सदस्यों के विश्वास को जीतकर उन्हें खुलकर अभिव्यक्त करने हेतु प्रेरित करता है। सदस्यों के अपेक्षाओं के बारे में पता लगाता है

**अवस्थान अवस्था-** इस अवस्था को अपेक्षाकृत कठिन माना जाता है। इस अवस्था में उपबोधक समूह के प्रति व उपबोधक के प्रति अपने नकारात्मक सोचों व प्रवृत्तियों का खुलकर प्रदर्शन करते हैं। ऐसी अवस्था में उपबोधक अपने परामर्श कौशल का परिचय देते हुए बुद्धिमतापूर्ण ढंग से सदस्यों को अपने द्वंद्वों का समाधान करने हेतु प्रेरित करता है

**कार्यकारी अवस्था-** इस अवस्था में सदस्य समूह से घनिष्ठ रूप से जुड़ जाते हैं। दूसरे सदस्यों की समस्याओं के प्रति अधिक जागरूक हो जाते हैं। इस अवस्था में समूह उत्पादक रूप धारण कर लेता है और महत्वपूर्ण समस्याओं के गूढ़ अध्ययन के प्रति वचनबद्ध हो जाता है और समूह में होने वाली अंतःपरिवर्तनों पर पूरा ध्यान देता है। इस अवस्था में सदस्य उपबोधक पर कम निर्भर करते हैं और विशिष्ट व्यक्तिगत लक्ष्यों व समूह लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ध्यान केंद्रित करना शुरू कर देते हैं। समूह व सदस्य एक दूसरे से आसानी से तर्क-वितर्क कर सकते हैं और चुनौतियों को बदलाव लाने के ठोस साधनों के रूप में स्वीकार करना पसंद करते हैं।

**समेकन और समाप्ति की अवस्था-** यह अवस्था सारांशीकरण व समूह अनुभवों के समन्वयीकरण का होता है। इस अवस्था में सदस्यगण अपने-अपने अनुभवों को आपस में बाँटते हैं। समूह परामर्श के द्वारा प्राप्त अधिगम व स्वयं में विकसित अंतःदुष्टि के बारे में दूसरों को सूचना प्रदान करते हैं। साथ ही इनका प्रयोग वे अपने व्यावहारिक जीवन में किस प्रकार करेंगे, इनकी जानकारी प्रदान करते हैं। सदस्य समूह परामर्श के दौरान प्राप्त अनुभव व अधिगम का प्रयोग अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य, करने के अवधारणात्मक रूपरेखा को विकसित करने में किस प्रकार करेंगे, इसके लिए उपबोधक उन्हें सहायता प्रदान करता है

**अनुगमन सत्र-** परामर्श सत्र के समाप्त होने के कुछ समय पश्चात् उपबोधक उपबोध्यों का अनुगमन कर यह जाँच करने का प्रयास करता है कि उपबोध्यों के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन हुआ है या नहीं अर्थात् परामर्श प्रदान करने में उसे सफलता प्राप्त हुई है या नहीं।

### 8.3.2 समूह परामर्श के लाभ और सीमाएँ

#### लाभ

- i. यह विविध रूपों से कम खर्चीला है क्योंकि समूह परामर्श के अन्तर्गत एक साथ व्यक्तियों की बड़ी संख्या को उपबोधक द्वारा लाभान्वित किया जा सकता है। इससे समय की भी बचत होती है।
- ii. इससे व्यक्तियों को अपनी अभिवृत्तियों, आदतों तथा निर्णयन को समाजीकृत करने में सहायता मिलती है।
- iii. इसमें दूसरे सदस्यों के साथ अधिगम व अनुभव को बाँटने हेतु स्वस्थ वातावरण प्राप्त होता है जिससे कि छात्रों में आत्मविश्वास बढ़ता है।
- iv. समूह परामर्श में व्यक्ति को हर कार्य एवं व्यवहार को ऐसे सीखने की प्रेरणा मिलती है जैसे वह वास्तविक जीवन में कोई कार्य कर रहा है।
- v. इसमें अच्छे मानवीय संबंध स्थापित करने व सामूहिक निर्णय लेने की भावना का विकास होता है।

### सीमाएँ

- i. समूह परामर्श में अत्यंत व्यक्तिगत और निजी समस्याओं को उजागर नहीं किया जा सकता है।
- ii. समूह परामर्श के दौरान स्थिति को नियंत्रित करना उपबोधक के लिए कठिन कार्य है।
- iii. इसमें सदस्यों के अवधान को प्राप्त करने हेतु सृजनात्मक तकनीकों का उपयोग नहीं किया जाता है।
- iv. समूह परामर्श सभी के लिए उपयुक्त नहीं है। कुछ व्यक्ति समूह में भय महसूस करते हैं व कुछ व्यक्तियों में सहनशक्ति का स्तर अत्यंत निम्न होता है और वे समूह की मांगों के अनुरूप व्यवहार बदलने में सक्षम नहीं होते।

कुछ बिन्दुओं को नजरअंदाज कर दिया जाए तो समूह परामर्श वास्तव में अधिगम अनुभव प्राप्त करने का प्रभावशाली रूप है जो व्यक्तियों को कोई महत्वपूर्ण मानवीय गुणों का विकास करता है। इसमें सदस्य अपने अनुभवों को बाँटते हैं व दूसरों से सीख सकते हैं। व्यक्ति यह जान पाता है कि बहुत सारे लोग हैं जो समान समस्याओं का सामना कर रहे हैं, वह ही अकेला संघर्ष नहीं कर रहा है। समूह परामर्श विशेषकर विद्यालय एवं महाविद्यालय के वातावरण में अधिक सफलतापूर्वक सम्पन्न किया जा सकता है जहाँ छात्र समूह में सीखने में सहजता व आनंद की अनुभूति करते हैं।

### 8.3.3 व्यक्तिगत उपबोधन: अर्थ, उद्देश्य व चरण

समूह परामर्श की अवधारणा को हम भली-भाँति समझ चुके हैं। हम यह भी समझ चुके हैं कि कुछ परिस्थितियों में समूह परामर्श का उपयोग फलदायी नहीं होता है। बहुत सारी परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जहाँ परामर्श व्यक्तिगत रूप में देना अधिक श्रेयस्कर है। व्यक्ति की कुछ समस्याएँ अत्यंत निजी होती हैं। इसके समाधान के लिए उसे व्यक्तिगत परामर्श की आवश्यकता होती है। जैसे- शारीरिक स्वास्थ्य रोग (संबंधी) की समस्याएँ, मानसिक एवं सांवेगिक समस्याएँ (चिंता, अवसाद, क्रोध आदि

संबंधी), घरेलु समस्याएँ (घरेलु हिंसा, पति-पत्नी के बीच मतभेद) वैवाहिक व पूर्व वैवाहिक समस्याएँ, आर्थिक व व्यावसायिक समस्याएँ, शिक्षा संबंधी समस्याएँ (विषय चयन, समायोजन आदि से संबंधी समस्याएँ) आदि।

### व्यक्तिगत परामर्श का अर्थ

व्यक्तिगत परामर्श वह प्रक्रिया है जिसमें उपबोधक उपबोध्य के साथ आमने-सामने बैठकर अधिक सक्रिय, प्रत्यक्ष, वैयक्तिक व फोकस होकर उपबोध्य में स्वयं को पहचानने व स्वयं को समझने की शक्ति व समायोजन करने की क्षमता के विकास में सहायता प्रदान करता है।

यह एक परस्पर साझी प्रक्रिया है जिसमें उपबोधक व इच्छित उपबोध्य के बीच अनूठा व गोपनीय सहायतार्थ संबंध का विकास होता है। व्यक्तिगत परामर्श की प्रक्रिया में परामर्श की शुरुआत उपबोधक सहायता की ईच्छा रखने वाले उपबोध्य की समस्याओं को समझने व उन समस्याओं का उपबोध्य के जीवन पर पड़ने वाले भावी प्रभावों को पहचानने से करता है। तत्पश्चात् उपबोधक व उपबोध्य मिलकर लक्ष्यों को निर्धारित करते हैं तथा लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में कार्य प्रारम्भ करते हैं। इस क्रम में उपबोधक प्रयासरत रहता है कि उपबोध्य में अंतःदृष्टि का विकास हो और वह अपनी समस्या का समाधान स्वयं बंहतर ढंग से कर सके। परामर्श सत्र समाप्त होने के कुछ समय पश्चात् उपबोधक अनुगमन द्वारा परामर्श की सफलता व असफलता की भी जाँच करता है।

### व्यक्तिगत परामर्श के उद्देश्य

- i. व्यक्ति में आत्म समझ का विकास करना।
- ii. व्यक्ति में समायोजन की योग्यता का विकास करना।
- iii. व्यक्तिगत जीवन से संबंधित समस्याओं के सन्दर्भ में निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
- iv. व्यक्ति को अपने अंतःद्वन्दों व नकारात्मक भावनाओं पर विजय प्राप्त करने हेतु तैयार करना।
- v. व्यक्ति में सकारात्मक मनोवृत्ति का विकास करना।
- vi. व्यक्ति में समाजिक, सांवेगिक व आध्यात्मिक लब्धि का विकास करना।

### व्यक्तिगत परामर्श के चरण

1. उपबोधक सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण करता है, जिसमें उपबोध्य अपने विचारों को खुलकर अभिव्यक्त करता है।
2. उपबोधक समस्याजन्य दशाओं को परिभाषित करता है।
3. उपबोध्य को अपने विचारों व भावनाओं की अभिव्यक्ति हेतु स्वतंत्रता प्रदान करता है।
4. उपबोधक उपबोध्य के सकारात्मक व नकारात्मक भावों का वर्गीकरण करता है।
5. उपबोधक तकनीकों की सहायता से आँकड़ों का संग्रहण करता है।

6. आँकड़ों के संग्रहण के पश्चात् उपबोधक संबंधित समस्याओं का अध्ययन एवं मूल्यांकन करता है।
7. अध्ययन एवं मूल्यांकन के उपरान्त वास्तविक समस्या के समाधान की दिशा में व्यक्ति को परामर्श प्रदान करता है।
8. उपबोधक में अन्तःदृष्टि का विकास होता है।
9. उपबोधक अनुगमन का कार्य करता है।

### 8.3.4 व्यक्तिगत परामर्श के लाभ एवं सीमाएँ

#### लाभ-

1. इसमें उपबोधक को सिर्फ एक उपबोधक को सहायता देनी होती है अतः उपबोधक, अधिक सरोकार व अवधान प्राप्त करता है।
2. उपबोधक को सूचना एकत्रित करने में आसानी होता है तथा वह अधिक प्रभावी ढंग से उपबोधक को सहायता प्रदान करता है।
3. निजी व अधिक संवेदनशील समस्याओं का समाधान हो पाता है।
4. उपबोधक के विचारों एवं व्यवहारों को उपबोधक अधिक बहतर ढंग से समझ पाता है।
5. इसमें उपबोधक अपने पसंद के अनुसार अपनी जीवन में परिवर्तन लाने की शक्ति को प्राप्त कर पाता है।
6. इसमें उपबोधक को अनुगमन एक उपबोधक का करना होता है तो यह कार्य भी उपबोधक अधिक आसानी से व प्रभावपूर्ण ढंग से करता है।

#### सीमाएँ-

1. व्यक्तिगत परामर्श में उपबोधक बहुत सारे अधिगम अनुभवों को प्राप्त करने से वंचित रह जाता है जो वह समूह में वह बेहतर ढंग से करता है।
2. इसमें उपबोधक में बहुत सारे सामाजिक कौशलों एवं मानवीय गुणों का विकास नहीं हो पाता है।
3. इसमें संसाधन, समय व शक्ति अधिक व्यय होता है।
4. इसमें उपबोधक अंतर्व्यक्तिगत संबंधों को बेहतर ढंग से नहीं समझ पाते हैं।

### 8.3.5 समूह परामर्श और व्यक्तिगत परामर्श का तुलनात्मक अध्ययन

समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श का तुलनात्मक अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि दोनों प्रकार के परामर्श के मध्य कुछ समानताएँ व कुछ विभिन्नताएँ हैं।

#### समानताएँ

1. दोनों का उद्देश्य समान है अर्थात् उपबोधक में स्वयं को पहचानने व स्वयं को समझने की क्षमता का विकास करना है।
2. दोनों में परामर्श हेतु बहुत सारे समान तकनीकों का प्रयोग होता है।
3. दोनों में गोपनीयता को बनाए रखने की नैतिक जिम्मेवारी होती है।
4. दोनों प्रकार के परामर्श में उपबोधक को सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण करना आवश्यक होता है।
5. दोनों माध्यमों से परामर्श प्राप्त करने वाले व्यक्ति सामान्य हैं जो तनाव, मायूसी, कुंठा, उत्तेजना या अन्य विकासपरक समस्याओं से संघर्ष करने की चेष्टा कर रहे हैं।

### विभिन्नताएँ

1. व्यक्तिगत परामर्श एकैकी तथा मुखाभिमुख संबंध को दर्शाता है जिसमें उपबोधक केवल एक उपबोधक के साथ आमने-सामने बैठकर परामर्श देता है। लेकिन समूह परामर्श में उपबोधक उपबोधकों की बड़ी संख्या को एक साथ परामर्श प्रदान करता है।
2. व्यक्तिगत परामर्श में उपबोधक सिर्फ सहायता की प्राप्ति करता है जबकि समूह परामर्श में उपबोधक दूसरों को भी सहायता भी प्रदान करता है।
3. समूह परामर्श में समूह गतिकी के सिद्धांत के काफी अनुप्रयोग शामिल होते हैं, जबकि व्यक्तिगत परामर्श में उपबोधक और उपबोधक का आपसी संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।
4. व्यक्तिगत परामर्श में अधिक संवेदनशील निजी व गोपनीय समस्याओं को रखा जाता है जबकि समूह में प्रकृति में कम संवेदनशील व सामाजिक रूप से स्वीकृत योग्य समस्याओं को रखा जाता है।

इस प्रकार हम स्पष्ट रूप से समझ चुके हैं कि व्यक्तिगत परामर्श व समूह परामर्श की अपने-अपने लाभ व अपनी-अपनी सीमाएँ हैं। दोनों में कुछ समानताएँ व कुछ विभिन्नताएँ हैं। यह कहना अत्यंत कठिन है कि दोनों में अधिक श्रेष्ठ व उपयोगी कौन है। वास्तव में दोनों के अपने-अपने महत्त्व हैं। कुछ परिस्थितियों में समूह परामर्श अधिक प्रभावशाली होता है वहीं कुछ परिस्थितियों में व्यक्तिगत परामर्श अधिक उपयोगी माना जाता है।

### अभ्यास प्रश्न

1. समूह परामर्श से क्या अभिप्राय है?
2. समूह परामर्श प्रक्रिया के कौन-कौन से चरण हैं?
3. समूह परामर्श के दो लाभ बताइए?
4. व्यक्तिगत परामर्श के क्या-क्या उद्देश्य हैं?
5. व्यक्तिगत परामर्श व समूह परामर्श के मध्य दो अंतर बताइए?
6. समूह परामर्श में कौन-कौन से दो नैतिक मूल्यों का ध्यान रखा जाना चाहिए?

7. समूह परामर्श की सीमाएँ कौन सी हैं।
8. परामर्श केवल एकैकी स्थिति में ही दिया जा सकता है।(सत्य/असत्य)
9. समूह परामर्श में उपबोध की सहायतार्थ व्यावसायिक विशेषज्ञों का समूह होता है।(सत्य/असत्य)
10. समूह परामर्श मदिरापान करने वालों के लिए उपयुक्त हैं। (सत्य/असत्य)
11. समूह परामर्श में समूह के सदस्य एक दूसरे के प्रति सरोकार नहीं रखते हैं।(सत्य/असत्य)
12. व्यक्तिगत परामर्श में एक उपबोध उपबोधक के साथ आमने-सामने बैठकर परामर्श प्राप्त करता है।(सत्य/असत्य)
13. व्यक्तिगत परामर्श में धन व समय की बचत होती है। (सत्य/असत्य)

#### 8.4 एक अच्छे परामर्श की विशेषताएँ

अब आप यह भली-भाँति समझ चुके हैं कि परामर्श चाहे व्यक्तिगत विधि द्वारा प्रदान किया जाए या समूह विधि द्वारा, इसका अंतिम उद्देश्य होता है व्यक्ति के संज्ञानात्मक, भावात्मक व क्रियात्मक तीनों पक्षों का विकास कर उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना। इस उद्देश्य की पूर्ति सफलतापूर्वक तभी हो सकती है जब परामर्श की प्रक्रिया प्रभावशाली हो। परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में दो व्यक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रथम स्वयं उपबोधक जो परामर्श की प्रक्रिया का प्रथम आधार बिन्दु है तथा द्वितीय उपबोधक जो परामर्श की प्रक्रिया का द्वितीय महत्वपूर्ण आधार बिन्दु है। इस इकाई में हम एक अच्छे परामर्श हेतु भूमिका का निर्वाह करने वाले दोनों महत्वपूर्ण आधार बिन्दुओं के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

##### 8.4.1 एक अच्छे परामर्श हेतु उपबोधक की भूमिका

परामर्श की प्रक्रिया का एक बड़ा भार उपबोधक के कंधों पर होता है। उपबोधक कुशल, योग्य, निपुण एवं प्रभावशाली होता है तभी वह पूर्ण रूप से नकारात्मकता से घिर चुके उपबोधक में सकारात्मक मनोवृत्ति का विकास करता है। उपबोधक ही अपने पहचान को लगभग खो चुके उपबोधक को उसमें मौजूद योग्यताओं एवं शक्तियों का बोध करवाता है व उन्हे जीवन के विभिन्न विपरित परिस्थितियों से जुझने के लिए पुनः तैयार करता है।

इस प्रकार देखा जाए तो उपबोधक परामर्श रूपी गाड़ी को सही दिशा में ले जाते हुए सही गंतव्य तक पहुंचाने में कुशल चालक की भूमिका का निर्वाह करता है। यहां हमें यह समझना भी आवश्यक है कि परामर्श रूपी गाड़ी को सही गंतव्य तक पहुंचाने हेतु चालक रूपी उपबोधक में व्यक्तित्व के कुछ विशिष्ट गुणों, योग्यता, उत्तरदायित्वों का बोध व परामर्श भी निपुणता जैसी विशेषताओं का

होना आवश्यक है। आइए अब हम अच्छे उपबोधक के उपयुक्त विशेषताओं के बारे में विस्तृत से जानने का प्रयास करेंगे।

### उपबोधक के व्यक्तित्व की विशेषताएँ

एक अच्छे उपबोधक में व्यक्तित्व संबंधी किन-किन विशेषताओं का होना आवश्यक है, इस संबंध में पूर्व में कई अध्ययन हो चुके हैं। इस क्रम में अमेरिका के नेशनल वोकेशनल गाइडैन्स एसोसिएशन के अनुसार एक अच्छे उपबोधक में आम व्यक्तियों की समस्याओं में रूचि रखना, सहनशक्ति व संवेदनशीलता का होना, संवेगात्मक स्थिरता और वस्तुनिष्ठता का होना जैसी विशेषताएँ होनी चाहिए। इसी प्रकार हरमिन और पालसेन (1950) द्वारा बताई गई विशेषताएँ हैं; उपबोधक को समझना, उससे सहानुभूति भरा और दोस्ताना व्यवहार करना, विनोदशील होना स्थिरता, सहनशक्ति, वस्तुनिष्ठता, सत्यनिष्ठ, चतुराई, निष्पक्षता, सफाई, शांतचित्त रहना, खुले विचारों का होना, दयालु, खुशामिजाज, सामाजिक चातुर्य और मनःसंतुलन। पुनः उपबोधक शिक्षा और पर्यवेक्षण संघ द्वारा बताई गई विशेषताएँ हैं-

प्रत्येक व्यक्ति में विश्वास रखना, व्यक्तिगत मानव मूल्यों के प्रति वचनबद्धता, विश्व की ओर जागरूकता, उदार मानसिकता, स्वयं को समझना, वृत्तिक वचनबद्धता। इसी प्रकार वाइट्स (1957) सिंडरे एवं सिंडरे (1961) और स्टाइलर (1961) के अनुसार अच्छे उपबोधक में व्यक्तित्व संबंधी विशेषताएँ हैं- व्यक्तियों की सहायता करने में रूचि रखना, प्रातक्षिक संवेदनशीलता, वैयक्तिक समंजन, वैयक्तिक सुरक्षा, अकृत्रिमता।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि एक अच्छे उपबोधक में व्यक्तित्व संबंधी निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए-

1. संवेदनशीलता-एक अच्छे उपबोधक को उपबोधक के समस्याओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।
2. अवबोध-एक अच्छे उपबोधक में उपबोधक की भावनाओं को भावात्मक रूप से समझने का गुण होना चाहिए। दूसरे शब्दों में एक अच्छा उपबोधक उपबोधक से भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है।
3. धैर्य- एक अच्छे उपबोधक को धैर्यवान होना चाहिए। उपबोधक से पूरी सूचना प्राप्त करने से लेकर स्वयं द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं को उपबोधक द्वारा स्पष्ट रूप से समझ लेने तक उपबोधक को अत्यंत धैर्यता का परिचय देना चाहिए।
4. रूचि एवं तत्परता-एक अच्छे उपबोधक में व्यक्तियों की सहायता करने में रूचि व तत्परता होनी चाहिए।
5. सुसमायोजित व्यक्तित्व-एक अच्छे उपबोधक को सुसमायोजित व्यक्ति होना चाहिए। उसका संवेगात्मक व्यवहार संतुलित होना चाहिए। अलग-अलग परिस्थितियों के

अनुसार उसे अपने स्वभाव तथा कार्यशैली में परिवर्तन लाने की पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए।

6. स्वीकरण- एक अच्छे उपबोधक को उपबोध्य के कथनों, भावनाओं व व्यवहार को बिना अच्छा या बुरा मूल्यांकित किए स्वीकार करना चाहिए।
7. नैतिक मूल्य- उपबोधक में नैतिकता का भी समावेश होना आवश्यक है जिससे कि वह उपबोध्य द्वारा दिए गए गुप्त सूचनाओं को बिना उसकी सहमति के किसी के समझ प्रकट ना करे।
8. अकृत्रिमता- उपबोधक को उपबोध्य के साथ वास्तविक संबंध स्थापित करने में सक्षम होना चाहिए। उसके व्यवहार में कहीं से भी मिलावट या कृत्रिमता का बोध नहीं होना चाहिए।

### उपबोधक की योग्यता एवं अभ्यास

एक अच्छे उपबोधक को उपयुक्त योग्यताधारी व प्रशिक्षित होना चाहिए। जहां तक योग्यता का प्रश्न है तो उपबोधक को परामर्श में विशिष्टीकरण के साथ मनोविज्ञान से स्नातकोत्तर और परामर्श अभ्यास एवं कौशलों में डिप्लोमाधारी होना चाहिए। एक अच्छे उपबोधक को आत्मविकास, व्यक्तिगत विभिन्नता, अभिप्रेरण, संवेग, प्रत्यक्षीकरण, संज्ञानात्मक प्रक्रिया आदि संप्रत्ययों का गहन ज्ञान होना चाहिए। उपर्युक्त योग्यता के अतिरिक्त उपयुक्त प्रशिक्षण व नियमित अभ्यास एक अच्छे उपबोधक का निर्माण करती है। उपबोधक को कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है जैसे- शैक्षिक परामर्श, व्यावसायिक परामर्श, पूर्व वैवाहिक व वैवाहिक परामर्श, मनोवैज्ञानिक वातावरण में समायोजन, पारिवारिक परामर्श, मादक द्रव्य व्यसनिकों व मद्य व्यसनिकों का परामर्श विशिष्ट बालकों का परामर्श आदि।

### उत्तरदायित्वों एवं कर्तव्यों का बोध

एक अच्छे उपबोधक को अपने उत्तरदायित्वों एवं कर्तव्यों का भली-भाँति ज्ञान होना चाहिए, तभी वह अपने व्यवहार को सही दिशा में निर्देशित करते हुए परामर्श के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेगा। एक अच्छे विद्यालय उपबोधक को साक्षात्कार, परामर्श सत्र का संचालन, रूचि व अभिक्षमता परीक्षण और मूल्यांकन के अन्य विधियों का समय-समय पर उपयोग कर छात्रों को शैक्षिक व वृत्तिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करने हेतु सदैव प्रयासरत रहना चाहिए।

इस दिशा में उपबोधक को कुछ महत्वपूर्ण कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का आश्यक रूप से बोध होना चाहिए जैसे-

### छात्रों के शैक्षिक विकास से संबंधी कर्तव्य

- i. उपबोधक को अधिगम प्रक्रियाएँ और शैक्षिक वातावरण व विकास कार्यक्रमों का बोध होना।

- ii. छात्रों को सीखने व उपलब्धि प्राप्त करने हेतु प्रेरित करना।
- iii. छात्रों को विद्यालय व मित्र समूह से समायोजन में सहायता प्रदान करना।
- iv. विद्यालय के सभी मुख्य पक्षों पर विद्यार्थी के बारे में जानकारी एकत्रित करना।
- v. छात्रों के शैक्षिक प्रगति को बढ़ाने वाले विधियों एवं प्रविधियों का समय-समय पर प्रयोग करना।
- vi. छात्रों को उनकी योग्यताओं, रूझानों तथा रुचियों के अनुसार पाठ्यक्रम के चुनाव में सहायता करना।

### छात्रों के वृत्तिक विकास से संबंधी कर्तव्य

- i. उपबोधक को वृत्तिक विकास सिद्धांतों व वृत्तिक विकास कार्यक्रम का नियोजन, व्यवस्थापन, क्रियान्वयन, प्रशासन, मूल्यांकन का बोध होना।
- ii. छात्रों को व्यवसाय चयन, व्यावसायिक प्रशिक्षण व्यावसायिक अवसरों, व्यावसायिक नियुक्तियों के बारे में सूचना प्रदान करना।
- iii. वृत्तिक परामर्श प्रक्रिया, तकनीकों, संसाधनों व उपकरणों का विधिवत प्रयोग करना।
- iv. वृत्तिक विकास के विभिन्न चरणों एवं अवस्थाओं का बोध होना।

### छात्रों के व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास से संबंधी कर्तव्य

- i. छात्रों में स्वस्थ व सकारात्मक मनोवृत्ति व अन्तर्वैयक्तिक संबंधों को सुदृढ़ बनाने वाले कौशलों का विकास करना।
- ii. छात्रों में प्रभावशाली संप्रेषण हेतु आवश्यक कौशलों के विकास में सहायता करना।
- iii. छात्रों को स्वयं को पहचानने, स्वयं निर्णय लेने व समस्या का स्वयं समाधान करने की क्षमता का विकास करना।
- iv. छात्रों को व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन में सहायता करना।
- v. छात्रों में सांवेगिक, सामाजिक व आध्यात्मिक लब्धि के विकास हेतु सहायता प्रदान करना।

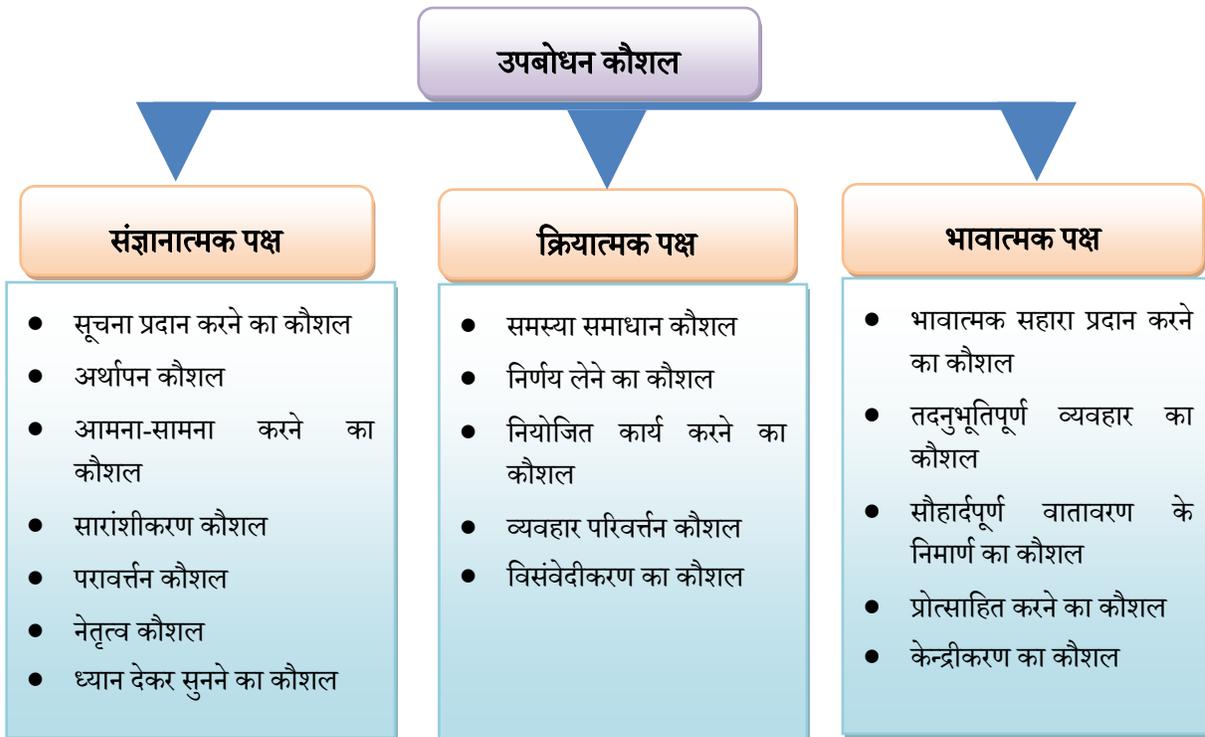
उपर्युक्त दायित्वों के अलावा एक अच्छे उपबोधक को परामर्श के क्षेत्र में नित्य हो रहे नए-नए शोधों से अवगत रहना चाहिए तथा समय-समय पर उनका अनुप्रयोग अपने कार्य करने के तरीके में सुधार करने हेतु करना चाहिए।

परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने हेतु उपबोधक में कुछ महत्वपूर्ण कौशलों का होना आवश्यक है। इन आवश्यक कौशलों का वर्गीकरण तीन प्रमुख श्रेणियों में किया गया है-

**संज्ञानात्मक पक्ष से संबंधी कौशल-** इसके अन्तर्गत ध्यान देकर सुनने का कौशल, नेतृत्व कौशल, परावर्तन कौशल, सारांशीकरण, कौशल आमना-सामना करने का कौशल, अर्थापन कौशल, सूचना प्रदान करने का कौशल आदि सम्मिलित है।

**भावात्मक पक्ष से संबंधी कौशल-** इसके अन्तर्गत भावात्मक सहारा प्रदान करने का कौशल, तदनुभूति, पूर्ण व्यवहार का कौशल, सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण का कौशल, मित्रवत व्यवहार का कौशल, प्रोत्साहित करने का कौशल, केन्द्रीकरण का कौशल आदि कौशल सम्मिलित हैं।

**क्रियात्मक पक्ष से संबंधी कौशल-** इसके अन्तर्गत समस्या समाधान कौशल, निर्णय लेने का कौशल नियोजित कार्य करने का कौशल व्यवहार परिवर्तन कौशल, विसंवेदनीकरण का कौशल आदि सम्मिलित है।



उपर्युक्त कौशलों में से कुछ महत्वपूर्ण कौशलों का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

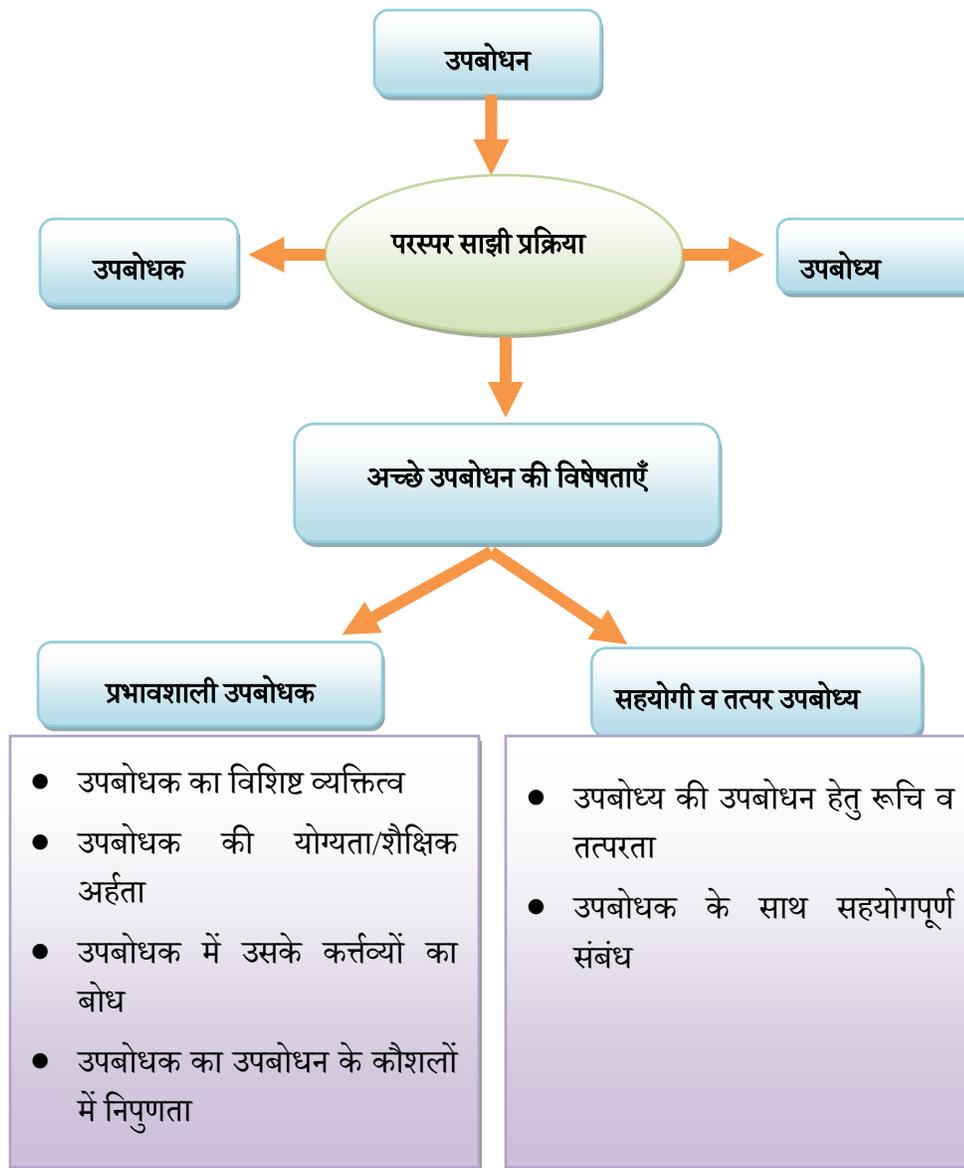
1. **सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण का कौशल-** इससे तात्पर्य ऐसे वातावरण से है जो परामर्श प्रक्रिया के प्रारंभिक चरण के दौरान उपबोधक द्वारा बनाया जाता है। जिसके माध्यम से उपबोध्य सहज महसूस करता है और उपबोधक से मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित होता है।
2. **अवधान/सर्तकता कौशल-**सौहार्द स्थापित करने के लिए उपबोधक को उपबोध्य की आवश्यकताओं, मिजाज, भावनाओं को समझने के लिए ध्यान को पूरी तरह से उपबोध्य के क्रियाओं पर केन्द्रित किए रहना होता है।
3. **श्रवण कौशल-**उपबोधक को उपबोध्य द्वारा कहीं जा रही बातों को अत्यंत सतर्कतापूर्वक, सक्रिय होकर व रूचि व धैर्य के साथ सुनना चाहिए।

4. **अभिव्यक्ति कौशल**-उपबोधक में अपने विचारों को प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करने का कौशल होना चाहिए जिससे कि उपबोध्य उसकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनें। उपबोधक को बोलते वक्त शरीर संचालन, आवाज में उतार-चढ़ाव, भाव मुद्रा व मुखमुद्रा आदि का प्रभावशाली उपयोग करना आना चाहिए।
5. **तदनुभूति**-तदनुभूति से तात्पर्य होता है किसी की अनुभूति प्राप्त करना। डायमंड (1949) तदनुभूति को व्यक्त करते हैं कि दूसरे की सोच, भावना और कार्यण को अपनी कल्पना में उतारना और इसी प्रकार के संसार की संरचना करना जैसा कि वह करता है। यह परामर्श प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण कौशल है। एक अच्छे उपबोधक में यह कौशल होना चाहिए कि वह उपबोध्य की भावनाओं को स्वयं महसूस करने लगे।
6. **वस्तुनिष्ठ निरीक्षण का कौशल**-उपबोधक में वस्तुनिष्ठता से निरीक्षण करने का कौशल होना चाहिए। परामर्श के क्रम में उपबोधक को पक्षपाती नहीं होना चाहिए।
7. **आमना-सामना या सम्मुखीकरण का कौशल** -एक अच्छे उपबोधक में यह कौशल होना चाहिए कि वह उपबोध्य को जीवन के सच से सामना करने हेतु तैयार कर सके।
8. **परामर्श के तकनीकों एवं उपकरणों के प्रयोग का कौशल**-एक अच्छे उपबोधक में परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने हेतु आवश्यकतानुसार उपयुक्त उपकरण के प्रयोग करने का कौशल होना चाहिए। उपबोधक को वस्तुनिष्ठ, विषयनिष्ठ प्रक्षेपी तीनों प्रकार के उपकरणों के प्रयोग में कुशल होना चाहिए।

#### 8.4.2 एक अच्छे परामर्श हेतु उपबोध्य की भूमिका

परामर्श परस्पर साझी प्रक्रिया है तथा यह प्रभावशाली तभी होती है जब उपबोधक एवं उपबोध्य के बीच पारस्परिक समझ हो। तभी वे आपस में सूचनाओं को बाँटते हैं व विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि चूंकि परामर्श प्रक्रिया से संबंधित समस्त व्यवस्था उपबोध्य के चारों ओर ही केन्द्रित होती है। अतः उपबोधक की समस्त योग्यताएँ एवं कौशल, अध्ययन एवं प्रशिक्षण केवल उसी दशा में सार्थक सिद्ध होते हैं जहाँ वह उपबोध्य को इस योग्य बना सके कि वह अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं कर सके। इसी प्रकार उपबोध्य से संबंधित सूचनाओं के संकलन से संबंधित समस्त विधियाँ भी उपबोध्य के विभिन्न पक्षों से ही संबंधित होती हैं। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि उपबोध्य की आवश्यकताओं मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक स्थितियों, सामाजिक समायोजन पर आधारित संबंधों आदि के बारे में जितनी ही अधिक जानकारी प्राप्त होगी उतनी ही अधिक सफलता परामर्श की प्रक्रिया को सम्पन्न करने में प्राप्त हो सकेगी। इस क्रम में रूथ-स्ट्रेग के विचार के अनुसार उपबोध्य की अवधारणा, कार्य हेतु उसकी तत्परता, उसका अन्तर्द्वन्द, दबी ईच्छाएँ, अनिश्चित अपराध भावना, उसके आचरण के अन्तः स्रोत इत्यादि बातों की समझ सफल परामर्श का आधार है। उपबोध्य की शारीरिक स्थिति एवं उपबोधक की भूमिका के प्रति उसका प्रत्यय भी महत्वपूर्ण घटक है।

इस प्रकार सारांश के रूप में, यह कहा जा सकता है कि एक अच्छे परामर्श की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं- प्रथम प्रभावशाली उपबोधक व द्वितीय सहयोगी व तत्पर उपबोध्य। जब उपबोधक एवं उपबोध्य परस्पर संबंधों की समुचित पृष्ठभूमि बनाने में सफल हो जाते हैं और उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के अनुरूप परामर्श का उपयोग करते हैं। तभी परामर्श की प्रक्रिया सार्थक व सफल मानी जा सकती है।



## अभ्यास प्रश्न

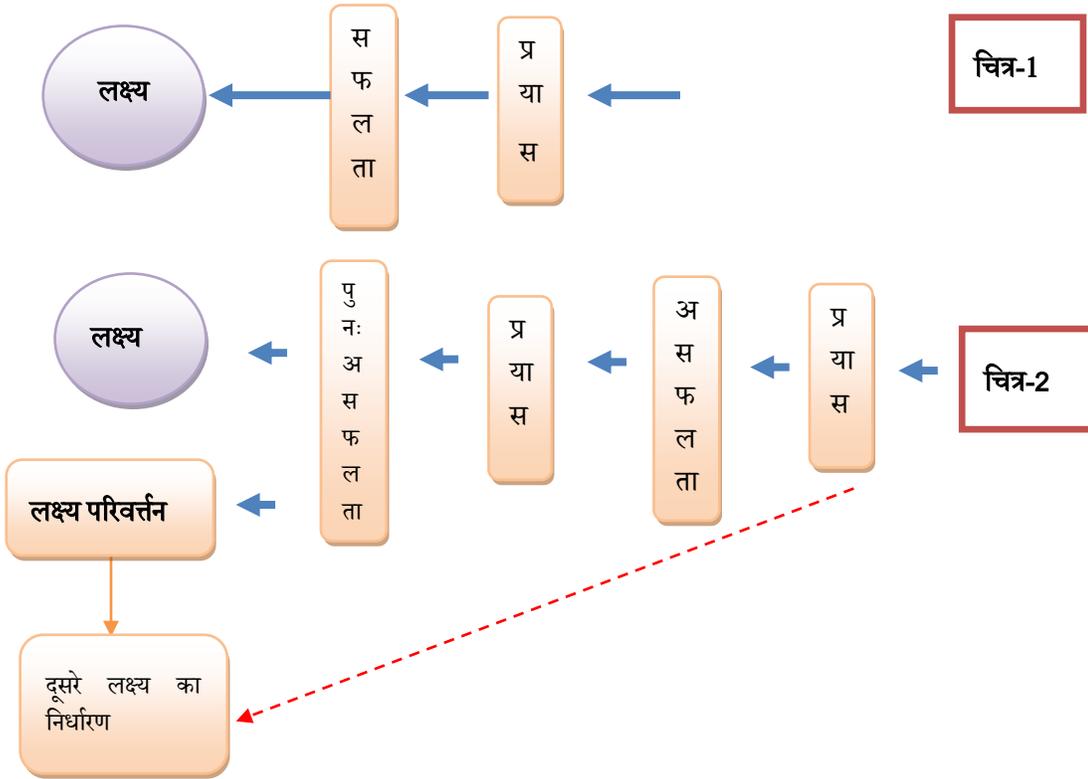
14. अच्छे उपबोधक को किन्ही पाँच व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं का उल्लेख किजिए।
15. अच्छे परामर्श के किन्ही पाँच कौशलों का उल्लेख किजिए।
16. सौहार्दपूर्ण वातावरण से आप क्या समझते हैं?
17. तदनुभूति से क्या अभिप्राय है?
18. अच्छे परामर्श में उपबोध्य किस प्रकार मदद देते हैं?
- 19.

### 8.5 समायोजन के लिए परामर्श

अब तक आप भली-भाँति जान चुके हैं कि निर्देशन एवं परामर्श के क्षेत्र में 'समायोजन' शब्द अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। वास्तव में परामर्श व्यक्ति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर ढंग से समायोजन करने में सहायता करने की प्रक्रिया है। हम समायोजन के अर्थ, समायोजन की आवश्यकता व व्यक्ति को समायोजित बनाने में परामर्श की भूमिका को विस्तार से समझने का प्रयास करेंगे।

#### 8.5.1 समायोजन: अर्थ

हमारा जीवन समस्याओं का गढ़ है। पग-पग पर हमें समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जो व्यक्ति जितने अच्छे ढंग से समस्या का सामना करते हुए आगे बढ़ता जाता है वह उतने ही अच्छे रूप से सफलता से प्रगति करते हुए आगे बढ़ता चला जाता है मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त जीवन में हम बहुत कुछ चाहते हैं और यही चाह हमें पल-पल संघर्ष करने को प्रेरित करती है। परन्तु बहुत बार ऐसा भी होता है कि जो हम चाहते हैं जिसके लिए हम दिन-रात परिश्रम करते हैं उस उद्देश्य की प्राप्ति हम नहीं कर पाते हैं। उदाहरण के लिए एक बालक मेडिकल कॉलेज में प्रवेश पाने के लिए तरह-तरह की परीक्षाएं देता है। परन्तु अथक परिश्रम के बाद भी उसे सफलता नहीं मिलती। इस हालत में वह अपने लक्ष्य को ही परिवर्तित कर देता है तथा बी० एससी० में प्रवेश लेकर आगे एम० एससी० तथा प्राध्यापक बनने की बात को पूरा करने के लिए जुट जाता है। एक क्षेत्र में असफलता के बाद दूसरे किसी क्षेत्र का चुनाव करना, अपने लक्ष्य की ऊँचाई को अपनी योग्यता एवं परिस्थितियों के अनुसार घटा देना, इस प्रकार के संशाधित एवं परिवर्तित व्यवहार को ही समायोजन की संज्ञा दी जाती है। नीचे के चित्र द्वारा आप इसे भली भाँति समझ सकते हैं-



चित्र- 2 में यह दर्शाया गया है कि व्यक्ति द्वारा बार-बार प्रयास किए जाने पर भी जब वह पूर्व निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता है तब वह लक्ष्य को परिवर्तित कर तथा दूसरे लक्ष्य का निर्धारण कर जीवन क्षेत्र में आगे बढ़ने का प्रयास प्रारम्भ कर देता है। इस प्रकार परिस्थिति के अनुसार अपने व्यवहार को निर्देशित करने की कला को समायोजन कहते हैं।

समायोजन के अर्थ को और स्पष्ट रूप से समझने के लिए हम विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई निम्न परिभाषाओं का अध्ययन कर सकते हैं-

**एल. एस. शेफर-** “समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई जीवधारी अपनी आवश्यकताओं तथा इन आवश्यकताओं की संतुष्टि से संबंधित परिस्थितियों में संतुलन बनाए रखता है।”

**गेट्स, जेरसील्ड एवं अन्य-**“समायोजन एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने व्यवहार में इस प्रकार से परिवर्तन करता है कि उसे स्वयं तथा अपने वातावरण के बीच और अधिक मधुर संबंध स्थापित करने में मदद मिल सके।”

**वोनहेलर-**“ हम समायोजन शब्द का अपने आपको मनोवैज्ञानिक रूप से जीवित रखने के लिए वैसे ही प्रयोग में ला सकते हैं जैसे कि जीवशास्त्री अनुकूलन शब्द का प्रयोग किसी जीव को शारीरिक या भौतिक दृष्टि से जीवित रखने के लिए करते हैं।”

उपर्युक्त परिभाषाएँ समायोजन के अर्थ को स्पष्ट कर हमें बताती हैं कि-

- i. समायोजन आवश्यकता एवं संतुष्टि के मध्य संतुलन बनाए रखने की प्रक्रिया है।
- ii. समायोजन परिस्थिति के अनुसार अपने व्यवहार को निर्देशित करने की प्रक्रिया है।
- iii. व्यक्ति में जितनी अधिक समायोजन क्षमता होती है वह मनोवैज्ञानिक रूप से उतना स्वस्थ एवं सबल पाया जाता है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि जीवन में संतुष्ट एवं सुखी रहने की कुंजी समायोजन की प्रक्रिया के हाथों में है और समायोजन की यह प्रक्रिया बालक और उसकी परिस्थितियों के बीच झूलती रहती है। कभी बालक की योग्यता, क्षमताएँ तथा उसे मिलने वाला परामर्श परिस्थितियों पर हावी हो जाता है तो कभी परिस्थितियों के आगे घुटने भी टेकने पड़ते हैं। समायोजन ऐसी ही प्रक्रिया और क्षमता का भाव है जो बालक को उसकी अपनी योग्यता और क्षमताओं के संदर्भ में उसकी अपनी परिस्थितियों के अनुसार उसे आगे प्रगति के मार्ग पर ले जाने में सहायता करती है। बालक के जीवन में यह प्रक्रिया कभी रूकने का नाम नहीं लेती है क्योंकि जीवन कभी रूकता नहीं है और परिवर्तनों के साथ-साथ ही समायोजन की प्रक्रिया को भी बदलते रहना पड़ता है। इसी बदलाव और अनुकूलन क्षमता में बालक का सर्वांगीण विकास उसकी प्रगति, संतुष्टि तथा खुशी का दारोमदार होता है।

### 8.5.2 समायोजन की आवश्यकता

व्यक्ति को जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में समायोजन की आवश्यकता होती है। मुख्य रूप से निम्नलिखित क्षेत्रों में समायोजन आवश्यक है-

1. व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि- मनुष्य के व्यक्तिगत आवश्यकताओं में शारीरिक आवश्यकताएं (भूख, प्यास, नींद, विश्राम आदि), भौतिक आवश्यकताएं (सुख, सुविधा पहुंचाने वाले वस्तु), सामाजिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं (स्नेह व प्यार पाने और देने, आदर व सम्मान प्राप्त करने आदि संबंधी) आती हैं। इन सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति के मध्य संतुलन बनाकर रखे। इसके लिए उसे समायोजित होना आवश्यक है।
2. आकर्षक व्यक्तित्व के विकास हेतु- एक सुसमायोजित व्यक्ति ही आकर्षक व प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी होता है। आकर्षक व्यक्तित्व के विकास हेतु व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक व सांवेगिक विकास होना आवश्यक है। यहां उल्लेखनीय है कि सुसमायोजित व्यक्ति ही उचित समय पर उचित रूप से उचित संवेगों की अभिव्यक्ति करण है। इसी प्रकार व्यक्ति में जितनी अधिक समायोजन क्षमता होती है व मनोवैज्ञानिक रूप से उतना ही स्वस्थ एवं सबल होता है।
3. शैक्षिक विकास हेतु- छात्रों के शैक्षिक विकास हेतु उनका विद्यालय, शिक्षकों, सहपाठियों व पाठ्यक्रम के साथ उचित समायोजन बनाना आवश्यक है। जो छात्र ऐसा कर लेते हैं वे शैक्षिक प्रगति की राह में आगे बढ़ते चले जाते हैं।

4. समाजिक जीवन को समृद्ध बनाने हेतु-सामाजिक जीवन को समृद्ध बनाने हेतु व्यक्ति का दूसरे व्यक्तियों के साथ संबंध अच्छे व मधुर होने चाहिए। फिर चाहे परिवार के विभिन्न सदस्यों के साथ संबंध की बात हो या मित्र और संबंधियों के साथ संबंध की बात हो या पड़ोसियों तथा समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ संबंध की बात हो, प्रत्येक संबंधों में व्यक्ति को मधुरता लानी चाहिए। सुखी व मधुर संबंध हेतु समायोजन आवश्यक है। दूसरे शब्दों में सुखी पारिवारिक व सामाजिक जीवन का मूलमंत्र समायोजन है। क्योंकि कभी-कभी कुछ लोग हमारी तरह के नहीं होते हैं। हमसे विपरित होते हैं। परन्तु हमें अपने अपने दैनिक जीवन में उनसे भी मेल मिलाप करना होता है। कहीं-न-कहीं उनसे मदद की आवश्यकता पड़ सकती है। अतः ऐसे व्यक्तियों के साथ भी हमें अच्छे संबंध बनाए रखने की आवश्यकता होती है। यह कार्य हम तभी कर पाते हैं जब हमें समायोजन की कला आती हो। इस प्रकार व्यक्ति भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न अवसरों पर समायोजन कर सुखी पारिवारिक व सामाजिक जीवन बिता सकता है।
5. व्यावसायिक जीवन को समृद्ध बनाने हेतु-व्यक्ति अपने प्रयत्नों तथा मिलने वाले अवसरों के फलस्वरूप तरह-तरह के व्यवसाय अपनाते हैं। एक व्यक्ति अपने काम में बहुत अच्छा हो सकता है। लेकिन यदि वह अपने कार्य क्षेत्र के सामाजिक आबोहवा के साथ समायोजित नहीं है तो वह कभी अच्छी उपलब्धि प्राप्त नहीं रह सकता है। अतः व्यावसायिक प्रगति हेतु आवश्यक है कि व्यक्ति का कार्य करने की परिस्थितियों, समय, वेतन आदि से संतुष्टि तथा सहकर्मियों के साथ मधुर संबंध हो। इसके लिए व्यक्ति को अपने व्यावसायिक परिस्थितियों के साथ समायोजित होना आवश्यक है।

### 8.5.3 समायोजन के लिए परामर्श की भूमिका

एक व्यक्ति उस समय तक या उतनी ही सीमा तक पूरी तरह समायोजित रहता है जब तक कि उसकी मूलभूत आवश्यकताओं की उसकी अपनी दृष्टि से पूर्ति होती रहे अथवा उसे उनके पूरे होने की आशा बनी रहे। जैसे ही उसे यह आभास होने लगता है कि उसकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा आ रही है वह निराश होकर कुसमायोजन का शिकार बन जाता है। एक कुसमायोजित व्यक्ति विभिन्न प्रकार की व्यवहार तथा समायोजन संबंधी समस्याओं से ग्रस्त होकर अपने तथा दूसरों के विकास या प्रगति में बाधा बनने लगता है।

जीवन संघर्ष और समस्याओं का दूसरा नाम है। लेकिन कभी-कभी व्यक्ति इसे समझ नहीं पाते हैं और घबरा जाते हैं। अतः आवश्यकता होती है कि व्यक्ति में परिस्थितियों का सामना करने के लिए आवश्यक सहायक समझ विकसित की जानी चाहिए ताकि वे समस्याओं का सामना कर उनका उचित समाधान ढूँढते हुए वे ठीक प्रकार से समायोजित रह सकें। कोशिश यही होनी चाहिए कि व्यक्ति अपनी समस्याओं से अपने आप ही निपटे। व्यक्ति में ऐसी कार्यकुशलता विकसित करने के लिए परामर्श आवश्यक होता है। अतः व्यक्ति में समायोजन की क्षमता के विकास हेतु आवश्यक

सहायता प्रदान करने के लिए शैक्षिक, व्यक्तिगत तथा व्यावसायिक परामर्श की व्यवस्था की जानी चाहिए।

### व्यक्तिगत जीवन में समायोजन हेतु परामर्श की भूमिका

1. शारीरिक कमी, अस्वस्थता या दुर्बलता के कारण हीनता व निराशा से ग्रस्त होकर कुसमायोजन की ओर बढ़ते जा रहे व्यक्ति में उपबोधक सकारात्मक ऊर्जा का संचार करके उसे समायोजित बनाने में सहायता प्रदान करता है।
2. चिंता, क्लेश, निराशा, कुण्ठा जैसे नकारात्मक सोचों से ग्रस्त व्यक्तियों में सकारात्मक सोचों का विकास करता है।
3. व्यक्ति के वैवाहिक संबंधों, अन्य पारिवारिक संबंधों व सामाजिक संबंधों को सुदृढ़ व मधुर बनाने में उपबोधक सहायता प्रदान करता है।
4. संवेगात्मक रूप से समायोजित बनाने में उपबोधक व्यक्ति की सहायता करता है।
5. व्यक्ति को उसकी अच्छाइयों तथा कमियों के बारे में जानकारी देकर उसके योग्यता के स्तर से परिचित करवाता है।

### शैक्षिक जीवन में समायोजन हेतु परामर्श की भूमिका

1. उपबोधक छात्रों को उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरूचिों, कमियों के बारे में अधिक जानकारी प्रदान करके उन्हें स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करता है।
2. छात्रों को उनकी आवश्यकताओं व योग्यताओं के अनुसार सर्वाधिक उपयुक्त पाठ्यक्रमों का चयन करने में सहायता प्रदान करता है।
3. छात्रों में वांछनीय अभिवृत्तियों व व्यवहार-विन्यासों को विकसित करने में सहायता प्रदान करता है।
4. अन्य लोगों से बेहतर संबंध बनाने में व उस परिवेश जिसमें वे रहते हैं, को समझने में सहायता करता है।
5. प्रतिभाशाली, मंदबुद्धि तथा विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की पहचान करने व उनमें उचित समायोजन की क्षमता का विकास करने में सहायता करता है।

### व्यावसायिक जीवन में समायोजन हेतु परामर्श की भूमिका

1. उपबोधक व्यक्ति को उनके योग्यता रूचि, क्षमता के अनुसार उपयुक्त रोजगार के चयन में सहायता करता है।
2. व्यावसायिक साथियों, अधिकारियों के साथ सुदृढ़ व मधुर संबंधों के निर्माण में व्यक्ति की सहायता करता है।
3. व्यक्ति को उसकी शक्तियों व कमजोरियों का ज्ञान प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है।

4. व्यक्ति को दिन-ब-दिन बदलती परिस्थितियों व नवीन परिवर्तनों से परिचित करवाने व उसके अनुसार स्वयं को परिवर्तित करने में सहायता प्रदान करता है।

सारांश के रूप में हम कह सकते हैं कि परामर्श व्यक्ति में उत्तम समायोजन की क्षमता को विकसित करने हेतु सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया है। उपबोधक व्यक्ति को व्यक्तिगत कमियों का उपचार करने, जीवन की यथार्थता को पहचानने व उनके अनुकूल व्यवहार को निर्देशित करने हेतु सहायता प्रदान करता है।

### अभ्यास प्रश्न

20. परिस्थिति के अनुसार अपने व्यवहार को परिवर्तित एवं संशोधित कर लेने की प्रक्रिया को ..... कहते हैं।
21. आवश्यकताओं के पूर्ण ना होने पर व्यक्ति निराश होकर ..... का शिकार हो जाता है।
22. व्यक्ति को जीवन में समायोजन करना क्यों आवश्यक है?
23. व्यक्ति को व्यावसायिक रूप से समायोजित बनाने में उपबोधक कैसे सहायता प्रदान करता है।
24. शैक्षिक क्षेत्र में समायोजन स्थापित करने में उपबोधक छात्रों को किस प्रकार सहायता प्रदान करता है?

### 8.6 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श की दो महत्वपूर्ण विधियाँ हैं। परामर्श को सदैव से 'उपबोधक केन्द्रित' प्रक्रिया माना जाता रहा है। व्यक्तिगत परामर्श इसी अवधारणा पर आधारित है। इसमें उपबोधक उपबोधक के सामने बैठकर अधिक सक्रिय होकर अपने व्यक्तिगत जीवन से संबंधित निजी समस्याओं के समाधान हेतु सहायता प्राप्त करता है। समूह परामर्श एक नवीन अवधारणा है, जिसमें व्यक्तियों का समूह उपबोधक के साथ मिलकर अंतर्व्यक्तिक समस्याओं को दूर करने की कला सीखते हैं। व्यक्तिगत परामर्श व समूह परामर्श के अपने-अपने लाभ व सीमाएँ हैं। दोनों में कुछ समानताएँ व कुछ विभिन्नताएँ हैं। वास्तव में कुछ परिस्थितियों में समूह परामर्श अधिक प्रभावशाली होता है, वहीं कुछ परिस्थितियों में व्यक्तिगत परामर्श अधिक उपयोगी माना जाता है। उपबोधक के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपबोधक का अच्छा व प्रभावशाली होना आवश्यक है। परामर्श की प्रभाविता, बड़ी सीमा तक उपबोधक के व्यक्तित्व और अन्य विशेषताओं तथा उपबोधक के तत्परता व सहयोगपूर्ण व्यवहार संबंधी विशेषताओं पर आधारित रहती है। व्यक्ति द्वारा परिस्थितियों के अनुसार अपने व्यवहार को परिवर्तित व संशोधित करने की प्रक्रिया को समायोजन कहते हैं। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु समायोजन एक अनिवार्य प्रक्रिया है। परामर्श व्यक्ति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर ढंग से

समायोजन करने में सहायता प्रदान करती है। इस इकाई के अध्ययन से आप परिस्थितिनुसार समूह परामर्श व व्यक्तिगत परामर्श के प्रयोग के महत्त्व को अभिव्यक्त कर सकेंगे। आप प्रभावशाली परामर्श हेतु उपबोधक व उपबोध्य की भूमिका को व्यक्त कर सकेंगे तथा आप समायोजन की आवश्यकता को समझते हुए इस दिशा में परामर्श की भूमिका का बखान कर सकेंगे।

### 8.7 शब्दावली

- 8 **समूह परामर्श** : परामर्श की वह विधि जिसमें व्यक्तियों का एक छोटा समूह उपबोधक के साथ मिलकर समस्या का समाधान करना सीखता है, समूह परामर्श कहते हैं।
- 9 **समूह गतिकी**: समूह के सदस्यों के द्वारा परस्पर एक दूसरे से अन्तःक्रिया के फलस्वरूप उनके व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को समूह गतिकी कहते हैं।
- 10 **व्यक्तिगत उबोधन**: परामर्श की वह विधि जिसमें उपबोधक केवल एक उपबोध्य को परामर्श प्रदान करता है, व्यक्तिगत परामर्श कहते हैं।
- 11 **परामर्श कौशल**: परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली व सक्रिय बनाने के लिए उपबोधक द्वारा परामर्श प्रदान करने के क्रम में प्रयोग किए जाने वाले क्रियाओं, प्रक्रियाओं एवं व्यवहारों के समूह को परामर्श कौशल कहते हैं।
- 12 **संज्ञानात्मक कौशल**: परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए उपबोधक द्वारा प्रयोग किए जाने वाले मस्तिष्क की क्रियाओं से संबंधित कौशल को संज्ञानात्मक कौशल कहते हैं।
- 13 **भावात्मक कौशल**: परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए उपबोधक द्वारा प्रयोग किए जाने वाले उसके भावनाओं से संबंधित क्रियाओं एवं व्यवहारों के समूह को भावात्मक कौशल कहते हैं।
- 14 **क्रियात्मक कौशल**: परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए उपबोधक द्वारा प्रयोग किए जाने वाले कार्यों एवं कलाओं को क्रियात्मक कौशल कहते हैं।
- 15 **परावर्तित चिन्तन**: पूर्व अनुभवों का पुनर्गठन करके किसी समस्या के समाधान करने हेतु नवीन विधि की खोज के लिए किए गए चिन्तन को परावर्तित चिन्तन कहते हैं।
- 16 **सारांशीकरण**: मुख्य मुद्दों को संक्षेप में लाने की प्रक्रिया को सारांशीकरण कहते हैं।
- 17 **तदनुभूति**: किसी व्यक्ति के सांवेगिक भावों को दूसरे व्यक्ति द्वारा दिल से महसूस करने लगने की प्रक्रिया को तदनुभूति कहते हैं।
- 18 **समस्या समाधान**: लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक प्रतीत होनेवाली कठिनाईयों पर विजय प्राप्त करने की प्रक्रिया को समस्या समाधान कहते हैं।
- 19 **समायोजन**: व्यक्ति द्वारा अपनी योग्यता एवं परिस्थितियों के अनुसार अपने व्यवहार को संशोधित परिवर्तित करने की प्रक्रिया को समायोजन कहते हैं।

### 8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. समूह परामर्श वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत व्यक्तियों का एक छोटा समूह उपबोधक के साथ मिलकर वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक समस्याओं को दूर करने की कला सीखते हैं।
2. समूह परामर्श प्रक्रिया के चरण हैं-
  - i. समय व स्थान का निर्धारण
  - ii. सदस्यों को आपस में परिचित कराना
  - iii. उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का स्पष्टीकरण
  - iv. उपबोधक द्वारा वार्तालाप के शीर्षक की प्रस्तावना
  - v. सदस्यों द्वारा अपने-अपने विचारों को रखना।
  - vi. विचार-विमर्श करना
  - vii. निष्कर्ष
  - viii. अगले सभा के संबंध में निर्णय लेना
3. समूह परामर्श के दो लाभ-
  - i. यह मिव्ययी है
  - ii. इससे व्यक्तियों को अपनी अभवृत्तियों, आदतों तथा निर्णयन को समानीकृत करने में सहायता मिलती है।
4. व्यक्तिगत परामर्श के उद्देश्य हैं-
  - i. व्यक्ति में आत्म समझ का विकास करना।
  - ii. व्यक्ति में समायोजन की योग्यता का विकास करना।
  - iii. व्यक्तिगत जीवन से संबंधित समस्याओं के संदर्भ में निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
  - iv. व्यक्ति को अपने अंतःद्वन्दों व नकारात्मक भावनाओं पर विजय प्राप्त करने हेतु तैयार करना।
  - v. व्यक्ति में सकारात्मक मनोवृत्ति का विकास करना।
  - vi. व्यक्ति में सामाजिक, सांवेगिक व आध्यात्मिक लब्धि का विकास करना।
5. व्यक्तिगत परामर्श व समूह परामर्श के मध्य दो अंतर-
  - i. व्यक्तिगत परामर्श में उपबोधक केवल एक उपबोधक के साथ आमने-सामने बैठकर परामर्श देता है। लेकिन समूह परामर्श में उपबोधक उपबोध्यों के छोटे समूह (6-10 उपबोध्यों) को एक साथ परामर्श प्रदान करता है।
  - ii. व्यक्तिगत परामर्श में उपबोधक केवल सहायता की प्राप्ति करता है जबकि समूह परामर्श में उपबोधक दूसरों को सहायता भी प्रदान करता है।
6. समूह परामर्श में निम्न दो नैतिक मूल्यों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

- i. समूह के सदस्यों में नैतिक जिम्मेदारियां होनी चाहिए जैसे सदस्यों के प्रति ईमानदारी, बोधनीयता को बनाए रखना, समय बद्धता आदि।
  - ii. समूह का कोई सदस्य बिना पूर्व सूचना दिए समूह को नहीं छोड़ सकता है।
7. समूह परामर्श की सीमाएँ हैं-
- i. समूह परामर्श में व्यक्तिगत और निजी समस्याओं को उजागर नहीं किया जा सकता है।
  - ii. समूह परामर्श के दौरान स्थिति को नियंत्रित करना उपबोधक के लिए कठिन कार्य है।
  - iii. इसमें सदस्यों के अवधान को प्राप्त करने हेतु सृजनात्मक तकनीकों का उपयोग नहीं किया जाता है।
8. गलत
9. गलत
10. सही
11. गलत
12. सही
13. गलत
14. अच्छे उपबोधक की पाँच व्यक्तित्व संबंधी विशेषताएँ
- i. संवेदनशीलता
  - ii. अवबोध
  - iii. धैर्य
  - iv. रूचि व तत्परता
  - v. सुसमायोजित व्यक्तित्व
15. अच्छे परामर्श के पाँच कौशल
- i. सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण का कौशल
  - ii. तदनुभूति
  - iii. अभिव्यक्ति कौशल
  - iv. श्रवण कौशल
  - v. वस्तुनिष्ठ निरीक्षण का कौशल
16. इससे तात्पर्य ऐसे वातावरण से है जो परामर्श प्रक्रिया के प्रारंभिक चरण के दौरान उपबोधक द्वारा बनाया जाता है जिसके माध्यम से उपबोध्य सहज समझ सकता है और उपबोधक से मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित होता है।
17. तदनुभूति से तात्पर्य होता है किसी की अनुभूति प्राप्त करना। डायमंड (1949) तदनुभूति को व्यक्त करते हैं कि दूसरे की सोच, भावना, कार्यण को अपनी कल्पना में उतारना और इसी प्रकार के संसार की संरचना करना जैसा कि वह करता है।

18. रूथ-स्टेंग के विचार के अनुसार उपबोधक की अवधारणा, कार्य हेतु उसकी तत्परता, उसका अन्तर्द्वन्द, दबी इच्छाएँ, अनश्रित अपराध भावना, उसके आचरण के अन्तःस्रोत इत्यादि बातों की समझ सफल परामर्श के आधार है।
19. समायोजन
20. कुसमायोजन
21. व्यक्ति को जीवन में समायोजन करना आवश्यक है –
  - i. व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए
  - ii. आकर्षक व्यक्तित्व के विकास के लिए
  - iii. शैक्षिक विकास के लिए
  - iv. समाजिक जीवन को समृद्ध बनाने के लिए
  - v. व्यावसायिक जीवन को समृद्ध बनाने के लिए
22. व्यक्ति को व्यावसायिक रूप से समायोजित बनाने में उपबोधक निम्न प्रकार से सहायता प्रदान करता है-
  - i. उपबोधक व्यक्ति को उनके योग्यता, रुचि, क्षमता के अनुसार उपयुक्त रोजगार के चयन में सहायता करता है।
  - ii. व्यावसायिक साथियों, अधिकारियों के साथ सृष्टि व मधुर संबंधों के निर्माण में व्यक्ति की सहायता करता है।
  - iii. व्यक्ति को उसकी शक्तियों व कमजोरियों का ज्ञान प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है।
23. शैक्षिक क्षेत्र में समायोजन स्थापित करने में उपबोधक छात्रों को निम्न प्रकार से सहायता प्रदान करता है-
  - i. उपबोधक छात्रों को उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरूचियों, कमियों के बारे में अधिक जानकारी प्रदान करके उन्हें स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करता है।
  - ii. छात्रों को उनकी आवश्यकताओं व योग्यताओं के अनुसार सर्वाधिक उपयुक्त पाठ्यक्रमों का चयन करने में सहायता प्रदान करता है।
  - iii. प्रतिभाशाली, मंदबुद्धि तथा विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की पहचान करने व उनमें उचित समायोजन की क्षमता का विकास करने में सहायता करता है।

### 8.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. शर्मा, आर0ए0 तथा षिखा चतुर्वेदी (2010) “शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन तथा परामर्श”, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. मिश्रा, मंजू (2007) “शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन”, ओमेगा पब्लिकेशन्स, न्यू देलही।

3. अग्रवाल, जे0सी0 (1989) “एजुकेशन वुकेशनल गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग”, देलही दुआवा हाउसा
4. जायसवाल, सीताराम (1887) “शिक्षा में निर्देशन और परामर्श”, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. नायक, ए0के0 एण्ड भी0 के राव (2004) “गाइडेन्स एण्ड कैरियर कॉन्सिलिंग”, ए0पी0 एच पब्लिशिंग कॉरपरेषन, न्यू देलही।
6. मंगल, एस0 के (2011) “शिक्षा मनोविज्ञान” पी एच एल लरनिंग प्राइवेट लिमिटेड, न्यू देलही।
7. बंगाली, एम. (1984) “गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग”, सेठ पब्लिशर्स, बॉम्बे।
8. क्रो एण्ड क्रो “इंट्रोडक्सन टु गाइडेन्स”, सेकेण्ड, एडीषन, युरेपिया पब्लिशिंग को., न्यू देलही।
9. जयसवाल, मोनिका (1968) “गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग”, प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ।
10. राव. एस. एन. (1992) “कॉन्सिलिंग एण्ड गाइडेन्स”, टाटा मेकग्राहिल, न्यू देलही।
11. “इंट्रोडक्सन टु गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग”(2009) बी0एड0 के छात्रों के लिए स्व अध्ययन सामग्री, स्कूल ऑफ एजुकेशन, इंदिरा गांधी नेशनल ओपेन यूनीवर्सिटी, न्यू देलही।
12. “निर्देशन: विधियाँ एवं तकनीक”(2010) एम0एड0 के छात्रों के लिए स्वअध्ययन सामग्री, स्कूल ऑफ एजुकेशन, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, न्यू दिल्ली।
13. गुप्ता, एस0पी0 एवं अल्का गुप्ता (2012) “उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान”, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

### 8.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. समूह परामर्श एवं व्यक्तिगत उपबोधक का समीक्षात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. समूह परामर्श के अर्थ एवं उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए इसके विभिन्न चरणों एवं अवस्थाओं का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. व्यक्तिगत परामर्श से आप क्या समझते हैं। समूह परामर्श से तुलना करते हुए इसके महत्त्व एवं उद्देश्यों पर दृष्टिपात कीजिए।
4. प्रभावशाली परामर्श की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
5. समायोजन से आप क्या समझते हैं? समायोजन की आवश्यकता एवं समायोजन की क्षमता के विकास में परामर्श की भूमिका का सविस्तार वर्णन कीजिए।

---

**इकाई 9- शिक्षा के विभिन्न स्तर पर सूचना, यथास्थिति परिचायक, स्थानन एवं अनुवर्तन सेवाएँ तथा निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन**

---

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 सूचना सेवा
  - 9.3.1 शैक्षिक सूचना में प्रदत्त सामग्री
  - 9.3.2 व्यावसायिक या रोजगार सम्बन्धी सूचना सामग्री
  - 9.3.3 व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन सम्बन्धी सूचना सामग्री
  - 9.3.4 सूचना सेवा की कार्यविधि
  - 9.3.5 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर सूचना सेवा
- 9.4 यथा स्थिति परिचायक(ओरिएंटेशन) सेवा
  - 9.4.1 ओरिएंटेशन सेवा कैसे प्रदान की जाए
  - 9.4.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर ओरिएंटेशन सेवा
- 9.5 स्थानन सेवा
  - 9.5.1 स्थानन सेवा का संगठन
  - 9.5.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर स्थानन सेवा
- 9.6 अनुवर्ती सेवा या अनुवर्तन सेवा
  - 9.6.1 अनुवर्ती सेवा की कार्यविधि
  - 9.6.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अनुवर्ती सेवा
- 9.7 निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन
- 9.8 शब्दावली
- 9.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ
- 9.11 सहायक उपयोगी/ पाठ्य सामग्री
- 9.12 निबंधात्मक प्रश्न

### 9.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग में जीवन की जटिलताएं जितनी अधिक होती जा रही हैं, निर्देशन अथवा मार्गदर्शन की आवश्यकताएं उतनी ही बढ़ती जा रही हैं। आदिकाल से आज तक हमेशा ही अधिक अनुभव वाले व्यक्ति अन्य कम अनुभव वाले व्यक्तियों का पथ प्रदर्शन करते आये हैं, उदाहरणस्वरूप यदि हम घर के वातावरण में देखे तो प्रारम्भ से ही बालक को अपने घरेलू वातावरण, माता-पिता एवं घर के अनुभवी व्यक्ति से कुछ न कुछ जीवन पर्यन्त सीखने को मिलता है। इस सीखने की प्रक्रिया में किसी न किसी रूप में मार्ग-दर्शन की आवश्यकता प्रत्येक बालक या व्यक्ति को रहती है। अतः इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु निर्देशन या मार्गदर्शन को एक सुनियोजित और वैज्ञानिक विषय के रूप में विकसित किया गया।

प्रत्येक मनुष्य अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास कर योजनायें बनाता है। परन्तु कभी ऐसा समय भी आ जाता है जब उसे अपना मार्ग स्पष्ट नहीं दिखाई देता है। वह अपने प्रयासों से वांछित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकता है, तब उसे ऐसे अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता पड़ती है जो उसको मार्ग दिखाने और उसकी योग्यताओं के विकास में उसकी सहायता करें। अतः 'मार्गदर्शन' एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति से किसी व्यक्ति को सहायता प्रदान किया जाता है। मार्गदर्शन अंग्रेजी शब्द 'गाइडेन्स (Guidance)' का हिन्दी रूपान्तर है जिसका अर्थ होता है 'मार्ग दिखाना'। इसे 'निर्देशन' भी कहा जाता है परन्तु निर्देशन शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द डाइरेक्शन (Direction) के लिए ही बहुधा काम में लाया जाता है।

'मार्गदर्शन' अथवा निर्देशन चर्तुमुखी विकास-प्रक्रिया है। अतः हम कह सकते हैं कि निर्देशन वह प्रक्रिया है जो किसी व्यक्ति को उसकी 'प्राकृतिक शक्तियों' से अवगत कराने के उपायों का बोध कराती है।

बालकों के चर्तुमुखी विकास एवं समायोजन हेतु प्रारम्भ से ही उचित मार्गदर्शन की आवश्यकता रहती है। स्कूल इस दिशा में सबसे प्रभावशाली एवं सशक्त भूमिका निभा सकते हैं। अतः स्कूल में औपचारिक शिक्षण एवं व्यक्तित्व विकास की विभिन्न गतिविधियों के साथ-साथ में मार्गदर्शन एवं परामर्श सेवाओं की भी समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। इस कार्य हेतु शिक्षण को यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि वे अपने स्कूल में किस-किस प्रकार की मार्गदर्शन सेवायें उपलब्ध करा सकते हैं। मार्गदर्शन सेवाओं को स्कूल में आयोजित करते समय मुख्य बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है-

- स्कूल में मार्गदर्शन सेवाओं के प्रकार तथा रूप।
- स्कूल की मार्गदर्शन सेवाओं में सहायक अभिलेखों का रख-रखाव।
- स्कूल में परामर्शदाताओं की भूमिका।

एक शिक्षक अपने स्कूल में बालकों के सम्पूर्ण मार्गदर्शन हेतु सूचना, यथास्थिति परिचायक, स्थानन एवं अनुवर्तन सेवाओं का आयोजन विभिन्न स्तर पर आयोजित कराना चाहिए। इस प्रकार

की मार्गदर्शन सेवाओं को आयोजित करने से बालकों को नये वातावरण में समायोजन करने में सहायता प्राप्त होती हैं। इन मार्गदर्शन सेवाओं की सहायता से हम बालकों के विषय में पूरी जानकारी प्राप्त कर उचित मार्गदर्शन दे सकते हैं जिसकी सहायता से उसे अपने व्यवसाय अथवा नये कार्य करने में सहायता तथा उद्देश्य स्पष्ट समझने में मदद मिलती है। विद्यालयों में मार्गदर्शन सेवाओं के आयोजन के पश्चात् उसका मूल्यांकन करना आवश्यक है। इसकी सहायता से शिक्षक को अनुमान लग जायेगा कि आयोजित मार्गदर्शन सेवा कार्यक्रम सफल रहा या नहीं। स्कूल के बालकों से चर्चा करके शिक्षक यह अनुमान लगाता है कि मार्गदर्शन सेवा कार्यक्रम आयोजन का लाभ बालक को अपनी चतुर्मुखी विकास में मिला है या नहीं।

## 9.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

1. मार्गदर्शन सेवाओं को स्कूल के विभिन्न शिक्षा स्तर पर आयोजित करने की शर्तें बता सकेंगे।
2. मार्गदर्शन सेवाओं के प्रकार तथा मार्गदर्शन सेवाओं के विषय में बता सकेंगे।
3. आप समझ सकेंगे की मूल्यांकन करने से मार्गदर्शन कार्यक्रम के आयोजन की कमियां एवं अच्छाईयों का पता लगता है।
4. निष्कर्ष निकाल सकेंगे कि मार्गदर्शन सेवाओं का प्रत्येक मनुष्य के जीवन में साकारात्मक प्रभाव है।
5. अलग-अलग मार्गदर्शन सेवाओं के मध्य अन्तर्संबंध स्थापित कर सकेंगे।
6. कम से कम एक क्रिया का आयोजन विभिन्न मार्गदर्शन सेवाओं के लिए कर सकेंगे।
7. स्कूल में मार्गदर्शन सेवाओं के महत्व को विस्तार से बता सकेंगे।
8. आप यह व्याख्या कर सकेंगे कि किस प्रकार मार्गदर्शन सेवाएं आयोजित की जाए।
9. आप मार्गदर्शन सेवाओं के अर्थ को स्पष्ट कर उसकी व्याख्या भी कर सकेंगे।
10. आप मार्गदर्शन कार्यक्रम से होने वाले लाभ को सूचीबद्ध कर सकेंगे।

## 9.3 सूचना सेवा (Information Service)

आप सभी जानते होंगे कि बालकों को अपने आपको समायोजित करने, अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने तथा आने वाले दिनों में ठीक तरह से अपना जीवनयापन करने में समर्थ होने हेतु विभिन्न प्रकार की सूचनाओं से अवगत होते रहने की आवश्यकता रहती है। यदि बालकों को स्कूल में भी अच्छे ढंग से सुविधानुसार सूचनाओं की प्राप्ति सुनिश्चित की जाए तो वह प्रगति की राह

पर आसानी से अग्रसर हो सकता है। बालकों की सूचना संबंधी इन आवश्यकताओं के मुख्य रूप से तीन प्रमुख श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है जैसे-

1. शैक्षिक विकास करने संबंधी आवश्यक यतायें
2. रोजगार पाने में समर्थ होने संबंधी आवश्यकतायें
3. व्यक्तिगत तथा सामाजिक संबंधी आवश्यकतायें

### 9.3.1 शैक्षिक सूचना में प्रदत्त सूचना सामग्री

निम्न प्रकार की सूचनायें एक स्कूल अपने बालकों को दे सकता है-

- बालकों को विभिन्न स्कूलों एवं कॉलेज, व्यावसायिक संस्थानों, इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग संस्थानों, ललितकला स्कूलों तथा संस्थानों, आदि की विवरणिकाओं पत्रिकाओं की प्रतियों के माध्यम से इनमें चलायें जा रहे निर्धारित योग्यताओं तथा शर्तों से परिचित कराना, प्रवेश परीक्षा के प्रारूप तथा विवरणिका मिलने की तिथियों से परिचित कराना, निर्धारित पाठ्यक्रमों हेतु आवश्यक शुल्क तथा अन्य खर्चों से परिचित कराना तथा उनमें मिलने वाले वजीफे, अन्य सुविधाओं की शर्तों तथा राशि से परिचित कराना।
- किस प्रकार की शैक्षिक पढ़ाई तथा प्रगति के लिए किस तरह की सुविधाएँ आपसपास के जिले, प्रान्त तथा देश में प्राप्त है। इस बात से बालकों को अवगत कराना।
- जिस स्कूलों में पढ़ रहे हैं, उससे उन्हें इस समय अपनी शैक्षिक प्रगति हेतु किस रूप में अधिक लाभ पहुँच सकता है, इस प्रकार की सूचनायें प्रदान करना।
- स्कूल की शैक्षिक सूचना सेवा से उन बालकों को जो किसी कारणवश भविष्य में नियमित तथा औपचारिक शिक्षा जारी नहीं रख सकते उनके लिए सतत शिक्षा तथा पत्राचार पाठ्यक्रम शिक्षा के स्रोतों से अवगत कराने का कार्य किया जा सकता है।

### 9.3.2 व्यावसायिक या रोजगार संबंधी सूचना सामग्री

आप समझ लेंगे कि शैक्षिक सूचना बालकों को उचित पाठ्यक्रम शिक्षा संस्थान के चयन हेतु कितनी उपयोगी है। जीवन में हर व्यक्ति को जीविकोपार्जन हेतु किसी न किसी रोजगार या व्यवसाय को अपनाना पड़ता है। इस दृष्टि से स्कूल शिक्षा को रोजगार या व्यवसाय से जोड़ना आवश्यक होता है। रोजगार की संभावनाओं के संदर्भ में निम्नलिखित सूचनायें स्कूलों में बालकों को प्रदान की जा सकती हैं-

- किस प्रकार के व्यवसाय हेतु किस प्रकार की न्यूनतम योग्यताओं, अभिक्षमताओं, रुचियों आदि की आवश्यकता पड़ती है इससे संबंधित सूचनाएँ प्रदान करना।

- रोजगार तथा व्यवसायों की जानकारी प्राप्त कराने वाली सामग्री जैसे मोनोग्राफ, व्यवसाय संबंधी संक्षिप्त विवरण पत्र, व्यवसाय संबंधी मैनुअल तथा गाइड, स्लाइड, फिल्म, पुस्तकें आदि का स्कूल में रखना तथा इसे बालकों को उपलब्ध कराना।
- स्थान विशेष में, या जिले, प्रांत तथा देश में किस-किस प्रकार के रोजगारी (स्व0 रोजगार तथा नौकरियों) की संभावनाएं आगामी भविष्य में अधिक हैं इस प्रकार की जानकारी प्रदान करना।
- रोजगार कार्यालयों तथा समाचार पत्रों की रिक्तियों संबंधी विज्ञप्तियों को अच्छी तरह बुलेटिन या प्रदर्शन बोर्डों पर प्रदर्शित करना।
- विभिन्न व्यवसायों सफल व्यक्तियों के लेक्चर, पैनलचर्चा, विचारगोष्ठी, कार्यशालाओं का आयोजन भी स्कूल में करते रहना चाहिए।

### 9.3.3 व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन संबंधी सूचना सामग्री

आप अवगत होंगे कि समायोजन तथा दूसरों के साथ स्वस्थ एवं बेहतर संबंध बनाने में सभी को परेशानी होती है। निम्नलिखित सूचनाएं बेहतर समायोजन तथा स्वस्थ संबंध निर्माण में सहायक होती हैं-

- बालकों को स्वच्छता की आवश्यकता क्यों है? संबंधी सूचना तथा पर्यावरण की स्वच्छता हेतु क्या करना चाहिए? इससे संबंधित सूचना।
- बालकों को स्वस्थ, निरोग एवं सबल बनने संबंधी सूचनायें।
- मानसिक स्वास्थ्य बनाए रखने संबंधी सूचनायें।
- व्यक्ति के पारिवारिक जीवन के संबंध में सूचनाएं।
- दूसरों की समस्याओं तथा आवश्यकताओं के संदर्भ में अपने आपको समायोजित करने में अपेक्षित सूचनाएं,
- अधिकार तथा कर्तव्य से संबंधित सूचनाएं।
- बालकों को अपने समय, साधन तथा शक्तियों का सही उपयोग करने संबंधी आवश्यक सूचनाएं।

### 9.3.4 सूचना सेवा की कार्यविधि

आप जान गए होंगे कि कितने प्रकार की सूचना सामग्री सूचना सेवा के अन्तर्गत समाहित होती है। आइए अब हम जानेंगे कि सूचना सेवा की कार्यविधि क्या है? सूचना सेवा की कार्यविधि के तीन प्रमुख चरण हैं-

- **सूचनाएं इकट्ठी करना:-** इसके अन्तर्गत विभिन्न प्राथमिक एवं द्वितीयक श्रोतों से विविध प्रकार की सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है। यह सभी प्रकार की सूचनाएँ बालकों हेतु महत्वपूर्ण होनी चाहिए।
- **सूचनाएं वर्गीकृत करना:-** इस चरण में एकत्रित सूचनाओं का मूल्यांकन करते हैं अधूरी, अपर्याप्त, अविश्वसनीय सूचनाओं को छाँटकर सूचनाओं को उनकी प्रकृति एवं उपयोग के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत कर दिया जाता है।
- **सूचनाओं को बालकों तक पहुँचाना:-** इस चरण में वर्गीकृत की गयी सूचनाओं को विभिन्न माध्यमों व तरीकों से व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से बालकों तक पहुँचाने का कार्य किया जाता है। इन सूचनाओं को बुलेटिन बोर्ड, कम्प्यूटर मुद्रित मोनोग्राफ को बालकों से पहुँचाया जाता है।

इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को एकत्रित करके सूचना सेवा से किस प्रकार बालकों का मार्गदर्शन किया जाता है।

### 9.3.5 शिक्षा के विभिन्न स्रोतों पर सूचना सेवा

प्राथमिक स्तर की शिक्षा में सूचना सेवा से बालकों को व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन संबंधी सूचनाओं जैसे- स्वच्छता क्यों आवश्यक है? स्वस्थ रहने हेतु अच्छी आदतें, समायोजन संबंधी सूचनाओं से बालकों का मार्गदर्शन किया जाता है तथा व्यक्तिगत समस्याओं के हल में सहायक सूचनायें प्रदान की जाती हैं।

माध्यमिक स्तर की शिक्षा में व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन संबंधी सूचनाओं के अलावा शैक्षिक सूचनाओं की जानकारी आवश्यक है क्योंकि आप सभी जानते होंगे कि इस स्तर पर विषयों के चयन, पाठ्यक्रम के चयन, विभिन्न छात्रवृत्तियों, अच्छी शिक्षण संस्थाओं में दाखिला हेतु आवश्यक सूचनाओं के अभाव में तमाम परेशानियों का सामना करना पड़ता है उच्च माध्यमिक स्तर की शिक्षा में भी व्यक्तिगत, शैक्षिक के साथ-साथ व्यावसायिक या रोजगार संबंधी सूचना सूचना सेवा से प्रदान किया जाना अत्यन्त ही जरूरी होता है क्योंकि यही वह समय काल होता है जब बालक भविष्य में जीविकोपार्जन हेतु उचित व्यवसाय या रोजगार के चयन हेतु सोचता है।

इस प्रकार आप समझ गए होंगे कि शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर बालकों की आवश्यकताओं के अनुरूप सूचनाओं का प्रबन्ध सूचना सेवा से किया जाता है। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सूचना सेवा की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

### अभ्यास प्रश्न

1. प्राथमिक स्तर के बालकों हेतु सूचना सेवा किस प्रकार सहायक है?

2. व्यवसाय या रोजगार संबंधी सूचनना की किस स्तर के बालकों को आवश्यकता पड़ती है?
3. सूचना सेवा के कितने चरण हैं?
4. सूचना सेवा क्यों महत्वपूर्ण है?

#### 9.4 यथास्थिति परिचायक सेवा (Orientation Service)

उन बालकों को जिन्होंने पहली बार स्कूल में प्रवेश लिया है उन्हें स्कूल के भौतिक एवम् मानवीय संसाधनों के बारे में, स्कूल में संचालित विभिन्न गतिविधियों के बारे में, मार्गदर्शन करना बहुत आवश्यक होता है। इस तथ्य से आप भी सहमत होंगे कि इस प्रकार की सहायता ऐसे नये बालकों को स्कूल के परिवेश से परिचित होने में मदद मिलती है, स्कूल के इतिहास, परम्पराओं, नियमों एवं सुविधाओं तथा कमियों से परिचित होने में सहायता मिलती है, तथा स्कूल के प्रधानाचार्य, अध्यापकों, लिपिकों तथा अन्य संबंधित कर्मचारियों से परिचित होने का अवसर मिलता है। इसके अलावा अन्य प्रकार के लाभ इस मार्गदर्शन सेवा से प्राप्त हो सकते हैं जो निम्न प्रकार हैं-

- बालकों का सामाजिक समायोजन आसानी से व बेहतर तरीके से हो जाता है।
- स्कूल के सत्रीय तथा वार्षिक कैलेंडर से परिचित होने का अवसर मिलता है।
- बालक यह जान पाते हैं कि किन कक्षाओं में किस विषय का अध्ययन होता है, पुस्तकालय, खेल मैदान, प्रयोगशाला, जिम्नेज़ियम आदि कहाँ स्थित हैं।

##### 9.4.1 यथास्थिति परिचायक सेवा कैसे प्रदान की जाए

आप सभी अवगत होंगे कि किसी नए स्कूल में प्रवेश के बाद वहाँ समायोजन करने में कितनी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आइए अब हम जानेंगे कि स्कूलों में किस प्रकार यथास्थिति परिचायक सेवा प्रदान की जा सकती है-

##### 9.4.1.1 विवरणिका या अन्य मुद्रित सामग्री का उपयोग करना

यदि स्कूल के परिवेश, इतिहास, उद्देश्य, कार्यप्रणाली तथा भौतिक व मानवीय संसाधनों से बालकों को परिचित होने का मौका मिले तो यह निश्चित रूप से बालकों हेतु लाभकारी होगा। प्रत्येक स्कूल को अपनी परिचय पुस्तिका तथा हैण्डबुक के नाम से मुद्रित सामग्री सभी बालकों को उपलब्ध कराना चाहिए जिसमें निम्न बातों का समावेश हो।

- स्कूल के मार्गों तथा भवनों को प्रदर्शित करता हुआ मानचित्र।
- प्रधानाध्यापक, अध्यापक तथा अन्य कर्मचारी वर्ग का परिचय विवरण।
- स्कूल में पढ़ाये जाने वाले विषय।
- ली जाने वाली समस्त शुल्कों का विवरण।

- सत्रपर्यंत संचालित होने वाली क्रियाओं/गतिविधियों का विवरण।
- स्कूल के सफल पुरातन छात्रों का विवरण।
- स्कूल से दी जाने वाली सुविधाओं का विवरण।

#### 9.4.1.2 ओरिएण्टेशन दिवस या सप्ताह मनाना

स्कूलों में नए सत्र की शुरुआत के साथ ही ओरिएण्टेशन दिवस या सप्ताह मनाये जाने चाहिए। सत्र के शुरु के दिनों में किसी दिन सभी नये बालकों को एक जगह एकत्रित किया जा सकता है। प्रधानाध्यापक व अन्य शिक्षकों से उन्हें स्कूल के इतिहास, उद्देश्य, नियम, कार्यक्रमों से अवगत कराया जा सकता है। अपने शिक्षकों, कर्मचारियों से भी परिचय कराया जा सकता है। स्कूल में संचालित विभिन्न गतिविधियों जैसे एन0 सी0 सी0 स्काउट व अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों से परिचित कराया जा सकता है।

यह कार्यक्रम तीन-चार दिन या आवश्यकता पड़ने पर सप्ताह भर इस प्रकार नियोजित करके चलाया जा सकता है कि नवप्रवेशी बालकों को सभी प्रकार का ओरिएण्टेशन भली भाँति प्रदान किया जा सके। स्कूल से संबंधित सभी आवश्यक जानकारी उसे मिल सके।

#### 9.4.1.3 गैट टू गैदर समारोह आयोजित करना

गैट टू गैदर समारोह का आयोजन पुराने बालकों की सहायता से कराकर नये बालकों को पुराने बालकों से, स्कूल के शिक्षकों तथा कर्मचारियों से भलीभाँति परिचित कराया जा सकता है। इस अवसर पर नये बालक विभिन्न सांस्कृतिक एवं अन्य कार्यक्रमों के माध्यम से अपनी क्षमता तथा योग्यता का प्रदर्शन भी कर सकते हैं पुराने बालकों से नेतृत्व करने से उनकी झिझक खुलती है। इस अवसर पर नए बालकों के माता-पिता को भी बुलाया जा सकता है। नए बालक में पुराने बालक के प्रति सम्मान की भावना का भी विकास होता है। जलपान, खेलकूद गतिविधियों के आयोजन से इस समारोह को और बेहतर तरीके से आयोजित किया जा सकता है। आप भी इस बात से सहमत होंगे कि अनौपचारिकता सौहार्दपूर्ण वातावरण में नए बालकों को स्कूल में परिवेश के साथ तालमेल बिठाने की शुरुआत अच्छी प्रकार हो जाती है। इस प्रकार के गैट टू गैदर समारोह का आयोजन स्कूल प्रशासन तथा शिक्षकों से भी किया जा सकता है।

#### 9.4.1.4 ओरियेन्टेशन काउण्टर खोलना

स्कूल में प्रवेश से या स्कूल कार्यालय के साथ ही एक ओरियेन्टेशन काउण्टर खोल देना चाहिए। यह काउण्टर अगर सारे सत्र ही खुला रहे तो इससे किसी भी समय नये आने वाले बालकों तथा समय-समय पर आवश्यकता पड़ने पर पुराने बालकों को भली-भाँति आवश्यक ओरियेन्टेशन संबंधी मार्गदर्शन सेवायें उपलब्ध होती रह सकती हैं। सत्र के प्रारम्भ में यह काउण्टर खोलना बहुत ही आवश्यक हो सकता है। यह काउण्टर किसी भी अनुभवी अध्यापक की देख-रेख में योग्य

कर्मचारियों से ही चलाया जाना चाहिए। सीनियर बालकों की सहायता भी इस काउण्टर को बेहतर बनाने में ली जा सकती है। पुराने बालक इस काउण्टर के माध्यम से नए बालकों से आसानी से घुल भिन्न जाते हैं तथा नए बालकों की समस्याओं को पुराने बालक पहले ही देख चुके होते हैं इसलिए वे उन्हें उचित ओरिएण्टेशन संबंधी बातें आसानी से समझा देते हैं। ओरिएण्टेशन काउण्टर को आकर्षक बनाना चाहिए तथा इस पर कुछ बोर्ड जैसे "स्वागतम स्कूल परिवार आपका हार्दिक स्वागत करता है" तथा "बताइए हम आपकी क्या सहायता करें" लगवाने चाहिए ताकि नये बालकों को प्रथम दृष्टतया अच्छा महसूस हो। इस काउण्टर के माध्यम से विवरण पुस्तिका, बुलेटिन, पत्रिकाओं तथा अन्य आवश्यक मुद्रित सामग्री का वितरण अच्छी प्रकार से किया जा सकता है।

#### 9.4.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर ओरिएण्टेशन सेवा

आप सभी समझ गए होंगे कि ओरियेण्टेशन सेवा किस प्रकार नए बालकों के लिए लाभदायक है। माता-पिता या संरक्षकों के स्थानान्तरण के फलस्वरूप या किसी अन्य कारण से जब बालक नये स्कूल में प्रवेश करते हैं (ऐसे बालक किसी भी कक्षा में अध्ययनरत हो सकते हैं) तब उन्हें ओरियेण्टेशन सेवा की आवश्यकता पड़ती है। कुछ ओरियेण्टेशन क्रियाये या गतिविधियाँ शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर हेतु उपयुक्त हो सकती हैं तथा कुछ अन्य माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर हेतु सार्थक एवं उपयोगी हो सकती हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ओरियेण्टेशन सेवा शिक्षा के प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर आवश्यक है।

#### अभ्यास प्रश्न

5. ओरिएण्टेशन सेवा बालकों को किस प्रकार से प्रदान की जा सकती है?
6. स्कूल की विवरणिका की विषयवस्तु ओरिएण्टेशन सेवा हेतु क्या होनी चाहिए?
7. ओरियेण्टेशन काउण्टर के माध्यम से ओरियेण्टेशन सेवा किस प्रकार प्रदान की जा सकती है?
8. ओरियेण्टेशन सेवा बालकों हेतु क्यों आवश्यक है?

#### 9.5 स्थानन सेवा (Placement Service)

स्थानन सेवा के माध्यम से बालक को किसी व्यवसाय में स्थापित करने में मदद मिलती है। इस सेवा से किसी व्यक्ति को प्रशिक्षण में किसी व्यावसायिक पारिस्थिति में या किसी अलग पाठ्यक्रम को चुनने में सहायता प्राप्त होती है।

स्थानन सेवा से बालक को निम्नलिखित क्रियाएं करवाई जाती हैं-

- बालक को व्यक्तिगत रूप से जानकारी देना। बालकों को उनके इच्छानुसार व्यवसाय में प्रवेश करने या नये पाठ्यक्रम में प्रवेश करने की विधियों की जानकारी देना चाहिए।
- नौकरियों के लिए रिक्तियों, छात्रवृत्तियों के लिए फार्म एवं प्रतियोगिताओं, कालेज में रजिस्ट्रेशन की प्रक्रिया आदि के बारे में सूचनाएं अर्जित करना, उन्हें संचित करना तथा ठीक ढंग से रखना।

### 9.5.1 स्थानन या स्थानापन सेवा का संगठन

स्थानन सेवा दो प्रकार की होती है।

1. शैक्षिक स्थानन सेवा
2. व्यावसायिक स्थानन सेवा

शैक्षिक स्थानन सेवा व्यक्ति के एक शैक्षिक अनुभव में सन्तापेजनक विकास करने के लिए सहायता करने के कार्यक्रम को कहते हैं। किसी व्यक्ति को व्यवसाय के क्षेत्र में उचित स्थान दिलाने में सहायता करने की प्रक्रिया को व्यावसायिक की स्थानन सेवा कहते हैं।

व्यावसायिक एवं शैक्षिक स्थानन सेवा में बालकों की रुचियों, योग्यताओं, अभिरुचियों और अभिक्षमताओं का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है।

#### 9.5.1.1 शैक्षिक स्थानन सेवा का संगठन

शैक्षिक स्थानन का संबंध बालकों को उनके शैक्षिक अनुभवों के लिए विवेकपूर्ण चयन में सहायता करने से है। शैक्षिक स्थानन की प्रक्रिया निम्नलिखित क्रियाओं से करके इस सेवा का संगठन किया जाता है:-

- निर्देशन/मार्गदर्शन प्रदान करने वाले व्यक्ति को पाठ्यक्रमों तथा कोर्स की नवीनतम सूचनाएं रखना अनिवार्य होता है ताकि नवीनतम सूचनाएं बालकों को शीघ्रता से उपलब्ध कराई जा सकें।
- स्कूल में सभी स्टाफ सदस्यों के साथ अच्छे संबंध स्थापित किये जाने चाहिए तथा इन अच्छे संबंधों का उपयोग स्थानन की सभी अवस्थाओं में करने से सफलता मिलती है।
- बालक के बारे में जानने के लिए उसकी रुचियों तथा आवश्यकताओं को समझने के लिए निजी साक्षात्कार आयोजित किया जाता है। इससे निर्देशन अधिकारी के लिए उस बालक की किसी कोर्स या पाठ्यक्रम के प्रति भावनाओं का अनुमान लगाना आसान हो जाता है।
- सभी बालकों की एक फाइल तैयार की जाती है।
- बालकों के लिए परामर्श सत्र को आयोजित किया जाता है जिससे बालकों को विभिन्न अवसरों का ज्ञान होता है तथा इनके आधार पर ही भावी योजनाएं बनाना संभव होता है।

### 9.5.1.2 व्यावसायिक स्थानन सेवा का संगठन

व्यावसायिक स्थानन सेवा का संबंध व्यक्ति के लिए अंशकालिक या पूर्ण कालिक नौकरी प्राप्त करने से होता है। व्यावसायिक स्थानन सेवा के संगठन हेतु निम्नलिखित क्रियाओं का आयोजन किया जाता है-

- उपलब्ध नौकरियों का वर्गीकरण किया जाता है और उनके लिए फाइलिंग प्रणाली का प्रयोग किया जाता है।
- स्थानन अधिकारी नियोक्ताओं के साथ सहकारी संबंध स्थापित करता है इस हेतु वह पत्र व्यवहार करता है, टेलीफोन पर वार्तालाप करता है, उनके पास जाकर वार्तालाप करता है। नियोक्ता को व्यक्तिगत रूप से जानने से स्थानन कर्मचारी ठीक ढंग से कार्य कर पाता है।
- स्थानन अधिकारी नियोक्ताओं से नौकरियों के विज्ञापन प्राप्त करते हैं तथा उसे बालकों हेतु उपलब्ध करवाता है।
- नौकरी के इच्छुक बालकों से साक्षात्कार कर उनकी रुचियों, शैक्षिक योग्यताओं का पता लगाकर उनका नाम, जन्मतिथि, जन्मस्थान दर्ज किया जाता है।
- बालक का नाम रजिस्टर करने हेतु फाइलिंग प्रणाली का ज्ञान होना चाहिए इस प्रणाली में एक रजिस्ट्रेशन कार्य का फोल्डर होना चाहिए। इस फोल्डर में उम्मीदवार की सूचनाएँ दर्ज होनी चाहिए।
- उम्मीदवार से संबंधित निश्चित विवरण स्पष्ट एवं साफ-साफ लिखे होने चाहिए।
- प्रत्येक व्यक्ति से संबंधित सारी सूचनाओं को एकत्रित करने के उपरान्त उसकी जाँच अवश्य कर लेनी चाहिए।
- नियुक्तिचर्चा की ओर से विज्ञप्ति की गई नौकरियों के लिये रजिस्टर किये गये व्यक्तियों में से नौकरी दिलाने वाले कर्मचारी केवल उसी उम्मीदवार की सिफारिश करे जिसका चयन किया हो स्थानन कर्मचारी सभी उम्मीदवारों की छानबीन भली-भाँति करने के उपरान्त उपयुक्त उम्मीदवार की सिफारिश करें।

### 9.5.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर स्थानन सेवा

स्थानन सेवा का आयोजन मुख्य रूप से माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर तथा उच्च शिक्षा संस्थानों में किया जाना आवश्यक है। क्योंकि इन्हीं स्तर के बालकों को उपयुक्त शैक्षिक अनुभवों, उपयुक्त व्यवसायों के चयन में समस्या का अनुभव होता है। इस सेवा के आयोजन से बालक अपने योग्यता एवं रुचि के अनुरूप पाठ्यक्रम एवं व्यवसाय का चयन सरलता से कर सकता है।

स्कूलों में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के बालकों का बोयाडाटा तैयार कराना आवेदन पत्र लिखना तथा साक्षात्कार की तैयारी, प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कराना, आदि सिखाया जाता है।

उच्च शिक्षा संस्थानों में इस सेवा के अन्तर्गत विभिन्न व्यवसायों के नियोक्ता से कैम्पस साक्षात्कार का आयोजन करके बालकों को व्यवसाय या प्रशिक्षण में सम्मिलित होने का अवसर प्रदान किया जाता है।

### अभ्यास प्रश्न

9. स्थानन सेवा का क्या महत्व है?
10. स्थानन सेवा मुख्यतः कितने प्रकार की होती है?
11. उच्च माध्यमिक स्तर के बालकों को इस सेवा से किस प्रकार की सेवा प्रदान की जा सकती है?
12. उच्च शिक्षा स्तर के बालकों का स्थानन सेवा से क्या मदद मिलता है?

### 9.6 अनुवर्ती सेवा या अनुवर्तन सेवा (Follow-up Service)

अनुवर्तन सेवा से अभिप्राय निर्देशन के अन्तर्गत किसी भी शैक्षिक पाठ्यक्रम या व्यवसाय में प्रवेश पाने के पश्चात् उस पाठ्यक्रम या व्यवसाय में व्यक्ति के समायोजन की सीमा या समायोजन की गति का अनुमान सुव्यवस्थित एवं वस्तुनिष्ठ तरिकों से प्राप्त करने की प्रक्रिया से हैं। अनुवर्ती सेवा मार्गदर्शन करने वाले को उसके कार्य की प्रभावशीलता के संबंध में पृष्ठपोषण प्रदान करती है। अनुवर्ती सेवा के अन्तर्गत विविध मूल्यांकन तकनीकों जैसे- प्रश्नावली का प्रयोग टेलीफोनिक साक्षात्कार तथा व्यक्तिगत सम्पर्क आदि का प्रयोग किया जाता है। तकनीकों का चयन इस बात पर निर्भर करता है कि बालक पृष्ठपोषण देने हेतु किस रूप में उपलब्ध है- टेलीफोन पर या व्यक्तिगत रूप से साक्षात्कार हेतु या प्रश्नावली के माध्यम से। इन विभिन्न तकनीकों के माध्यम से सूचना एकत्रित करने के बाद मार्गदर्शन करने वाले का स्वयं की प्रभावशीलता, कार्यक्रम के प्रशासन संबंधी, छात्र प्रतिक्रियाओं आदि का मूल्यांकन समग्र निर्देशन कार्यक्रम में सुधार की भावना से करता है।

#### 9.6.1 अनुवर्ती सेवा की कार्यविधियाँ

अनुवर्ती सेवा का स्वरूप मुख्यतः निदानात्मक तथा मूल्यांकन युक्त माना जाता है। इस सेवा का मुख्य लक्ष्य व्यक्ति की किसी व्यवसाय में समायोजन संबंधी आवश्यकताओं का निदान, उस व्यक्ति की सफलता एवं प्रभावशीलता की जानकारी तथा बालक को दिए गए निर्देशन का मूल्यांकन करना होता है।

अनुवर्ती सेवा के लिए कुछ मुख्य कार्यविधियाँ निम्नलिखित हैं-

- स्कूल जा रहे बालक का सर्वेक्षण किया जाना चाहिए एवं उनका शैक्षिक स्तर देखा जाना चाहिए। सर्वेक्षण में ये भी देखा जाना चाहिए कि बालक के लिए कौन-कौन से कोर्स सहायक हो सकते हैं।

- किसी कारणवश स्कूल छोड़ने वाले बालकों का साक्षात्कार करा के ये पता लगाना चाहिए कि उन्होंने स्कूल क्यों छोड़ा तथा इनकी क्या मदद की जा सकती है।
- शिक्षा पूरी करके स्कूल छोड़ने वाले बालक का भी सर्वेक्षण कर यह पता लगाना चाहिए कि स्कूल छोड़ने के उपरान्त वे क्या कर रहे हैं तथा उन्हें समायोजन संबंधी किस प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है।
- बालकों हेतु समूह सम्मेलनों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। इसमें बालकों को भविष्य की योजना बनाने में सहायता प्रदान की जानी चाहिए। अध्यापकों, कर्मचारियों तथा सलाहकारों के लिए विभिन्न कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए। इस प्रकार की कार्यशालाओं में विचारों तथा सुझावों के अवसर प्रदान किए जा सकते हैं।
- जिस संस्थान में किसी व्यक्ति की नियुक्ति की गई है। उस संस्थान में जा कर एक समूह अथवा व्यक्ति से किए गए अवलोकन के आधार पर नवनि्युक्त किए गए व्यक्ति के विषय में समायोजन संबंधी आवश्यक जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए।

### 9.6.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अनुवर्ती सेवाएँ

यह सेवा मुख्यतः उच्चतर माध्यमिक स्तर के बालकों, उच्च शिक्षा पूरी कर चुके बालकों के किसी व्यवसाय में समायोजन सं संबंधित होती है। इस सेवा से किसी व्यवसाय में व्यक्ति की सफलता एवं प्रभावशीलता की जानकारी प्राप्त की जाती है। यह सेवा प्राथमिक स्तर के ऐसे बालकों हेतु भी सहायक हो सकती है जिन्होंने किसी कारणवश स्कूल छोड़ दिया है। उनके स्कूल छोड़ने के कारण को पता लगाकर उचित सहायता का प्रबंध अनुवर्ती सेवा से किया जा सकता है। अब आप समझ गये होंगे कि अनुवर्ती सेवा से अप्रत्यक्ष रूप से मार्गदर्शनकर्ता के कार्य का मूल्यांकन हो जाता है।

### अभ्यास प्रश्न

13. अनुवर्ती सेवा का मार्गदर्शन में क्या महत्व है?
14. अनुवर्ती सेवा हेतु सूचना एकत्रित करने के कौन-कौन से साधन हैं?
15. अनुवर्ती सेवा का मुख्य लक्ष्य क्या है?

### 9.7 निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन

निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन निर्देशन कार्यक्रम में सुधार तथा उसे अधिक प्रभावी बनाने हेतु अत्यन्त आवश्यक है। मूल्यांकन प्रविधि से निर्देशन कार्यक्रम के विभिन्न क्रियाविधि, आव्यूहरचना तथा तकनीकी के कमियों एवं गुणों की पहचान कर सुधार कर सकते हैं। प्रभावी निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन करने हेतु सभी प्रकार के रिकार्ड का रखरखाव बेहतर तरीके से होना आवश्यक है।

मूल्यांकन हम प्रत्येक व्यक्ति अर्थात बालक या परामर्शदाता का भी कर सकते हैं। बालक का शैक्षिक मूल्यांकन निश्चित ही उसके स्कूल अनुभव का एक अभिन्न अंग है। जबकि मानसिक स्वास्थ्य, व्यवहारिक तथा कौशल मूल्यांकन समय-समय पर किया जाना चाहिए। हम देख सकते हैं कि सम्पूर्ण शैक्षिक तथा गैरशैक्षिक मूल्यांकन परामर्श सेवाओं में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। समय-समय पर परामर्शदाताओं को अपना आत्म मूल्यांकन करना चाहिए जिससे वे अपने व्यवसायिक क्षमताओं का सुधार कर विकास कर सकें। स्कूल प्रबन्धन के प्रधानाचार्य या कार्यक्रम आयोजक स्टाफ को इस आत्ममूल्यांकन में हिस्सा लेने की सहमती देनी चाहिए। सामान्यतः नये शोध कार्यों के माध्यम से मार्गदर्शन तथा परामर्श के नये-नये विचार उभर कर सामने आये हैं तथा इन विचारों को विद्यालयों में समाहित किया जा रहा है। परामर्शदाता अपनी क्षमताओं को सदैव सुधार कर अच्छी से अच्छी निर्देशन सेवा स्कूलों में देंगे।

अतः शोध तथा मूल्यांकन से स्व-आत्मनिरीक्षण किया जा सकता है। तथा इसकी सहायता से हम एक प्रभावी तथा अत्यधिक सफल निर्देशन सेवाओं का आयोजन स्कूलों में कर सकते हैं।

### 9.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि बालकों को शैक्षिक विकास करने रोजगार पाने में समर्थ होने, व्यक्तिगत व सामाजिक संबंधी आवश्यकताओं के लिए विभिन्न प्रकार की सूचनाओं की जरूरत होती है। मार्गदर्शन की सूचना सेवा इस हेतु उपयोगी है। आप यह भी जान चुके हैं कि नये बालकों को स्कूल में प्रथम बार आने पर होने वाली समस्याओं व कठिनाइयों का समाधान सूचना पत्रिका व अन्य मुद्रित सामग्री के माध्यम से, ओरियेन्टेशन काउण्टर खोलकर, गेट टू गैदर का आयोजन करके तथा ओरियेन्टेशन दिवस या सप्ताह मनाकर ओरियेन्टेशन सेवा से किस प्रकार किया जाता है। साथ ही साथ शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर सूचना ओरियेन्टेशन सेवा किस प्रकार आयोजित की जाती है यह भी जान चुके हैं। स्थानन सेवा के अन्तर्गत बालकों को किसी उपयुक्त शैक्षिक पाठ्यक्रम में दाखिला हेतु या उचित व्यवसाय के चयन या उस व्यवसाय में समायोजन हेतु सहायता प्रदान की जाती है। स्थानन सेवा के आयोजन में स्थानन अधिकारी करी भूमिका अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है। अनुवर्ती सेवा से निर्देशन कार्यक्रम की सफलता के बारे में जानकारी मिलती है। इस से बालकों को व्यवसाय में समायोजित होने संबंधी समस्याओं हेतु सहायता प्रदान की जाती है। इकाई के अन्त में आपने समझा है कि निर्देशन कार्यक्रम का मूल्यांकन इसमें सुधार और प्रभावी बनाने हेतु किया जाता है। निर्देशन कार्यक्रम के मूल्यांकन हेतु विभिन्न मूल्यांकन तकनीकों एवं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

### 9.9 शब्दावली

1. **विवरणिका (Brochure)**- ऐसी लिखित सामग्री जिसमें स्कूल से संबंधित सभी महत्वपूर्ण सूचनाएं हों।
2. **यथास्थिति परिचालक सेवा (Orientation Service)**- यथास्थिति परिचालक अथवा ओरियेन्टेशन से तात्पर्य स्कूल के इतिहास, भौतिक एवं मानवीय संसाधन, स्कूल में संचालित विभिन्न-गतिविधियों, नियम, सुविधाओं से बालकों को परिचित कराना।
3. **ओरियेन्टेशन काउण्टर (Orientation Counter)**- ऐसा स्थान जहाँ पर बालकों को स्कूल से संबंधित समस्त सूचनार्यें विश्वसनीय व प्रमाणिक रूप से उपलब्ध हों।
4. **स्थानन (Placement)**- स्थानन से तात्पर्य बालकों को किसी अच्छे पाठ्यक्रम में प्रवेश प्राप्त होने या किसी व्यवसाय में चयनित होने से है।
5. **अनुवर्ती सेवा (Follow-up Service)**- किसी व्यवसाय या शैक्षिक पाठ्यक्रम में बालकों के समायोजन व सफलता से संबंधित सूचनाएं एकत्रित करना।

### 9.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. प्राथमिक स्तर के बालकों को सूचना सेवा से बालकों को व्यक्तिगत तथा सामाजिक समायोजन संबंधी सूचनाओं जैसे-स्वच्छता क्यों आवश्यक है? अच्छी स्वास्थ्य आदतों का निर्माण संबंधी सूचना से मार्गदर्शन किया जाता है।
2. व्यवसाय या रोजगार संबंधी सूचना की आवश्यकता माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर तथा उच्चशिक्षा के बालकों को पड़ती है।
3. सूचना सेवा के तीन चरण होते हैं-
  - i. सूचनाएं इकट्ठी करना
  - ii. सूचनाएं वर्गीकृत करना
  - iii. सूचनाओं को बालकों तक पहुंचाना।
4. सूचना सेवा से बालकों को शैक्षिक विकास करने में रोजगार पाने में तथा व्यक्तिगत तथा सामाजिक समस्याओं को हल करने में सहायक सूचनाओं की प्रदान किया जाता है इसलिए यह सेवा महत्वपूर्ण है।
5. ओरियेन्टेशन सेवा विवरणिका को बाँटकर, ओरिएण्टेशन दिवस या सप्ताह मनाकर, गेट टू गैदर समारोह आयोजित करके तथा ओरियेन्टेशन काउण्टर के माध्यम से प्रदान की जा सकती है।
6. स्कूल विवरणिका के अन्तर्गत स्कूल से संबंधित सभी सूचनार्यें जैसे- स्कूल का इतिहास, उद्देश्य नियम, भौतिक एवं मानवीय संसाधन, सुविधार्यें, गतिविधियाँ (शैक्षणिक, पाठ्यसहगामी) आदि आती हैं।

7. स्कूल प्रशासन शिक्षकों व वरिष्ठ बालकों के माध्यम से ओरियेन्टेशन काउण्टर से नये बालकों को सूचना पुस्तिकों (विवरणिका) उपलब्ध कराता है, उनके अनेकों प्रश्नों, समस्याओं का समाधान बातचीत से करता है, यह काउण्टर नये बालकों का स्कूल में स्वागत करते हुए उन्हें स्कूल में समायोजन में सहायता प्रदान करता है।
8. ओरियेन्टेशन सेवा से स्कूल के नवप्रवेशी बालक को स्कूल में आसानी से समायोजित करने, स्कूल की कार्य संस्कृति से परिचित कराने भौतिक एवं मानवीय संसाधन से परिचित कराने का कार्य किया जाता है। इसलिए यह सेवा महत्वपूर्ण है।
9. स्थानन सेवा से किसी बालक को किसी व्यवसाय में या किसी शैक्षिक पाठ्यक्रम में स्थापित किया जाता है।
10. स्थानन सेवा मुख्यतः दो प्रकार की होती है-
  - i. शैक्षिक स्थानन सेवा
  - ii. व्यवसायिक स्थानन सेवा
11. उच्च माध्यमिक स्तर के बालकों को स्थानन सेवा से किसी शैक्षिक पाठ्यक्रम में संतोषजनक विकास करने में तथा व्यवसाय के क्षेत्र में उचित स्थान प्राप्त होने में सहायता प्राप्त होती है।
12. उच्च शिक्षा स्तर के बालकों को इस सेवा से व्यवसाय में उचित स्थान प्राप्त होने में सहायता प्राप्त होती है।
13. अनुवृत्ति सेवा से बालकों को किसी भी शैक्षिक पाठ्यक्रम या व्यवसाय में प्रवेश पाने के पश्चात् उस पाठ्यक्रम या व्यवसाय में व्यक्ति के समायोजन की सीमा व समायोजन की गति का अनुमान वस्तुनिष्ठ तरीके से प्राप्त करके उनकी सहायता की जाती है इससे मार्गदर्शनकर्त्ता को उसके कार्य के बारे में पृष्ठपोषण भी मिल जाता है।
14. अनुवृत्ति सेवा के अन्तर्गत प्रश्नावली, व्यक्तिगत साक्षात्कार या टेलीफोन साक्षात्कार के माध्यम से सूचनायें एकत्रित की जाती है।
15. अनुवृत्ति सेवा का मुख्य लक्ष्य बालक की किसी व्यवसाय में समायोजन संबंधी आवश्यकताओं का निदान तथा बालक को दिये गए मार्गदर्शन का मूल्यांकन होता है।

### 9.11 संदर्भ ग्रन्थ

14. ओबेराय, डॉ० सुरेश चन्द्र (2006), शैक्षिक तथा व्यवसायिक निर्देशन एवं परामर्श, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ,
15. मंगल, डॉ० एस० के० एवं श्रीमती श्रुभा (2003), मार्गदर्शन एवं परामर्श, आर्य बुक डिपो, मेरठ
16. गुप्ता, एस.पी. (2008), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

17. सिंह, ए. के. (2010), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन पब्लिशर्स, पटना
18. जायसवाल, एस.(2008), शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
19. Bhatnagar, A & Gupta, N (1999).Guidance and Counselling: A theoretical Approach(Ed), New Delhi: Vikash Publishing House.
20. Das, B.N. (2010). Career Guidance and Counselling. Agra: Vinod Pustak Mandir
21. Kochhar, S.K, (1980) Guidance and Councelling, New Delhi: Sterling Publishers.
22. Mathur, S.S.(2012).Fundamentals of Guidance and Counselling.Agra: Vinod Pustak Mandir
23. NCERT(2008).Introduction to Guidance,Module-1, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
24. NCERT(2008).Career Information in Guidance,Module-5 and 12, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
25. Pandey, K.P.(2009).Educationaland Vocational Guidance in India. Varanasi: Vishvidyalaya Prakashan.
26. Sharma, N.R. (2012). Educationaland Vocational Guidance. Agra: Vinod Pustak Mandir

---

### 9.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

---

1. Agarwal, J.C, (1985), Educational Vocational Guidance and Counseling, Doaba House, New Delhi.
2. Agrawal, R (2006). Educational, Vocational Guidance and Counselling, New Delhi, Sipra Publication.
3. Bhatnagar, A & Gupta, N (1999).Guidance and Counselling: A theoretical Approach(Ed), New Delhi, Vikash Publishing House.
4. Kapunan, R.R. (2004). Fundamentals of Guidance and Counselling, Rex Printing Company, Inc., Quezon City.
5. Kinra, A.K. (2008). Guidance and Counselling, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd. New Delhi.
6. Jones, A.J.(19510.Principles of Guidance and Pupil Personnel work,New York,MiGraw Hill.

7. Mendoza, E. (2003), Guidance and Counselling Today. Rex Book Store (RBSI), Manila.
8. Nanda, S.K and Sharma S, (1992) Fundamentals of Guidance, Chandigarh.

Websites & E-links:-

- [www.books.google.co.in](http://www.books.google.co.in)
- [www.education.go.ug/guidance](http://www.education.go.ug/guidance)
- <http://encyclopedia2.thefreedictionary.com>
- [www.careersteer.com](http://www.careersteer.com)
- [www.lotsofessays.com](http://www.lotsofessays.com)
- [www.careerstrides.com](http://www.careerstrides.com)
- [www.wikipedia.org/wiki](http://www.wikipedia.org/wiki)

---

### 9.13 निबंधात्मक प्रश्न

---

1. स्कूल स्तर पर सूचना सेवा कैसे आयोजित की जाए? व्याख्या कीजिए?
2. मार्गदर्शन सेवाओं के प्रकार एवं उनमें अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. मार्गदर्शन सेवाओं का शिक्षा के विभिन्न स्तर पर आयोजन कैसे करते हैं? व्याख्या कीजिए।
4. सम्पूर्ण मार्गदर्शन प्रक्रिया का मूल्यांकन एवं उसके उद्देश्य की चर्चा करें?

---

**इकाई 10 : अच्छे परामर्शदाता के गुण , भूमिका तथा जिम्मेदारियाँ**


---

- 10.1 प्रस्तावना
- 10.2 उद्देश्य
- 10.3 अच्छे परामर्शदाता के गुण
  - 10.3.1 अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व की विशेषता
  - 10.3.2 अच्छे परामर्शदाता का प्रशिक्षण और तैयारी
  - 10.3.3 अच्छे परामर्शदाता का अनुभव
- 10.4 अच्छे परामर्शदाता की भूमिका एवं जिम्मेदारियाँ
  - 10.4.1 विद्यार्थियों को परामर्श देने से संबन्धित कार्य
  - 10.4.2 विद्यार्थियों के माता पिता का सहयोग प्राप्त सम्बन्धी कार्य
  - 10.4.3 अध्यापकों से सहयोग प्राप्त करने सम्बन्धी कार्य
  - 10.4.4 सूचनाएँ प्रदान करने सम्बन्धी कार्य
  - 10.4.5 समुदाय के साथ सहयोग सम्बन्धी कार्य
  - 10.4.6 मार्गदर्शन एवं परामर्श सेवाओं से संबन्धित अन्य विविध कार्य
- 10.5 सारांश
- 10.6 शब्दावली
- 10.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
- 10.9 सहायक उपयोगी/ पाठ्य सामग्री
- 10.10 निबंधात्मक प्रश्न

---

**10.1 प्रस्तावना**


---

परामर्शदाता व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति होता है, जो विद्यालयों में परामर्श तथा मार्गदर्शन सेवाओं का संगठन जिम्मेदारी के साथ करता है। विद्यालय का अध्यापक इस प्रकार के व्यावसायिक प्रशिक्षण के उपरान्त विद्यालय में परामर्शदाता की भूमिका अदा कर सकते हैं। परामर्शदाता निर्देशन और मार्गदर्शन कार्यक्रम का मुख्य एवं आकर्षक बिन्दु होता है। जो मार्गदर्शन तथा निर्देशन कार्यक्रम का आयोजक तथा सुत्रधार विद्यालयों में होता है। परामर्शदाता प्रत्येक विद्यालय में अत्यन्त आवश्यक है। तथा यह एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। ये विद्यार्थी के सामाजिक समायोजन,

व्यावसायिक चयन, से लेकर संवेगात्मक समस्याओं का समाधान करते हैं। परामर्शदाता विद्यार्थी की हर प्रकार की समस्याओं का समाधान करने हेतु विभिन्न प्रविधियों जैसे निदानात्मक उपकरण व्यावसायिक सूचनाएँ व्यक्ति को समझने के लिये विभिन्न परीक्षण का प्रयोग करते हैं। परामर्श एक व्यावसायिक सेवा है तथा यह व्यक्ति की समस्या पर केन्द्रित होता है। परामर्श सदैव परामर्शदाता की भविष्यवाणी की उपयुक्तता पर आधारित होता है। एक अच्छे परामर्शदाता में परिपक्वता, भावात्मक स्थिरता, आत्मसम्मान तथा आत्म विश्वास, स्वयं के बारे में ज्ञान, नेतृत्व की योग्यता, शैक्षिक पृष्ठभूमि तथा विद्वता, स्वास्थ्य एवं बाहरी व्यक्तित्व, व्यावसाय के प्रति सम्पूर्ण भावना प्रार्थी के मतभेदों के प्रति सहनशीलता और स्वीकृति का दृष्टिकोण तथा सभी साकारात्मक गुण होनी चाहिए। विद्यार्थियों का सहयोग और उनकी संभाषिता एक सफल परामर्शदाता के लिए आवश्यक है। परामर्शदाता विद्यार्थियों का विश्वास हासिल कर उनका ध्यान अपने ओर आकर्षित कर उनके विषय में तथा समस्याओं के विषय में सूचनाएँ एकत्रित कर सकता है। एक अच्छे परामर्शदाता को सदैव संवेदनशील होना चाहिए जिससे वह विद्यार्थी के समस्या के प्रति संवेदनशील हो सके। एक अच्छे परामर्शदाता की यह महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है कि वह विद्यार्थियों को इस योग्य बना सके कि वह अपनी समस्याओं के कारणों को ठीक तरह समझ सके तथा उनसे निपटने में अपने आपको समर्थ बनाने के प्रयत्न कर सके। इस तरह से अगर परामर्शदाताओं के कार्यक्षेत्र और उत्तरदायित्वों का विवरण प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाये तो हम यह देख सकते हैं कि परामर्शदाता से ऐसा कोई भी कार्य तथा कार्य क्षेत्र अहुत नहीं है जो किसी न किसी रूप से बालकों की शैक्षिक व्यावसायिक तथा व्यक्तिगत प्रगति तथा कल्याण से जुड़ा हुआ होता है। विद्यार्थियों का कल्याण उनके सर्वांगीण विकास व्यवहार में उचित परिमार्जन तथा उनके व्यक्तिगत, सामाजिक तथा पर्यावरणात्मक समायोजन से जुड़ा होता है। अतः हम कह सकते हैं कि एक बहुपक्षीय परामर्श कार्यक्रम को तभी सफल बनाया जा सकता है जब विद्यालयों में उचित परामर्शदाता और मार्गदर्शन के रूप में प्रशिक्षिता व्यक्ति उपलब्ध हो। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि एक प्रशिक्षित परामर्शदाता अपने अच्छे गुणों, कौशल तथा विद्वता के आधार पर अपने जिम्मेदारियों का वहन करते हुए प्रत्येक विद्यार्थी के जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप एक परामर्शदाता का भूमिका किस प्रकार विद्यार्थी जीवन में आवश्यक है? समझ सकती है एक अच्छे परामर्शदाता के अंदर किन-किन अच्छे गुणों का समावेश होना आवश्यक है ये भी जान सकेंगे तथा एक अच्छे परामर्शदाता की एक विद्यालय तथा विद्यार्थी जीवन की समस्याओं का समाधान हेतु क्या-क्या जिम्मेदारियां होती हैं तथा इसका निर्वहन परामर्शदाता कैसे कर

## 10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

1. एक अच्छे परामर्शदाता के गुणों की व्याख्या कर सकेंगे।
2. बता सकेंगे कि एक अच्छा परामर्शदाता बनने हेतु व्यावसायिक प्रशिक्षण किस प्रकार आवश्यक होता है।
3. किसी भी विद्यालय के अध्यापक को प्रशिक्षण लेकर विद्यालय में परामर्शदाता बनने का सुझाव दे सकेंगे।
4. विद्यालय के अध्यापकों को परामर्शदाता की भूमिका विद्यालय में क्या होती है तथा किस प्रकार यह विद्यार्थी जीवन पर प्रभाव डालते हैं, यह बता सकेंगे।
5. एक अच्छे परामर्शदाता के गुणों का वर्गीकरण कर श्रेणीबद्ध कर सकेंगे।
6. बता सकेंगे कि विद्यार्थी जीवन में परामर्शदाता किन-किन क्षेत्रों की समस्याओं का समाधान कर सकता है।
7. यह देख सकेंगे कि किस प्रकार एक विद्यार्थी के सामाजिक समायोजन व्यावसायिक चयन में परामर्शदाता सहायता करता है।
8. परामर्शदाता के कार्यों का विवरण दे सकेंगे।
9. स्वयं में परामर्शदाता के गुणों को समाहित कर किसी व्यक्ति को परामर्श प्रदान करने में सक्षम हो सकेंगे।

### 10.3 अच्छे परामर्शदाता के गुण

एक अच्छे परामर्शदाता में बहुत से गुण निहित होते हैं तथा इन गुणों को हम तीन समूहों में बाँट कर इसकी व्याख्या कर सकते हैं जो इस प्रकार हैं-

1. अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व की विशेषता
2. अच्छे परामर्शदाता का प्रशिक्षण एवं तैयारी
3. अच्छे परामर्शदाता के अनुभव

#### 10.3.1- अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व की विशेषता

1. प्रत्येक परामर्शदाता की रुचियों में व्यापकता होनी चाहिए जिससे उसको अलग-अलग लोगों की नौकरियों और समस्याओं में रुचि लेने में मदद मिल सके। विभिन्न प्रकार की रुचियों के बारे में व्यापक समझ होना बहुत आवश्यक है।
2. परामर्शदाता में सहयोग की भावना का विकास होना अत्यन्त आवश्यक है। जिससे वह विद्यालयी वातावरण में सहयोग कर तथा विद्यार्थियों का भी सहयोग कर सके तथा अन्य लोगों से सहयोग प्राप्त कर सकें। बिना सहयोग-भावना के वह न तो विद्यार्थियों और न ही शिक्षकों का कल्याण कर सकता है उसका सहयोगपूर्ण व्यवहार ही समस्याग्रस्त विद्यार्थियों को उस तक पहुँचने में मदद करता है।

3. परामर्शदाता के स्वभाव में विनम्रता तथा वातावरण को खुशनुमा बनाने की कला होनी चाहिए। उसकी वाणी मधुर होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों को उससे धुलने-मिलने में मदद मिल सके। खुशनुमा वातावरण में विद्यार्थी अपनी समस्या आसानी से सुलझा लेते हैं।
4. परामर्शदाता को दूरदर्शी होना चाहिए जिससे विद्यालय में अध्यापकों एवं विद्यार्थियों को समस्या को समझने में मदद मिलती है साथ ही साथ वह विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के भविष्य को सँवारने का काम भी करता है उसकी दूरदर्शी सोच ही विद्यालय की प्रगति का आधार भी होती है।
5. परामर्शदाता का व्यक्तित्व आकर्षक होना चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति उसको सुनने एवं समझने के लिए आकर्षित हो सके।
6. परामर्शदाता को विश्वासपात्र बनने की कला का ज्ञान होना आवश्यक है जिसकी सहायता से वह किसी का विश्वास हासिल कर उससे धुल-मिल कर समस्या के तह तक पहुँच सके। अब आप परामर्शदाता के व्यक्तित्व के विशेषता को समझ गए होंगे।

### 10.3.2 अच्छे परामर्शदाता का प्रशिक्षण और तैयारी

आप देखेंगे कि परामर्शदाता के प्रशिक्षण के लिए क्या-क्या तैयारी करनी है वो इस प्रकार है:-

- i. परामर्शदाता को शैक्षिक उद्देश्यों, पाठ्यक्रमों तथा विधियों का ज्ञान होना चाहिए।
- ii. परामर्शदाता को विभिन्न व्यवसायों के विषय में विभिन्न गतिविधियों का ज्ञान होना चाहिए।
- iii. परामर्शदाता को परामर्श एवं निर्देशन के सिद्धान्तों से भली प्रकार अवगत होना चाहिए।
- iv. परामर्शदाता को सभी विषयों का ज्ञान होना आवश्यक है।
- v. परामर्शदाता को विद्यालयों में निर्देशन-सेवाओं के गठन के विषय में पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
- vi. परामर्शदाता को निर्देशन सेवाओं में मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं का ज्ञान आवश्यक है।
- vii. परामर्शदाता को व्यवसाय-संबंधी जानकारी देने की विधियों का भी ज्ञान होना अति आवश्यक है। एक परामर्शदाता के लिए शैक्षिक योग्यताएँ इस प्रकार हैं:-
  - i. एम0 ए0 (मनोविज्ञान या शिक्षा) या बी0 ए0 एम0 एड0 (निर्देशन सहित)।
  - ii. शिक्षा-निर्देशन में डिप्लोमा कोर्स।
  - iii. परामर्शदाता को व्यक्तित्व संबंधी समस्याओं, परीक्षाओं, मानसिक स्वास्थ्य तथा परामर्श देने की तकनीकों का ज्ञान होना चाहिए।

### 10.3.3 अच्छे परामर्शदाता के अनुभव

एक परामर्शदाता को निम्नलिखित अनुभवों का ज्ञान आवश्यक है।

1. परामर्शदाता को निर्देशन कार्यक्रम में दक्षता हासिल होनी चाहिए जिससे उसे विद्यार्थियों की समस्या को समझने, तथा उन समस्याओं के समाधान करने तथा उनके साथ मधुर संबंध स्थापित करने में सहायता मिलती है।
2. परामर्शदाता को व्यवसाय दिलवाने तथा सही कार्यवाही करना आना चाहिए।
3. परामर्शदाता को हर प्रकार की सूचनाओं की व्याख्या करने में निपुणता आनी चाहिए।
4. परामर्शदाता को सामाजिक साधनों के प्रयोग में दक्षता होनी चाहिए।
5. परामर्शदाता में परामर्श सेवा का मूल्यांकन करने की योग्यता होनी चाहिए।

### अभ्यास प्रश्न

1. अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व में क्या विशेषता होनी चाहिए?
2. परामर्शदाता को क्या-क्या प्रशिक्षण देना चाहिए?
3. परामर्शदाता बनने के लिए शैक्षिक योग्यता क्या-क्या होनी चाहिए?
4. अच्छे परामर्शदाता में क्या-क्या अनुभव होने चाहिए?

### 10.4 अच्छे परामर्शदाता की भूमिका एवं जिम्मेदारियाँ

अच्छे परामर्शदाता की भूमिका विद्यार्थी की जीवन में किस-किस प्रकार है तथा विद्यालय, विद्यार्थी व विद्यार्थी के माता-पिता की क्या-क्या अपेक्षाएँ एक कुशल परामर्श दाता से हैं ये इस प्रकार हैं-

- i. परामर्शदाता को विद्यार्थियों को उनकी योग्यताएं तथा क्षमताएं, रुचियां, दृष्टिकोण तथा इच्छाएँ और अभिलाषाओं आदि से परिचित कराना चाहिए। जिससे उनके अंदर आत्मविश्वास पैदा होता है।
- ii. विद्यार्थियों के समस्या को समझ कर उससे मुक्ति दिलाने में परामर्शदाता की मदद करनी चाहिए।
- iii. विद्यार्थियों के व्यवहार में जो कमियाँ हो उसके परिमार्जन में परामर्शदाता को विद्यार्थी की मदद करनी चाहिए।
- iv. परामर्शदाता को विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि करने हेतु विद्यार्थी को सुझाव तथा सहयोग देना चाहिए।
- v. अध्यापकों के व्यवहार में जैसा वे चाहते हैं उसी के अनुरूप परिवर्तन आ जाए, इस कार्य में परामर्शदाता को उनकी सहायता करनी चाहिए।
- vi. विद्यार्थियों को अपने समूह से अच्छे संबंध एवं सम्मान दिलाने में परामर्शदाता को उसकी मदद करनी चाहिए।
- vii. परामर्शदाता को विद्यार्थी के लिए कौन सा रोजगार तथा कैरियर ठीक रहेगा तथा उसके लिए किस प्रकार तैयारी की जाए आदि बताना चाहिए।

viii. माता-पिता तथा अभिभावकों से बालकों की पटरी बैढाने में परामर्शदाता को उनकी सहायता करनी चाहिए।

अब आप समझ गए होंगे कि एक परामर्शदाता की विद्यार्थी जीवन में क्या भूमिका तथा महत्व है।

एक अच्छे परामर्शदाता का विद्यालय में क्या भूमिका है तथा परामर्शदाता विद्यालय के अध्यापक की किस प्रकार सहायता कर सकता है। ये निम्नलिखित है-

- i. परामर्शदाता शिक्षकों को विद्यार्थियों को जानने-पहचानने तथा भलीभाँति समझने में मदद करें। उनके विभिन्न प्रकार के परीक्षण लेकर विद्यार्थियों के स्तर तथा व्यवहार को समझने में भी उनकी मदद करें।
- ii. शिक्षकों को मदद करें ताकि वह विद्यार्थियों के व्यवहार में अपेक्षानुरूप व्यवहार परिवर्तन कर सकें।
- iii. समस्यात्मक एवं अनुशासनहीन विद्यार्थियों से निपटने में शिक्षकों की सहायता करें। क्योंकि ऐसे बालकों से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बढ़ा उत्पन्न होती है।
- iv. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में विद्यार्थियों का सही चुनाव कराने में शिक्षक की सहायता करें।
- v. विद्यार्थियों के माँ बाप तथा अभिभावकों से विद्यार्थियों के विकास हेतु पर्याप्त सहयोग लेने में शिक्षकों की सहायता कर सकता है।
- vi. प्रधानाध्यापक-शिक्षक तथा शिक्षक-शिक्षक के आपसी सम्बन्धों को ठोस बनाने में शिक्षकों को सलाह मशविरा देते रहना चाहिए।

अब आप जान गये होंगे कि परामर्शदाता किस प्रकार अध्यापकों की सहायता कर सकता है। आइए अब आप अवगत हों कि माँ-बाप तथा अभिभावकों की परामर्शदाता से क्या अपेक्षाएँ होती हैं-

- i. बालकों को ठीक तरह समझने में अभिभावकों की मदद करना।
- ii. बालकों की गलत आदतों को हटाने में तथा व्यवहार को सुधारने में वह सभी संभव उपाय करें।
- iii. अगर बालक पढ़ाई में कमजोर है अथवा उनका मन पढ़ाई में नहीं लगता तो वह उचित उपाय बताएँ।
- iv. अभिभावकों वह यह बतायें कि उनके बालकों के लिए कौन से विषयों का पढ़ना ठीक है तथा वे उपयुक्त व्यवसाय का चुनाव कर सकें।
- v. अभिभावकों को फीस माफी, वजीफे तथा अन्य प्रकार की कैसी सहायता किस रूप में उपलब्ध हो सकती है।
- vi. अध्यापकों तथा प्रधानाध्यापकों से अभिभावकों का तालमेल बनाये रखने में सहायता करें।

विद्यार्थी, अध्यापक, माँ-बाप तथा अभिभावक की उपरोक्त अपेक्षाओं के आधार पर परामर्शदाताओं द्वारा निर्भाई जाने वाली भूमिकायें निम्न प्रकार की जा सकती हैं-

#### 10.4.1. विद्यार्थियों को परामर्श देने से सम्बन्धित कार्य

- विद्यार्थियों से आत्मीयता एवं घनिष्ठ सम्बन्ध बनाना। ताकि समस्या ग्रस्त विद्यार्थी अपनी समस्या को बिना हिचकिचाहट के बता सकें व उन्हें यह भी भरोसा हो की परामर्शदाता उनकी सहायता अवश्य करेगा
- विद्यार्थियों को जानने तथा समझने हेतु विभिन्न प्रकार के परीक्षणों जैसे बुद्धि परीक्षण, उपलब्धि परीक्षण, रूचि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, अभिरूचि परीक्षणों तथा अन्य निरीक्षण तथा सूचना श्रोतों का उपयोग करना। विभिन्न परीक्षणों का उपयोग विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को जानने के लिए किया जाता है। इन विशेषताओं की जानकारी से परामर्शदाता को परामर्श देने में बहुत सहायता प्राप्त होती है।
- विद्यार्थियों को इस योग्य बनाना कि वे अपनी समस्याओं के कारणों को ठीक तरह समझ सकें तथा अपने सकारात्मक पक्षों को पहचान कर समस्या का निदान स्वयं करने में सक्षम हो सकें।

#### 10.4.2 विद्यार्थियों के माता-पिता का सहयोग प्राप्त करने सम्बन्धी कार्य

माता-पिता या अभिभावक का सहयोग लिए बिना विद्यार्थियों को अच्छी प्रकार से परामर्श नहीं दिया जा सकता है इस बात से आप भी सहमत होंगे कि अभिभावक विद्यार्थियों के बारे में बहुत महत्वपूर्ण सूचनाएँ परामर्शदाता को दे सकते हैं। परामर्शदाता इस सम्बन्ध में निम्न कार्य करता है

- परामर्शदाता विद्यार्थियों के माता-पिता या अभिभावक को बालक के शैक्षिक विकास एवम् प्रगति के स्तर के बारे में जानकारी देते रहता है।
- माता-पिता तथा अभिभावकों को परामर्श तथा मार्गदर्शन सेवाओं के कार्यक्षेत्र तथा उपयोगिता से परिचित कराना तथा इन सेवाओं के आयोजन हेतु अपेक्षित सहयोग प्राप्त करना।
- विद्यार्थी के व्यवहार, योग्यता तथा क्षमता स्तर, व्यक्तिगत गुणों एवं आदतों के संबंध में माँ-बाप से अपेक्षित सहयोग प्राप्त करना। माता पिता एवं अभिभावकों से प्राप्त व्यवहार सम्बन्धी सूचनाएँ मार्गदर्शन करने में सहायता प्रदान करती है।
- विद्यार्थियों में विशेष प्रकार के व्यवहार, समस्या तथा समायोजन से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी एकत्रित करने में माता-पिता का सहयोग लेना।
- माता-पिता तथा अभिभावक विद्यार्थियों के साथ अच्छा तालमेल रखते हुए उनके विकास में योगदान दें इस हेतु सहायता करना।

अब आप जान गए होंगे कि माता-पिता तथा अभिभावक का सहयोग अत्यधिक आवश्यक है बिना उनके सहयोग के विद्यार्थियों से संबन्धित बहुत सारी महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त होना असंभव है। उचित परामर्श प्रदान करने हेतु विद्यार्थी की प्रष्ट भूमि से संबन्धित अधिक से अधिक सूचनाएँ परामर्शदाता के पास होना अत्यंत जरूरी है।

#### 10.4.3. अध्यापको से सहयोग प्राप्त करने सम्बन्धी कार्य

परामर्शदाता को अध्यापकों का सहयोग लेना भी जरूरी है क्योंकि अध्यापक शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थियों के व्यवहार का निरीक्षण करते हैं तथा वह विद्यार्थियों की विशेषताओं से परिचित होते हैं। अब आप परामर्शदाता के निम्नलिखित कार्यों से समझ पायेंगे कि अध्यापकों का सहयोग वह मार्गदर्शन सेवाओं हेतु किस प्रकार प्राप्त करता है-

1. विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक गुणों को जानने हेतु विभिन्न परीक्षणों एवं उपकरणों को प्रशासित करते समय अध्यापक का सहयोग प्राप्त करना।
2. विद्यार्थियों को परामर्श एवं निर्देशन/मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु जो विभिन्न प्रकार के अभिलेख तैयार किये जाते हैं उनको तैयार करने तथा रखरखाव में अध्यापकों का सहयोग प्राप्त करना। संचित अभिलेख तैयार करने हेतु तथा उसके रखरखाव हेतु शिक्षक की मदद लेने आवश्यक होता है क्योंकि शिक्षक विद्यार्थियों की अधिकांश विशेषताओं से परिचित होते हैं।
3. विद्यार्थियों से अध्यापक को किस प्रकार का व्यवहार करना अपेक्षित है इस बात का आभास अध्यापकों का कराया जाना आवश्यक है। परामर्शदाता इस प्रकार का परामर्श अध्यापकों को समय-समय पर दिया जाता है। ताकि उनका विद्यार्थियों के साथ उचित तालमेल बना रहे। हमेशा विद्यार्थियों को डांटना फटकारना तथा गुस्से में बात करना अच्छे शिक्षण में बढ़ा उत्पन्न करता है इस हेतु परामर्शदाता आवश्यक परामर्श प्रदान करता है।
4. अध्यापकों को कुसमायोजित, विशेष बालकों को पढ़ाने में विशेष कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। इस सम्बन्ध में परामर्शदाता उन्हें उचित मार्गदर्शन द्वारा समायोजनात्मक तथा उपचारात्मक तरीकों से परिचित कराता है।
5. विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विशेषताओं से अध्यापक को परिचित कराना तथा वैयक्तिक विशेषताओं के अनुरूप शिक्षण प्रक्रिया के आयोजन में अध्यापक की सहायता प्रदान करना।
6. विद्यार्थियों को मार्गदर्शन व परामर्श देने से पूर्व उन्हें अच्छी तरह जानने व समझने हेतु विद्यार्थियों के प्रति अध्यापकों की राय या प्रतिक्रिया जानना।

अब आप जान गए होंगे कि विद्यार्थियों को परामर्श प्रदान करने हेतु अध्यापक से आवश्यक सहयोग कैसे प्राप्त किया जाता है, शिक्षण अधिगम को प्रभावी कैसे बनाया जाता है एवं कक्षा में समस्यात्मक बालकों से कैसे निपटा जाता है।

**10.4.4. सूचनाएँ प्रदान करने सम्बन्धी कार्य**

पिछली इकाई के अध्ययन के बाद आप जान गए होंगे कि मार्गदर्शन सेवाओं के अन्तर्गत सूचना सेवाओं को संगठन किया जाता है। इन सूचना सेवाओं के संगठन का उत्तरदायित्व परामर्शदाता के ऊपर होता है। इस हेतु वह निम्न कार्य कर सकता है-

1. विद्यार्थियों के व्यवहार, योग्यता, क्षमता, व्यक्तित्व गुणों आदि से सम्बन्धित सूचाएँ आवश्यकतानुसार प्रदान करना।
2. विभिन्न शैक्षिक अवसरों (पाठ्यक्रमों), विषयों तथा क्रियाओं के बारे में आवश्यक जानकारी एवं सूचनाएँ प्रदान करना।
3. व्यावसायिक कोर्सों, नौकरी के अवसरों, विभिन्न रोजगारों आदि के बारे में सभी आवश्यक जानकारी प्रदान करना।
4. विद्यालय के इतिहास, उद्देश्य, नियम तथा सुविधाओं के बारे में आवश्यक जानकारी प्रदान करना।
5. फीस माफी, वजीफे तथा अन्य शैक्षिक या व्यावसायिक सुविधाओं के नियम, अवसरों आदि को उचित जानकारी प्रदान करना।
6. विद्यालय के भौतिक संसाधनों (पुस्तकालय, प्रयोगशाला, खेल मैदान, कम्प्यूटर लैब, हॉस्टल, डे सेन्टर, कॉमन रूम, कैन्टीन) की उचित जानकारी प्रदान करना।
7. सूचना पुस्तिका या विवरणिका का तैयार करने की जिम्मेदारी भी परामर्शदाता की होती है।

इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि परामर्शदाता के पास अनेकों महत्वपूर्ण सूचनाओं का संग्रह होता है जिन्हें वह आवश्यकतानुसार प्रदान करता है। परामर्श की प्रक्रिया में सूचनाओं को एकत्रित करना तथा उनका उचित प्रयोग करना बहुत महत्वपूर्ण चरण है।

**10.4.5. समुदाय के साथ सहयोग सम्बन्धी कार्य**

परामर्श एवम् मार्गदर्शन कार्यक्रम तभी सफल हो सकते हैं जबकि इनमें समुदाय एवं समाज के सदस्यों का सहयोग ठीक रूप में प्राप्त किया जा सके। इस बात से आप भी सहमत होंगे। इस हेतु परामर्शदाता के निम्न उत्तरदायित्व हैं

1. परामर्शदाता को समुदाय या समाज विशेष की आवश्यकताओं तथा प्रकृति से पूरी तरह परिचित रहना चाहिए। विद्यार्थियों के व्यवहारों के बारे में सही निष्कर्ष तक पहुंचाने में उसके समुदाय की प्रकृति व संस्कृति जानना बहुत जरूरी है।
2. विद्यार्थियों को नौकरी के अवसरों, विभिन्न रोजगारों आदि के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने हेतु, विभिन्न नियोक्ताओं से व्यक्तिगत संपर्क रखना।
3. विद्यार्थियों के परिवेश से संबंधित समायोजन संबंधी समस्याओं के हल हेतु समुदाय एवं समाज का सहयोग प्राप्त करना।

4. विद्यार्थियों की शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रगति हेतु उन्हें समुदाय एवं समाज के सदस्यों के पास संस्थाओं, व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में ले जाकर वास्तविक अनुभव प्रदान करना।

आप जान गए होंगे कि एक विद्यार्थी शिक्षा पूरी करने के बाद समुदाय एवं समाज में ही सेवा हेतु जाता है इसलिए परामर्शदाता द्वारा समाज एवं समुदाय की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं एवं प्रकृति को जानना बहुत जरूरी होता है। साथ ही साथ समुदाय व समाज से बेहतर तालमेल भी बनाए रखना जरूरी होता है।

#### 10.4.6. मार्गदर्शन एवं परामर्श सेवाओं से सम्बन्धित अन्य विविध कार्य

मार्गदर्शन कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न सेवाओं का संगठन किया जाता है ताकि मार्गदर्शन कार्यक्रम सफल हो सके। इस सभी मार्गदर्शन सेवाओं के संगठन और आयोजन का कार्य परामर्शदाता ही करता है। इस प्रकार समन्वित क्रियाओं का कुछ रूप निम्न प्रकार है-

1. समय-समय पर मार्गदर्शन एवं परामर्श सम्बन्धी भाषण, सेमिनार, विचार गोष्ठी, बाद-विवाद प्रतियोगिताओं, कविगोष्ठियों, रंगमंच अभिनयों, फिल्म, वीडियो स्लाइड आदि को दिखाने से सम्बन्धित कार्यक्रमों तथा प्रदर्शनी की आयोजना।
2. ओरियन्टेशन सेवाओं के आयोजन सम्बन्धी विभिन्न प्रकार की क्रियायें जैसे-ओरियन्टेशन डे या सप्ताह का आयोजन, प्रचार एवं प्रसार सामग्री का प्रकाशन, सूचना केन्द्र की स्थापना, कैरियर कान्फ्रेंस का आयोजन, कैरियर एण्ड गाइडेंस क्लब की स्थापना परामर्शदाता के नेतृत्व में ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है।
3. विद्यार्थियों को विभिन्न महत्वपूर्ण स्थानों, संस्थाओं कंपनियों का भ्रमण कराना।
4. विद्यार्थियों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के अभिलेख जैसे-संचित अभिलेख पत्र आदि तैयार करना।
5. उपयुक्त मार्गदर्शन एवं परामर्श प्रदान करने हेतु उपयुक्त अनुसंधान कार्य भी परामर्शदाता कर सकता है तथा इन विषय क्षेत्रों पर अनुसंधान करने वालों की सहायता भी कर सकता है।
6. अनुवर्ती सेवाओं के माध्यम से वह किसी व्यवसाय में समायोजन संबंधी विद्यार्थियों की समस्याओं को हल करने हेतु विविध उपाय करना।

इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि परामर्शदाता का कार्यक्षेत्र तथा उत्तरदायित्व का दायरा बहुत व्यापक है। यह विद्यार्थियों के शैक्षिक, व्यवसायिक तथा व्यक्तिगत प्रगति से जुड़ा है। विद्यालय के समस्त विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब विद्यालय में परामर्शदाता और मार्गदर्शक के रूप में योग्य, कुशल व प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हो अथवा अध्यापकों को ही कुछ विशेष प्रशिक्षण देकर इन उत्तरदायित्वों के वहन के लिए तैयार किया जाए।

**अभ्यास प्रश्न**

5. परामर्शदाता की विद्यार्थियों को परामर्श देने से सम्बन्धित क्या मुख्य जिम्मेदारियाँ हैं?
6. परामर्शदाता द्वारा माता-पिता तथा अभिभावक का सहयोग परामर्श एवं मार्गदर्शन हेतु क्यों आवश्यक है?
7. परामर्शदाता अध्यापको को किस सम्बन्ध में परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है?
8. परामर्शदाता का समुदाय व समाज के साथ बेहतर तालमेल क्यों आवश्यक है ?

**10.5 सारांश**

इस इकाई के प्रथम भाग को पढ़ने के बाद आप अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व प्रशिक्षण एवं तैयारी तथा अनुभव से संबंधित गुणों जैसे- रुचियों में व्यापकता, सहयोग की भावना, विनम्र स्वभाव, दूरदर्शी, आकर्षक व्यक्तित्व, विश्वासपात्र, शैक्षिक उद्देश्यों, पाठ्यक्रमों व विधियों का ज्ञान, परामर्श एवं निर्देशन के सिद्धान्तों की समझ, परामर्श एवं निर्देशन सेवाओं के संगठन के विषय में पूर्ण जानकारी, विभिन्न व्यवसायों की जानकारी, परामर्शदाता के लिए निर्धारित शैक्षिक योग्यताओं को जान चुके हैं। उसमें परामर्श एवम् निर्देशन सेवा का मूल्यांकन करने की योग्यता भी होनी चाहिए। इकाई के द्वितीय भाग को पढ़ने के बाद आप विद्यार्थियों, अध्यापकों, माता-पिता तथा अभिभावकों तथा समाज की परामर्शदाता से क्या अपेक्षाये है।

आप जान गये है तथा परामर्शदाता की मुख्य जिम्में दारियों-विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को जनना, उन्हें स्वयं निर्णय लेने में सक्षम बनाना, परामर्श के सफल आयोजन हेतु माता-पिता से अपेक्षित सहयोग प्राप्त करना, उन्हें बालकों की प्रगति से अवगत कराना, अध्यापक की शिक्षण कला में दक्ष हो इस हेतु परामर्श देना, विशेष बालकों, कुसमायोजित बालको के शिक्षण में शिक्षक की मदद करना, विभिन्न सूचनाओं को आवश्यकता पड़ने पर उपलब्ध कराना, सूचना सेवाओं का संगठन एवं आयोजन करना, विद्यार्थियों की शैक्षिक एवं व्यवसायिक प्रगति एवं विकास हेतु हर संभव प्रयास करना, से भी परिचित हो गये है।

**10.6 शब्दावली**

1. **परामर्शदाता-** ऐसा व्यक्ति जो विद्यार्थियों को स्वयं के बारे में निर्णय लेने में सहायाता प्रदान करता है तथा मार्गदर्शन प्रक्रिया का संचालक होता है।
2. **परामर्शदाता के गुण-** परामर्शदाता की ऐसी अच्छी विशेषताएं है जो उसे मार्गदर्शन एवं परामर्श प्रक्रिया में सफलता प्रदान कर सके।
3. **परामर्शदाता की भूमिका-** परामर्शदाता द्वारा किये गये ऐसे समस्त कार्य जो मार्गदर्शन एवं परामर्श प्रक्रिया की सफलता हेतु अपेक्षित है।

**10.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

1. अच्छे परामर्शदाता के व्यक्तित्व में निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिए-
  - i. रुचियों में व्यापकता होजिससे वह बालकों को उनकी रुचि को पहचानने में सहायता कर सके।
  - ii. उसमें सहयोग की भावना हो ताकि वह विद्यालय के अन्य सभी सदस्यों की समस्याओं को समझकर उन्हें समस्या हल करने में मदद कर सके
  - iii. विनम्रता तथा वातावरण को खुशनुमा बनाने की कला हो। उसको मधुर वाणी में ही सबसे वार्तालाप करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को उससे घुलने मिलने में मदद मिल सके
  - iv. उसकी सोच दूरदर्शी हो जिससे वह विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के भविष्य को सँवारने का काम कर सके जिससे विद्यालय के लक्ष्य प्राप्त हो सकें।
  - v. आकर्षक व्यक्तित्व हो जिससे हर विद्यालय का व्यक्ति अपनी समस्या के समाधान हेतु बिना हिचकिचाहट के उसकी तरफ आकर्षित हो सके।
  - vi. विश्वासपात्र बनने की कला हो। जिसकी सहायता से वह किसी का विश्वास हासिल कर उससे घुल मिल कर समस्या की तह तक पहुँच सके
  - vii. निरीक्षण योग्यता हो। जिससे वह विद्यार्थियों के बारे में बहुत सी जानकारी केवल निरीक्षण से ही कर सके
2. परामर्शदाता को निम्नलिखित विषयों में प्रशिक्षण देना जरूरी है-
  - i. शैक्षिक उद्देश्यों, पाठ्यक्रमों तथा विधियों का ज्ञान।
  - ii. विभिन्न व्यवसायों के विषय में विभिन्न गतिविधियों का ज्ञान।
  - iii. परामर्श एवं मार्गदर्शन के सिद्धान्तों का ज्ञान।
  - iv. विद्यालयों में निर्देशन सेवाओं के गठन के विषय में ज्ञान।
3. परामर्शदाता के लिए निम्नलिखित योग्यतायें होना चाहिए:-
  - (1) एम0ए0 (मनोविज्ञान या शिक्षा) या बी0 ए0 एम0एड0 (निर्देशन एवं परामर्श सहित)
  - (2) शिक्षा निर्देशन में डिप्लोमा कोर्स
4. परामर्शदाता को निर्देशन कार्यक्रम में दक्षता हासिल होनी चाहिए जिससे उसे विद्यार्थियों की समस्या को समझने, उन समस्याओं का समाधान करने तथा उनके साथ मधुर संबंध स्थापित करने में सहायता मिलती है। परामर्शदाता को हर प्रकार की सूचनाओं की व्याख्या करने में निपुणता होनी चाहिए। मूल्यांकन करने की योग्यता भी होना चाहिए।
5. विद्यार्थियों के लिए परामर्शदाता की मुख्य जिम्मेदारियाँ:-

- i. विद्यार्थियों से आत्मीय एवं घनिष्ठ सम्बन्ध बनाकर विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक गुणों तथा विशेषताओं को जानने हेतु विभिन्न प्रकार के परीक्षणों जैसे-बुद्धि परीक्षणों, उपलब्धि परीक्षण, रूचिपरीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, अभिरूचि परीक्षण का उपयोग करना।
  - ii. विद्यार्थियों को इस योग्य बनाना कि वे अपनी समस्याओं के कारणों को ठीक प्रकार से समझकर अपने सकारात्मक पक्षों को पहचानकर समस्या का निदान स्वयं करने में सक्षम हो सकें।
6. परामर्श एवं मार्गदर्शन की सफलता के लिए बालक के बारे में विभिन्न प्रकार की सूचनायें होना बहुत आवश्यक है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का स्वयं आयोजन करने के अलावा भी बालक के व्यवहार, योग्यता, क्षमता, रूचियों, व्यक्तिगत गुणों एवं आदतों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचनायें माता-पिता तथा अभिभावक ही प्रदान कर सकते हैं। इसलिए उनका सहयोग परामर्श एवम् मार्गदर्शन प्रक्रिया में अत्यन्त जरूरी है।
  7. कक्षा के कुसमायोजित, विशेष बालकों एवं पिछड़े बालकों को पढ़ाने में शिक्षक को अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है इस सम्बन्ध में परामर्शदाता उन्हें उचित परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान कर समायोजनात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण के तरीकों से परिचित कराता है। परामर्शदाता विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को प्रशासित कर विद्यार्थियों की व्यक्तित्व विशेषताओं से शिक्षक को परिचित कराता है जिससे वह शिक्षण प्रक्रिया को और प्रभावी बनाने में सफल होता है।
  8. परामर्श एवं मार्गदर्शन तभी सफल हो सकता है जब इसमें समुदाय एवं समाज का सहयोग भी आवश्यकतानुसार हो। विद्यार्थियों की शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रगति हेतु विभिन्न शिक्षण संस्थानों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों, सरकारी उपक्रमों के साथ परामर्शदाता को संपर्क रखना जरूरी होता है। विद्यार्थियों को वास्तविक औद्योगिक अनुभव प्रदान करने हेतु, किसी अच्छे शिक्षण संस्थान की कार्य संस्कृति से परिचित कराने हेतु उन्हें क्षेत्र में ले जाना पड़ता है। या अनुभवी विशेषज्ञ व्यक्तियों को विद्यालय में बुलाकर उनका व्याख्यान तथा वार्तालाप-सत्र आयोजित किया जाता है। विद्यार्थी शिक्षा के उपरान्त समुदाय या समाज में जीविकोपार्जन हेतु जाता है। इसलिए समुदाय व समाज की प्रकृति व अपेक्षाओं के अनुरूप ही बालको को तैयार करना ही विद्यालय का लक्ष्य है इसे पूरा करने में परामर्शदाता महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

### 10.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. ओबेराय, डॉ० सुरेश चन्द्र (2006), शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ,

2. मंगल, डॉ० एस० के० एवं श्रीमती श्रुभा (2003), मार्गदर्शन एवं परामर्श, आर्य बुक डिपो, मेरठ
3. गुप्ता, एस.पी. (2008), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
4. सिंह, ए. के. (2010), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन पब्लिशर्स, पटना
5. जायसवाल, एस.(2008), शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
6. Bhatnagar, A & Gupta, N (1999).Guidance and Counselling: A theoretical Approach(Ed), New Delhi: Vikash Publishing House.
7. Das, B.N. (2010). Career Guidance and Counselling. Agra: Vinod Pustak Mandir
8. Kochhar, S.K, (1980) Guidance and Councelling, New Delhi: Sterling Publishers.
9. Mathur, S.S.(2012).Fundamentals of Guidance and Counselling.Agra: Vinod Pustak Mandir
10. NCERT(2008).Introduction to Guidance,Module-1, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
11. NCERT(2008).Career Information in Guidance,Module-5 and 12, New Delhi: National Council Of Educational Research and Training,
12. Pandey, K.P.(2009).Educationaland Vocational Guidance in India. Varanasi: Vishvidyalaya Prakashan.
13. Sharma, N.R. (2012). Educationaland Vocational Guidance. Agra: Vinod Pustak Mandir

### 10.9 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Agarwal, J.C, (1985), Educational Vocational Guidance and Counseling, Doaba House, New Delhi.
- Agrawal, R (2006). Educational, Vocational Guidance and Counselling, New Delhi, Sipra Publication.
- Bhatnagar, A & Gupta, N (1999).Guidance and Counselling: A theoretical Approach(Ed), New Delhi, Vikash Publishing House.
- Kapunan, R.R. (2004). Fundamentals of Guidance and Counselling, Rex Printing Company, Inc., Quezon City.

- Kinra, A.K. (2008). Guidance and Counselling, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd. New Delhi.
  - Jones, A.J.(19510.Principles of Guidance and Pupil Personnel work,New York,MiGraw Hill.
  - Mendoza, E. (2003), Guidance and Counselling Today. Rex Book Store (RBSI), Manila.
8. Nanda, S.K and Sharma S, (1992) Fundamentals of Guidance, Chandigarh.

**Websites & E-links:-**

- [www.books.google.co.in](http://www.books.google.co.in)
- [www.education.go.ug/guidance](http://www.education.go.ug/guidance)
- <http://encyclopedia2.thefreedictionary.com>
- [www.careersteer.com](http://www.careersteer.com)
- [www.lotsofessays.com](http://www.lotsofessays.com)
- [www.careerstrides.com](http://www.careerstrides.com)
- [www.wikipedia.org/wiki](http://www.wikipedia.org/wiki)

---

**10.10 निबन्धात्मक प्रश्न**

---

1. परामर्शदाता कौन होते हैं? स्कूल में उनकी भूमिका के ऊपर प्रकाश डालिए?
2. स्कूल में परामर्शदाता से सभी की क्या-क्या अपेक्षाएँ होती हैं? इन्हें पूरा करने हेतु परामर्शदाता को क्या उत्तरदायित्व निभाने होते हैं ? स्पष्ट कीजिए?
3. परामर्शदाता में क्या गुण होने चाहिए? विस्तार से वर्णन कीजिए?